प्रस्तावना.



वडोदरा राज्य तरफथी श्रीमंत सरकार महाराजा गायकवाड एमना उदार आश्रयथी सने १८९४–९५ मां प्रसिद्ध थयली प्राचीन काव्यमाळा मेगुं नरहरिदासनुं श्रीमद्‌भगवद्‌गीता नामनुं एक आख्यान बहार पडेलुं छे; ने ते घणाखरा वाचको ने विशेषे प्राचीन ग्रंथोना शोधकोए वाच्युं हशे. ए ग्रंथनी उपयोगिता विषे म्हेनुं विवेचन लखनारे कहेलुंछे एटले म्हारे ते विषे अहीं वधारे लखवा जेवु नथी. नित्यपाठ करवाना अने मुमुक्षु जनोने हमेशा वाचवा विचारवा जेवा संस्कृत ग्रथोनुं स्थान ले एवा जे गुजराती ग्रंथोनी आपणामां खोट छे त्हेमांनो ए एक ने प्रथम ग्रंथ छे एम कहीए तो चाले. एज ग्रंथनी पद्धतिए लखायलुं एज लेखकनुं आ बीजुं आख्यान आज प्रसिद्ध थायछे; पण ए प्रसिद्धिना यशनुं पात्र कोइ रीते हुं नथी. म्हारी " संसारयात्रा " नो प्रथम भाग थोडाक मास उपर लखाइ रह्यो त्यार पछी म्हारा एकान्तना दिवसो म्हने दु सह लागे नहि, ससारनी अनेक विटंबणाओमांथी म्हने क्षणवार निवृत्ति मळे अने म्हारा पूर्व संसारनां आज भुसाई गयलां चित्रो फरी फरीने दृष्टिए च्हडी आवी म्हने क्लेश न आपे ते अर्थे म्हने आ ग्रंथनुं वाचन अति उपकारक थयुं छे. ए अभ्यासना परिणामेज आज आ प्रसिद्धिगा मूकवा जेवुं स्वरूप उपजी शक्युछे ए वात खरी छे, तोपण म्हारा मित्रना एक स्वर्गवासी बंधुए अने कबीर पंथना साधुश्री मुक्तानंद महाराजे आ ग्रंथना हस्तलेख संवरी राख्या माटे प्रसिद्धि ना यशना पात्र ते छे. साधु जनोने यशनी अपेक्षा कदापि होती नथी तेम छतां विवेकनी खातर म्हारे एम कहेवुं एज उचित छे.

आ आख्यानने प्रसिद्ध थयलुं जोई गुजराती साहित्यनी अभिवृद्धि इच्छनार सौ कोईने आनंद थया विना नहि रहे. श्रीमद्भगवद्गीता ए आख्याननी आनी साथे तुलना करवानुं प्रयोजन नथी; कारण के एवा ग्रंथोनी अगत्य बीजाने म्होडे सांभळवा करतां त्हेमने वांचीनेज व्हेली ने बराबर समजायछे. अनुबंधचतुष्टय नरहरिए पोतेज ग्रंथना प्रारंभमां कही बताव्यां छे एटले हुं कंई कहुं ते पुनरुक्तित कर्या जेवुं थाय. योगवसिष्ट अने हमणांज मद्रासमा प्रसिद्ध थयली रामगीता जेवा परम रहस्यना ग्रंथोनुं तत्त्व बरोबर संघरायलुं होय एवुं एक पण पुस्तक गुजरातीमां नथी. एवी स्थितिमां आ आख्यान मुमुक्षुओने केटलुं उपकारक थशे ते वाचकोएज जोई लेवुं.

नरहरिने कवि नहि पण हुं ज्ञानी कहुंछुं; ने त्हेनी भाषा ते काव्यभाषा नहि पण सूत्रभाषा छे. प्राचीन काव्यना संशोधकोने त्हेनी भाषामां जे विलक्षणता जणाइ छे तेवी म्हने कंइ जणाती नथी; कारणके आपणी आजनी भाषा पण त्रणसो वर्ष जेटला लांबा वखत पछी ते वखतना वाचकोने ए रीते विलक्षण लागवी जोइए. म्हने तो आपणे आज जे शब्दरूप वापरीएछीए त्हेमनो शी रीते विकास थतो आव्यो छे ते जोइने आनंद थायछे. वळी साहित्यना इतिहासनी दृष्टिए जे ते काळनी भाषानुं स्वरूप जेवुं ने तेवुं साचवी राखवुं अति अगत्यनुं छे एम जाणी आ प्राचीन ग्रंथनी भाषा म्हने हस्तलेखमां मळी आवी तेवे ने तेवे स्वरूपे साचवी राखवा म्हें यत्न कर्यो छे. नरहरिनी असल भाषाज ए छे एम हुं कही शकतो नथी. काळक्रमे एमां जुदा जुदा लहियाओने हाथे केटलोक फेरफार थयो हशे तोपण सूक्ष्म दृष्टि वाळाने आ ग्रंथमांथी गुजराती भाषाना इतिहासनां केटलांक तत्त्व मळी आवशे.

आ आख्याननी हस्तलिखित बे प्रतो म्हने मळेली; त्हेमां एक मात्र संक्षिप्त होइ त्हेमां चारसो श्लोकोनो संग्रह हतो. बीजी प्रत संपूर्ण हती. संक्षिप्त प्रत अमदावादना एक जैन साधुए संवत १८९८ मां लखावेली हती, ने बीजी संपूर्ण प्रत उनेलना एक साधुए ते प्हेला एटले संवत १८७३ मा जाते लखी हती. एम संक्षिप्त प्रत पाछळथी लखायली छता एमांनी भाषा ने शद्वरूप वधारे प्राचीन हता; एमा ज्या जिम, तिम, छि, अनि, येह अने भणिजे एवा रूप हता त्यां म्होटी प्रतमा ज्यंम, त्यंम, अनें, जेह, अने भणिये एवा शद्वरूप हता. खरुं जोता संपूर्ण प्रतना शद्वरूप आपणां आजनां शद्वरूपने वधारे मळता छे त्हेनुं कारण ए छे के जैन साधुने माटे अने जैन साहित्यना परिचयवाळा लहियाने हाथे लखायली संक्षिप्त प्रतनी भाषा जैननी गाथाओनी भाषा जेवी बनी रहे ए स्वाभाविक हतुं. आज पण गाथाओ तो एनी एज भाषामा लखायछे ने वंचायछे. उपरना कारणथी हुं संपूर्ण प्रतनेज अनुसर्योछुं.

संक्षिप्त प्रतमां उतारेला बधाए श्लोको संपूर्ण प्रतमां आवी गया हता. म्हने बंने प्रतो संपूर्ण मळी होत तो त्हेमनी तुलना करी जोतां वधारे पाठान्तर होत तो ते निकळी आवत. संक्षिप्त प्रतना चारसो श्लोकने सरखावी जोता; कहीं कहीं पाठान्तर निकळेलो ते ते टीपमां बताववामां आव्योछे.

श्लोकना पदने लेहकावीने गावानी जूनी ढबथी केटलाक निरुपयोगी शद्वो घणाक पदोमा घुसी गयला ते म्हें पद शोधतां छोडी दीधाछे के त्हेमनी जरूर लागी त्या कौंसमां मूक्याछे. बाकी पाठ गोठवतां बीजो कंइ फेरफार म्हें कर्यो नथी. संक्षेपमा श्लोकार्थ लख्यो छे ते जे वाचकोने उद्देशी ते लखायोछे त्हेमने जो उपयोगी थइ पडशे

तो हुं म्हारो श्रम सफळ थयो समजीश. अद्वैत ज्ञान जेवा गहन-विषयनी स्पष्टता करवा जतां कंइ दोष नजरे पडे तो वाचको ने अवलोकनकार म्हने ते विषे सूचना आपशे तो हुं त्हेमनो आभारी थइश. टीका वधारे विस्तारथी लखवानुं म्हने प्रयोजन लाग्युं नथी; कारण के सामान्य वाचकोने ग्रंथ विषय सरल लागवाने बदले एथी कठिण थइ पडेछे, ने मुद्दानी वात त्हेमना लक्षमांथी खसी जायछे.

प्राचीन ग्रंथोना शोधकोने नरहरि विषे जे हकीकत मळी आवी नथी ते म्हने पण मळी शकी नथी. तेओ एने पाटण तरफनो रहीश कहेछे त्यारे हुं पण एने दहेगाम ने अमदावादनी वच्चेना प्रदेशमां रहेतो कल्पुंछुं. श्रीमद्भगवद्गीताना विवेचनमां नरहरिना बीजा ग्रंथो प्रकट करवानुं तेओए जणावेलुंछे; पण तेवो एकपण ग्रंथ आजसुधीमां प्रसिद्ध थवा पाम्यो नथी. म्हारुं एवुं अनुमान छे के नरहरिए बीजा कोइ ग्रंथो ने उत्तम ज्ञानवैराग्यनां पद लख्यां हशे. त्रण वर्षमां जेणे वधारे नहि तो आ बे आख्यान लख्यां त्हेणे पोताना मुमुक्षुजीवनमां लोको उपर बीजो उपकार नहि कर्यो होय एम संभवे नहि. पण तेवा ग्रंथो अने पदनो शोध करवो ने तेमने प्रसिद्ध करवा ए एक जणनुं नहि पण प्राचीन साहित्यना बधाए शोधकोनुं सहियारुं काम छे.

वळी म्हने मळेली बंने प्रतो देवनागरी लिपिमां लखायली हती. आपणुं अर्वाचिन साहित्य छपावा माड्युं ते पहेलां गुजराती ग्रंथोनी लीपि देवनागरी हती एम जूना लेखो उपरथी मालम पडेछे. म्हें पण देवनागरी लीपिमांज आ आख्यान छपाव्युंछे; विषयने अनुरूप लीपि म्हने तेज लागी. वळी मराठी पुस्तको देवनागरी लीपिमां छपायछे ने पत्रो वगेरे मोडीमां लखाय छे तेम आपणे पण जुदी जुदी बे लीपिओनो उपयोग करीशुं तो,

ठीक थशे; आपणा परिचयमां आवता दक्षिणी, हिंदुस्थानी वगेरे, गृहस्थो पण आपणा गुजराती ग्रंथो वांची शकशे, ने व्यवहारमां गुजराती लीपिनी जे सरलता छे तेनी ते सचवाइ रहेशे.

आ आख्यानने छापखानामां मोकलता प्हेलां म्हें रा. बा. हरगोविंददास द्वारकादास काटावाळा एमने अभिप्राय माटे बताव्युं. ते जोइ एमणे श्लोकपाठ अने अर्थनी कहीं कहीं वधारे स्पष्टता करवा म्हने अमूल्य सूचना करेली ते माटे हुं तेओनो अहीं आभार मानुंछुं.

वळी आ ग्रंथ नरहरिए योगवासिष्ट उपरथीज उपजावेलो के केम रहेनो उपरनी प्रस्तावना पूरी करी त्या सुधी म्हने कंइ निश्चय थइ शकतो नहतो. पण वसिष्टसार नामना एक स्वतंत्र ग्रंथ उपरथी ते उपजावेलोछे एवी म्हने हमणाज माहिती मळेछे. वसिष्टसार हजु सुधी प्रसिद्धिमां नथी. इश्वरेच्छा हशे तो थोडा वखतमां हुज ते बहार पाडी शकीश.

ता. २६ मे १९०६
मु. वडोदरा.

छ. के. मेहता.

विषयानुक्रम.

अथ श्रीवसिष्ठसारगीता ॥

प्रकरण १.

तीव्र वैराग्य.

मंगलाचरण.

पुरुषोतमनें परणमूं (जे) आदि निरंजन देव ।
परम पुरुष परमातमा (भाइ) कीजे तेहनि सेव ॥१॥

पुरुषोत्तम भगवान ए आदि देव छे; कारण के अनेक देव देवीओनी कल्पना एमांथी स्फूरेली छे; वळी ते निरंजन कहेतां निष्कलंक, अति विशुद्ध छे; माटे आ ग्रंथारंभ करतां हुं रहेने प्रणाम करूं छुं. पुरुषोत्तम एज श्रेष्ठ पुरुष ने परमात्मा पण छे; तेथी हे श्रोताओ ! एनीज सेवना करवी. सेवना करवी एटले एनुं ध्यान चिंतवन करी तद्रूप बनवुं.

सचराचर व्यापी रह्यो हरि अंतरजामी राम ।
बाह्याभ्यंतर पूर्ण निंत* प्रणमुं परम ते धाम ॥ २ ॥

प्रभु अंतर्यामी छे, घटघटमां रमी रहेलो छे. ए चर अने अचर, स्थावर जंगम वस्तु मात्रमां व्यापीने रहेलो छे. वस्तुमात्रमां

* मूळमां-प्रथा छे.

व्यापीने रहेलो छे ऐटले त्हेनी बहार अने अंदर ए संपूर्ण भरेलो छे. अमुक काले भरेलो छे ने अमुक काले नहि एम नहि, पण नित्ये भरेलो छे. प्राणीमात्रनुं परम धाम एटले तेनी छेवटनी गति, एनुं लयस्थान ए प्रभुज छे, कारणके एनामांज सर्वेनो समास छे; परम गति एज छे. एवा प्रभूने म्हारा प्रणाम छे.

ये देशकाल विछिन्न नहि अवि-छिन्न अकल अनंत।
ज्ञानस्वरुप आनंदघन ते पद सेवे संत ॥ ३ ॥

परमात्मा अमुक देशकालमां होय ने अमुकमां न होय एम नथी: ए सर्वत्र ने सर्व काले छेज, माटे ए अविछिन्न एटले देशकालथी निर्बाध छे, अकल छे: एनुं स्वरूप महा मुनिओ, योगीन्द्रो पण कळी शकता नथी. अनंत छे, एना महिमानो पार नथी, कारणके ए ज्ञान स्वरूप छे अने परम आनंदनी मूर्त्ति छे. एनुं पद संत पुरुषो अहोनिश सेव्या करेछे, एनुंज निरंतर ध्यान कर्या करेछे.

आत्मा अनुभवि जाणिये वचने कह्यो न जाय।
नमूं शांत नित तेजने (जेह्ने) नेति नेति श्रुति गाय ॥४॥

आवुं परमात्मानुं अकल स्वरूप छे त्यारे मनुष्य बुद्धिना कल्पा-मां ते क्यांथी आवे? त्यारे एने ओळखवानुं साधन शुं? तो कहे छे के आत्मानुभवथीज एने ओळखी शकायछे. वाचाथी परमा-त्मानुं वर्णन थइ शकतुं नथी, एटले जेटलां विशेपण त्हेने ओळखाववा आपीए ते बधां अपूर्ण छे. निर्गुण ब्रह्मनुं विशेपण आपी ओळखाण

करावी शकातुं नथी; माटे प्रथम आत्मानेज ओळखो. हुं कोण छुं ते प्रथम जाणो ने पछी अभ्यासथी ए ज्ञाननो अनुभव करो, एटले परमात्मा तरतज ओळखाशे. वेद पण नेति नेति करीने परमात्मानो निश्चय करावचा जाय छे पण एनो पार पमातो नथी. आवा नित्य ज्योतिः स्वरूप ने परम शान्त प्रभुने म्हारा प्रणाम हो.

ब्रह्म सनातन धाइये (ए) अध्यातम उपदेश ।
हरि गुरु संत प्रसादथी टळि ते कर्मकलेश ॥ ५ ॥

सनातन एटले शाश्वत, नित्य, एवा ब्रह्मनु ध्यान करवुं, एनीज उपासना करवी, एवो आ ग्रंथमां अध्यात्म बोध करेलो छे, एम कही ग्रंथवस्तुनो निर्देश कर्यो. हवे फलापत्ति बतावेछे के परमात्मा, सद्गुरू अने साधु पुरुषोनो प्रसाद मळवाथी, त्हेमनी कृपा पाम्याथी कर्मथी उपजतो क्लेश एटले दुःख टळी जायछे; परम शान्ति अनुभवायछे.

संशि सकल सुणतां टले (भाई) रामवसिष्टसंवाद ।
आत्मज्ञान अनुभव मले उपजे मन उल्हाद ॥ ६ ॥

श्रीरामचंद्रजी अने वसिष्ट मुनिनो संवाद श्रवण कर्याथी संशय मात्र टळी जशे एटले बुद्धि स्थिर थशे; आ खरुं हशे के खोटुं एवी शंकाज नहि रहे, ने मन निश्चल बनशेः ते संकल्प विकल्पनो धर्म तजशे; एथी आत्मज्ञान पमाशे अने त्हेनो अनुभव थशे एटले आत्मस्वरूप ओळखाशे. एवी दशा थतां मनने परम उल्लास उप-

थशे, परमानंद प्राप्त थशे. दुःखमात्रनुं निवारण थइ जशे. एवो ए संवादरूपी अध्यात्मबोधनो महिमा छे.

देवऋषी सिध पुरुष जे मानुभाव मुनि धीर ।
ब्रह्मपुत्र वसिष्ट ए परबोध्या रघुवीर ॥ ७ ॥

रामवसिष्टनो संवाद एवो कल्याणकारी छे; कारणके गुरु अने शिष्य बंने उत्तम स्थाने छे, संपूर्ण अधिकारी छे. श्रीरामचंद्रजीने प्रबोधनार गुरू वसिष्ट ते कंइ इतर मनुष्यो जेवा नथी. ए देवर्षि, महान् सिद्ध, महानुभाव, एटले म्होटा प्रभाववाळा, महामुनि अने धीर एटले स्थिरबुद्धिवाळा पुरुष छे. ए वळी ब्रह्माना पुत्र छे, एटले एमनी गुरूस्थाननी योग्यतामां कंइ कहेवा जेवुं नथी.

शुध चैतन विज्ञानघन अकलित ब्रह्म अपार।
जगतहेतनें कारणे दशरथग्रह अवतार ॥ ८ ॥

मुमुक्षु शिष्यने स्थाने बिराजेला श्रीरामचंद्रजी पण ओळखवा-जेवा छे. मनुष्यदेहे ए कंइ मनुष्य नथी, अने एमने कंइ बोधनी के मुक्तिनी अपेक्षा नथी; कारण के ए शुद्ध चैतन्य कहेतां परब्रह्मज छे. वळी परम ज्ञान स्वरूप छे एटले एमने जाणवानुं कंइ नज होय. ए अकलित ब्रह्म छे, एनां गुणकर्म कळ्यामां आवे एवां नथी, दिव्य छे. वळी ए अपार एटले अनन्त छे, एना महिमानो अन्त जडतो नथी. रामचंद्रजीए श्रीदशरथ राजाने त्यां मनुष्य रूपे अवतार लीधो ते लोकनुं कल्याण करवाने, रावणादि दुष्टपुरूषोनो

संहार करी धर्मनुं स्थापन करवाने, अने ए रीते साधु पुरुषोनुं रक्षण करवाने एम जाणवुं.

कौशल्या (गर्भ) मुगटमणी राजिवलोचन राम।
(मोह) अहंकार ततक्षण टळे लेतां तेहनुं नाम ॥ ९ ॥

कौशल्या सरखी साध्वीने पेट अवतरेला मुकुटमणि, कमल लोचन श्रीरामचन्द्रजीनुं नाम मात्र लेता तेज क्षणे अहंकार टळी जायछे. जीव जे हुं हुं नेम जोया करेछे रहेनुं चित्त श्रीरामचंद्रजीमा जोडायाथी संकल्पविकल्पने तजी देछे ने ध्येयमात्र स्थिर थायछे, तद्रूप बने छे. ए रीते अहबुद्धि छूटी जाय एज मोक्ष.

अंतरजामी राम ए (अने) वसिष्ट (ते) विवेकविचार।
निजानंद सुख पामवा कर्यो सकल उपगार ॥ १० ॥

अन्तर्यामी आत्मा ते राम अने विवेक बुद्धि ते गुरू वसिष्ट एवी घम्ना करतां समग्र संवाद आत्मविचारणाज छे. आवी रीते आत्मविचारणा करी रहेमणे संसारी जीवोने जन्ममरणना दुःखमाथी छोडववा रूपी लोकोपकारज कर्यो छे. एम उपकार करवामा पण निजानन्द कहेता एक प्रकारना आत्मविलासथी मळतो आनंद पामवा शिवाय बीजो हेतु नथी.

रघुपति जे जे पूछियं कह्यूं (विशद) वशिष्टे तेह।
अर्णव ब्रह्मविद्यातणो बोध अपार छि जेह ॥ ११ ॥

श्रीरामचंद्रजीए जे जे प्रश्न परिप्रश्न कर्या रहेनु समाधान महा-

बुद्धिमान् एवा श्री वसिष्ट गुरूए करेलुं छे. एवा गुरूशिष्यना संवादमा अत्यन्त बोध भरी मूकेलो छे. ए एक ब्रह्मविद्यानो अर्णव कहेता सागरज छे. सागरमा रहेला जलनो जेम पार होतो नथी तेम ए ब्रह्मविद्याना बोधनो पण पार नथी; एटले एमा संसारी पामर जीवोनी गति थवी महा कठिण छे.

जोइ कवीये मध्य ते किंचित कर्यो उधार ।
आत्मबोध उपजाववा अनुभव वसिष्टसार ॥१२॥

ए सघी ब्रह्मविद्यानु अवलोकन करी एमांथी मात्र थोडाक भागनो अहीं हूं उद्धार करुं छु; ने वसिष्टसारमां जे ज्ञान, विज्ञान बताव्युं छे त्हेनुं, श्रोताओमां आत्मज्ञाननो उदय थाय एवा हेतुथी, अहीं व्याख्यान करुंछुं.

ज्ञानि ज्ञेय भइ जाणिये ज्ञाने मुक्तज होय ।
भक्ते ज्ञानज ऊपजे भक्ति धर्मथी होय ॥१३॥

ज्ञान एटले आत्मबोध. एनो महिमा केवो छे ते कहेछे. ज्ञानथी ज्ञेय वस्तुनुं एटले परब्रह्मनुं ओळखाण था[illegible]
मळे छे; एवुं आत्मज्ञान भक्तिथी उपजेछे[illegible]
स्वधर्मना पालनथी [illegible] पामेछे; माटे [illegible]
मुख्य वात छे, [illegible] ओळ[illegible]
साधन छे.

कर जोडी नर[illegible]
गुरुब्रह्म (चैतन्[illegible]

अर्थ स्पष्ट छे.

प्रसाद एटले कृपा. ईश्वरनी कृपा होय तोज सद्गुरूनो योग थई आवे, ने सद्गुरू मळे त्यारेज आत्मज्ञाननी परम रहस्यनी वात जाणवामां आवे; माटे अहीं नरहरि गुरू अने ब्रह्म बन्नेनी कृपाने आ प्रवृत्तिमा आगळ करेछे.

भवनां बंधन टालवा [भाई] यत्न करे जन येह ।
अधिकारी ए ग्रंथना जांणें निश्चें तेह ॥ १५ ॥

हवे आ ब्रह्मविद्यानुं आख्यान सांमळवाने अधिकारी कोण छे ते कहेछे. हे श्रोताओ! भव कहेता संसारना जन्ममरणरूपी बंधनथी छूटवाने जे पुरुषो यत्न करेछे, एटले जेने खरेखरी मुमुक्षा प्राप्त थइ छे ते आ ग्रंथना अधिकारी छे, बीजा नथी; कारण के जे रहस्य जाणवानुं छे ते एवा मुमुक्षु पुरुषोज निःसंदेह जाणी शकेछे. श्रीमद्जगद्गुरुए आत्मबोधनो अधिकार पण मुमुक्षु जनोनेज अर्प्यो छे. × × मुमुक्षूणामपेक्ष्योयमात्मबोधो विधीयते॥ कारण के जड अने अज्ञानी पुरुषोने परम रहस्यनी वात कहेतां तेहेनी बुद्धिमां भेद उपजेछे, ने ते व्यवहारथी पण भ्रष्ट थायछे.

ते मूरख नहि ज्ञानि नांहि (अनि) वीवेकी नर जेह ।
अधिकारी ए ग्रंथना जांणें निश्चें तेह ॥ १६ ॥

ए मुमुक्षु पुरुषो केवा होयछे ते कहेछे. ए मूर्खे नहि तेम ज्ञानीए नहि एवी एमनी स्थिति होयछे. मूर्ख नहि; कारण के असत्य पदार्थो दुःखरूप छे ए एमने समजायुं होय छे, ने संसारना

न्नासथी, जन्ममृत्युना दुःखथी मुक्त थवानी त्हेमनी अभिलाषा होय छे. तेओ ज्ञानी पण न कहेवाय; कारण के ज्ञान उपज्या पछी, अनुभव मळ्या पछी जीव संसारबंधनथी, कर्मजाळथी छूटी गयलाज होयछे, एटले त्हेमने मुक्तिनी अपेक्षा होती नथी. मुमुक्षुओने विवेकबुद्धि उपजी होयछे एटले संसारनुं मायिक स्वरूप तेओने समजाइ गयु होयछे. आम निर्वेद पामेला एटले जेओ संसारना क्ले-शथी कंटाळेला विवेकी मुमुक्षुओ छे एवा आ माख्याननुं ज्ञान पामवाने अधिकारी छे; कारण के तेओ रहस्यनी वात यथार्थ संग्रही शकेछे.

मूरख मद वीषे धर्या उपजे तेह न प्रीत ।
पंडीत जायरथ प्रीछियुं सर्व ब्रह्म अद्वैत ॥ १७ ॥

बीना पुरुषो केम अधिकारी नथी ते कहेछे; मूर्ख, अज्ञानी जीवो मद मात्सर्यादि गुणोथी बंधायला होयछे एटले त्हेमनामां सद्भाव ऊगीज शकतो नथी. कोइ पण धर्मनी वात उपर त्हेमनी श्रद्धा बेसती नथी, ने तेथी त्हेनुं श्रवण करवाने तेओ इच्छता नथी. तेओ पदार्थ स्वरूपथीज मोही पडेछे, विषय शोधवानेज आतुर बनी रहेला होयछे, ने अहंममताने लीधे रागद्वेषमांज तेओ आयुष खूएछे. सद्भाव विना, प्रेमभक्ति विना, परम तत्त्वनी वात सघराती नथी, मनमां ठसती नथी; माटे त्हेमना आगळ ज्ञानवार्ता वखी निष्फळ छे. सर्व—अखिल विश्व—विश्वसमूह एक अद्वैत ब्रह्मज छे, त्हेनो एक विलास मात्र छे, एवुं पंडित कहेतां विवेकी जनो, मुमुक्षुओ समजी शके छे; माटे त्हेमने ज्ञानना अधिकारी कह्या.

पशु राखे पशुपाल ज्यम ग्रही जेष्टिका पाण्य ।
त्यम हरि राखे जेहने (तेहने) उपजि बुद्धि निर्वाण्य ॥१८॥

गोवाळ गोधनने हाथमां लाकडी राखी वश राखेछे, एटले ज्यां त्हेमने चरवा लई जवां होयछे त्यां संभाळीने लई जायछे, आमतेम एके गायने चसकवा देतो नथी; तेम जे जीवोनुं प्रभु रक्षण करेछे, एटले जेमने ते वश राखेछे, तेओने निर्वाणबुद्धि एटले मुमुक्षा उपजेछे. तात्पर्य एम छे के जे पोतानी वृत्तिओ वश राखेछे अने एक हराइ गायनी पेठे त्हेमने भटकवा देता नथी त्हेमना संकल्पधर्मनो त्याग थायछे. पदार्थोनो मोह त्हेमने वळगी शकतो नथी, अने संसारनां बंधनथी छूटवानी तेओ इच्छा राखेछे एटले मुमुक्षु बनेछे.

निर्मल बुध्य तो ऊपजे (जो) कृपा करे भगवान।
कृपा विना नव्य पामिये सदगुरुशास्त्रनुं ज्ञान ॥ १९ ॥

ईश्वरकृपानो महिमा बतावेछे. परमात्मानी कृपा थाय त्यारेज निर्मळ बुद्धिनो उदय थायछे. निर्मळ बुद्धि क्यारे ऊपजी कहेवाय के जीवनी अहंता, जडतानो त्याग थाय, देह पदार्थो जड ने मिथ्या छे एम जाणी त्हेमनामां ममता के राग रहे नहि, अने एकरस केवल ब्रह्म त्हेना प्रति वृत्ति वळे त्यारे. आवी बुद्धि सद्‌गुरूना समागमथी अने शास्त्रज्ञानथी उपजी आवेछे; पण प्रभुनी कृपा विना एवो योग आवतो नथी के कोइ सद्‌गुरू मळी आवे ने शास्त्र रहस्यनी वात सांभळवानुं बनी आवे. संसारना खटरागमांज आ अमूल्य

आयुष गुमावाय छे, त्हेमां ज्ञानवार्ता करवानुं ने सद्गुरूनो आश्रय पामवानु बनी आवे एना जेवो भाग्योदय कयो जाणवो ? प्रभु पोते कृपासिंधु छे. अमुकना उपर कृपा करेछे ने अमुकना उपर नहि एम नथी, पण जे त्हेनी अपेक्षा राखेछे त्हेने ते मळेछे.

परमेश्वर परमातमा (जेहने) कृपा करे साक्षात ।
तेहनि ए बुध्य ऊपजे न गमे अन्यज वात ॥ २०॥

फरी पाछा कहेछे के श्री परमात्मानी कृपा जेना उपर थायछे त्हेनी बुद्धि निर्मळ थायछे. त्हेनामाथी जडता खसी जायछे ने मोक्ष प्राप्ति सिवाय बीजी वात त्हेने पछी रूचती नथी; कारण के दुःखरूप पदार्थोने यथार्थ दुःखरूप जाण्या पछी त्हेमनो त्यागज थायछे, विषयभावना ऊपजतीज नथी. संसार, संबंधीओ तो अनेक वार्ताओ करेछे, जे मोह खसेलो छे ते फरी फरी वळगाडवाने मथन करेछे, निवृत्ति पामेलाने पाछा क्लेश आपनारी प्रवृत्तिओमां मचाडवा प्रयत्न करेछे; पण वृत्ति एकवार खसी ते खसी; ते फरी दुःखरूप संयोगोने संघरती नथी. भोजो कहे छे के " अमे अधर थया अस्वार के घोडेले नहि च्हडुं जीरे. "

हरिकृपा तव* जाणिये (ज्यारे) होये बुद्धिप्रकाश ।
(ते) सेवे हरिगुरु संतने एम कहे (नर) हरि दास ॥२१॥

हरिकृपा थइ ए केम जणाय तो कहेछे के एवात कंइ आगळथी

---

* मूळमां त्यारे छे.

नक्की थती नथी. संसारना मायिक स्वरूपमांथी वृत्ति खसी जाय, जीव जेने लाभहानि गणेछे, सुख दुःख गणेछे त्हेनी गणना करवी मटी जाय, देहबुद्धिनो त्याग थाय, रागद्वेष छूटी जाय ने ए रीते निर्मळ थयली बुद्धिनो प्रकाश अनुभवाय ने मुमुक्षा सूजे; वळी प्रभु गुरू अने साधु पुरूषोनुं सेवन करवानी अभिलाषा ऊपजे, ने एवा शुभ योगोमांज वखत जाय, त्यारे परमात्मानी कृपा थइ एम जाणवु.

(हवि) कहूं कथा वासिष्टनी (जे) केवल आतमज्ञान ।
ते अनुभवि हुं तूं टले होये दृष्टि समान ॥ २२ ॥

आ वसिष्टसारनी कथा ए केवळ आत्मज्ञाननीज वार्ता छे. आत्माने ओळखी शकाय, एक अद्वैत ब्रह्म जाणवामां आवे एवुंज एमां रहस्य बतावेलुं छे. एनो अनुभव करवाथी हुं तुं एवो जे भेद-भावना ते टळी जायछे ने सर्वत्र समदृष्टि थायछे. ए कथा हुं हवे हे श्रोताओ ! कहुंछुं ते श्रवण करो.

प्रथम प्रकर्ण विरागनूं [अने] बीजूं जगमिथ्याय ।
त्रीजूं जीवनमुक्तनुं चोथूं मनलय माय ॥ २३ ॥
पंचमुं उपशम वासना (अने) छट्ठे आत्ममनन्न ।
सप्तमि निरुपण शुद्धनूं अष्टमि आत्मार्चन ॥ २४ ॥
नवमे जीवात्मातणूं दशमे केवल ब्रह्म ।
मानुभाव गुरु सेवतां लहिये एहनुं * मर्म ॥ २५ ॥

उपरना त्रण श्लोकमां बतावेलां प्रकरणोनुं मर्म एटले रहस्य महान प्रभावशाळा गुरूनी सेवार्थीज जाण्यामां आवेछे. ज्ञानप्राप्ति ते गुरुद्वाराज बतावेली छेः गुरू विना ज्ञान नहि. एकला ग्रंथो वांची ज्ञान पमातुं नथी; कारणके ए ज्ञान एकलुं शुष्क छे, एथी अनुभव थतो नथी, अने अनुभव विना बधोए श्रम मिथ्या छे. कृष्ण परमात्माए पण अर्जुनने एज कहेलुं छे के तद् विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ॥

श्रीरामोवाच ॥

मानुभाव मुनिवर कहो सद्गुरुलक्षण सार ।
(जेहने)दर्शनि म्हा सुप पांमियें वामे* दुपसंसार ॥ २६ ॥

उपर गुरूसेवानुं फळ बताव्युं; पण सद्गुरु कोने कहेवा ! जगतने घूतवाने माटे नाना प्रकारना वेष धारी लोक बेसेछे, अने उपर उपरथी ज्ञान वार्त्ता करी साधुतानो आडंबर धारण करी पोते तो अनेक कुकर्मोमां रमेछे. द्रव्यकामादि अर्थने लइ एम आडंबर धारण करनारा नामना गुरूओ तो घणाए हशे; एमनी सेवा कर्याथी शुं मळे ! एवा गुरू तो शिष्यनी कोटे पत्थर बांध्या जेवा छे; तेथी भवसागर तरवानी इच्छा राखनारनी स्वाभाविक गतिनो पण नाश थायछे ने ते वहेला डूबेछे. माटे प्रथम तो सद्गुरु शोधी कहाडवा जोइए. माटे श्रीरामचंद्रजी गुरूवसिष्ठ प्रत्ये पूछेछे के हे महानुभाव ! मुनिश्रेष्ठ ! जेनां दर्शन मात्रथी महा सुख मळे, अने आ दुःखरूपी संसारनो छेडो आवी जाय एवा सद्गुरूनां लक्षण बतावबानी कृपा करो.

चोपै.

वसिष्टोवाच ॥

वसिष्ठ कहे सुणजो सत्य राम मानुभाव गुरु तेहनुं नाम ।
जे घट केवल ब्रह्मज्ञान सदा निरंतर दृष्टि समान ॥ २७ ॥

वसिष्ठजी रहेनुं उत्तर आपे छेः हे राम ! हुं तमने सत्य वात कहुंछुं ते श्रवण करो. जे पुरुषना हृदयमां एक केवल ब्रह्मज्ञानज भरी मूकेलुं छे, बीजी कोइ प्रकारनी वासना कामना नथी, अने जे अहोनिश भूतमात्रने विषे समदृष्टि राखी वर्त्तेछे, भेदाभेदने अनुभवता नथी, रागादिने उपजवा देता नथी, एवा पुरुषोनेज महानुभाव सद्गुरू कहेवा, बीजाओने नहि. कारण के वेषथी सद्गुरूनो निर्णय थइ शकतो नथी, रहेना तो हृदयने दृष्टिज ओळखी लेवानां छे. वेष तो मिथ्या छे, उपाधि छे. कोइ पणआश्रममां सद्गुरू भावनाए करीने ओळखी लेवा एम कहेवानुं मर्म छे.

मानुभावनी करतां सेव भवसागर तरिये ततखेव ।
(ते) आपे युक्ति अनोपम सार तेणि* करी होये भव पार ॥ २८ ॥

एवा महात्मानी सेवा कर्या कर्याथी आ भवसागरनो ततज छेडो आवी जायछे, ए सहजे तरी जवायछे, एटले जन्म मरण रहित

* संपूर्ण प्रतमां तेणे छ

थवायछे, मोक्ष अनुभवाय छे; कारणके सद्गुरूनी पासे मोक्ष अनुभववानी खरेखरी युक्ति होय छे ते ए शिष्यने बतावेछे ने तेथी भवसिंधुनी पेले पार उतरायछे.

जिम नाविकनो करतां संग दृढ नौका ते पामि अभंग। अगाध्य जल सूंपे ऊतरे (त्यम) गुरुवचनी भवसागर तरे ॥ २९ ॥

नाविकना संगथी समुद्र तरवाने जोइए तेवी मजबूत अने गाबडा वगरनी नौका प्राप्त थायछे अने ए साधनथी विशाळ समुद्रनुं अगाध एटले ताग पण न आवे एटलुं बधुं जळ पसार करी सामे पार जवायछे; तेम गुरूना समागमथी गुरूनां ज्ञानवचनरूपी नौका मळेछे ने आ समुद्र जेवा अनंत देखाता भवसागरनी सामे पार शिष्यथी उतरायछे. अर्थात् गुरूना बोधथी अज्ञान टळेछे ने कर्मना वासना रहेती नथी; मायाग्रहथी मुक्त थवायछे एटले जन्ममरणनो फेरो मटेछे.

(वली) गुरुउपदेशतणी महिमाय (ते) एकमनां सुणिये रघुराय।
तापत्रय गुरुवचनें टले परम पुरुप परमात्मा मले॥३०॥

वळी गुरूपदेशनो महिमा केवो छे ते हे रामचंद्रजी ! एकमनां एटले एकाग्र चित्ते श्रवण करो. गुरूना वचनथी आधि, व्याधि अने

उपाधि ए त्रिविध ताप टळी जायछे; शान्त थइ- जायछे, ने जीवने कोई प्रकारनो दाह रहेतो नथी अने परम पुरुष जे परमात्मा तेहेनी प्राप्ति थायछे एटले ब्रह्मरूप बनायछे.

दीर्घ रोग तां ए संसार तेहनुं औषध स्वात्मविचार ।
कवण अहं कवण संसार (एणे) विवेक करी होये निस्तार ॥ ३१ ॥

संसार तो एक घणा लाबा वखतना रोग जेवो छे. ते व्याधि जेवा तेवा औषधथी मटतो नथी. एनुं रामबाण औषध एकज छे, ने ते स्वात्मविचार छे. स्वात्मविचार एटले पोताना आत्मानो विचार. हुं कोण ? आ संसार कोण ? ए प्रकारे विवेक कर्याथी, सत्यासत्यनो निर्णय कर्याथी, ए भवरोगनी शान्ति थइ जायछे.

(ज्यम) औषधि रोगनि निश्चे शांत (त्यम) आत्मविचारे भागे भ्रांत ।
आत्मविचार गुरुथी पामिये सद्गुरुचरणे (जो) शिश नामिये ॥ ३२ ॥

संसार रोगनुं मूळ कारण भ्रान्ति छे, एवी चिकित्सा करीने आत्मविचारनुं औषध करवुं एटले औषधथी जेम रोगनी अवश्य शान्ति थइ जायछे तेम आत्मविचारथी भ्रम भागी जशे, दूर थशे. ए स्वात्मविचाररूपी औषध सद्गुरूनी पासेथी मळेछे. बीजो कोइ उस्ताद एवुं ओसड नहि आपी शके; माटे सद्गुरूनेज चरणे

जइने शिष मूकी, एनीज कृपानी भिक्षा मागो के जेथी आत्मविचार करतां ते शीखवे, एवी कोइ युक्ति आपे के पछी भ्रम उपजवाज न पामे, सदाये निरोगी रहेवाय, परमानंद अनुभवाय.

तत्वज्ञानी होये यहा निश्चे रघुपति जावूं त्यहां ।
साधुवृक्ष रहित ये देश त्हेमां करवो कयम परवेश ॥ ३३ ॥

माटे हे रघुपति ! तत्वज्ञानने जाणवावाळा सत्पुरुषो ज्यां रेहता होय एवे ठेकाणे समागम करवानी इच्छाथी अवश्य जवुं, कारण के संत पुरुषो तो एक वृक्ष जेवा छे. त्हेने आश्रये, त्हेनी छायामां जे कोइ तापथी तपेलुं जइने बेसेछे त्हेने विश्रान्ति मळेछे. संतपुरुष रूपी वृक्ष जे देशमां न होय त्यां क्यारे पण जवुं नहि; कारण के ए तो कुग्राम छे.

शीतल छाया फल अतिसार सज्जनवृक्ष रहित जे ठार ।
दिवसमात्र ना रहेवुं त्यहां भवदुखमोचन नोहे ज्यहां ॥ ३४ ॥

साधुपुरुष रूपी वृक्षनी छाया अति शीतल छे. ते गमे तेवा संसारजनित तापने भूलावी देछे अने शान्त आह्लाद उपजावे छे, महादुर्लभ एवा निवृत्तिसुखनो अनुभव आपेछे. वळी एनां फल तो अतिसार एटले घणांज मीठां होयछे, एटले एनी छायामां बेठेलाने क्षुधा पण दुःख दइ शकती नथी; अर्थात् संतसमागमथी बुद्धि तापरहित, सात्विक थया पछी परमआनंदरूप मोक्षफळ पण मळेछे. आवुं वृक्ष जे स्थाने न होय, ज्यां संसारनुं जन्ममरणनुं दुःख नि-

वारण करे एवा महात्माओ वसता न होय त्यां एक दिवस पण निवास करवो नहि.

सदाय करवो संतसुसंग तन्मग्ने शीतल होय अंग।
जदिप ते नही करी उपदेश तोहे तां (हां) करवो, परवेश ॥ ३५ ॥

हमेशा संतसमागम करता रहेवुं, कारणके एमा मग्न रहेवाथी अंग शीतल थायछे, सात्विक बुद्धि आवे छे. अधिकार विना वखते गुरू कंइ उपदेश न आपे त्होये निराश थइ ए आश्रय छोडवो नहि, कारणके सात्विक बुद्धि उपजशे एटले ज्ञानाधिकार प्राप्त थशे ने मोक्षार्थे ज्यारे त्यारे पण सिद्ध थवानो वखत आवशे.

साधु पुरुषनूं भाषण जेह गुरुज्ञान* जाणो सत्य तेह।
साधु पुरुष बोले सत्यसार वेदवाक्य तां ए×निरधार॥३६॥

साधु पुरुष आपणने बोध न करे त्होय त्यां जवु एनुं वळी कारण कहे छे. साधु जन जे जे बोले त्हेमा खरेखरूं गुरूज्ञान भरी मूकेलुं हायछे, एटले एनी मेळे बोध थशेज. वळी साधु जन हमेशां सत्य वाणीज वदेछे अने ते वेदवाक्यना जेवीज होयछे; असत्य कई होतुं नथी.

---

* मूळमा गुरुउपदेस छ

× „ पद्द छे.

विद्वान जनोनी संगत्य सारं मनोवृत्ति होय ब्रह्माकार।
शून्य ते पूरणता जोय मृत्यु ते अमृतवत होय ॥३७॥

विद्वान् पुरूषोनी संगतिथी मनोवृत्ति ब्रह्माकार बनेछे; मन संकल्पधर्म छोडी देछे, विषय भावना करतुं नथी; पण शांत स्थिर थइ जायछे. एवी साधु जननी छाया मात्रनो प्रसाद छे. संकल्प विकल्पवाळा जीवने सृष्टि मात्र शून्य, चेतनरहित लागेछे, पण मनोवृत्ति शान्त थया पछी पर ब्रह्म परमात्माने अखिल विश्वमां ते पूर्ण भरेलो, व्यापेलो जुएछे. त्यारपछी मृत्यु ते मृत्युरूपे भासतुं नथी, मृत्युभाज अमरपद समजाय छे; कारणके मिथ्या देहादिनुं मृत्यु छे, आत्मा तो अमर छ एवो ज्ञानानुभवीने निर्णय थइ जायछे.

आपद ते म्हा+संपद थाय (ए) संतसंग मोटो माहिमाय।
वलि वलि कीजेसंत*सुसंग भवदुखकेरो होये भंग॥३८॥

सत समागमनो महिमा एटलो बधो छे के एथी जे अन्य जीवोने दुःखरूप भासेछे ते समागमवाळाने महासंपद् एटले परम आनंदरूप लागेछे. जड दृष्टिने पदार्थो मोह उपजावेछे ने दुःखपरिणामी विषयो दु खनो अनुभव करावेछे पण पदार्थोने, बधा संसारने एक परब्रह्म परमात्मानी लीलारूपे के विलासरूपे एछे, त्हेने ए बधा पदार्थोने जोइ जोइने महाआनंद उपजेछे; माटे-फरी फरीने-संतसमागम करवो के जेथी भवदुःख वहेता संसारना जन्म मरणना क्लेशनो पार आवी जाय.

+ मूळमा महा छ.
* ,, सतनो संग छे

ज्ञानिविषे छें चित जेहनूं कहि पेरे सुख कहुं तेहनूं×।
आत्मसूख भोगवि नर तेह ज्ञानिविषे केवल चित जेह॥३९॥

आत्मज्ञानी पुरुषोमां जे पोतानुं चित्त राखेछे, अर्थात् त्हेमनो प्रसाद पामवानी अहोनिश इच्छा राखेछे किंवा त्हेमने ध्येय गणी पोतानी चित्तवृत्ति त्हेमनामां परोवी राखे छे, ते जीवनुं सुख ते हुं शी रीते कही बतावुं ? ते परम सुख पामेछे; कारणके ज्ञानी जनोमां पोतानी चित्तवृत्तिने तद्रूप बनावनार पुरुष आत्मसुख भोगवेछे ने ए आत्मसुख क्यमे वर्णवी शकातुं नथी ! ध्याता ध्येयवस्तुरूप बनेछे. माटे ज्ञानी जनोना ध्यानसमागमथी ज्ञानपद मळेछे, आत्मा ओळखाय छे, आत्मानंद प्राप्त थायछे.

संसारदुखेदुखियो* नर जेह ज्ञानि विना सुख पामि न तेह।
ज्ञानि पुरुष ते परम दयाल इष्टोपदेश दे ततकाल॥४०॥

संसारनां अनेक प्रकारनां दुःखथी जे जीव अतिशय दुःखी छे त्हेने ज्ञानी जनोना आश्रय विना, त्हेमना प्रसाद विना, क्यारे पण सुख प्राप्त थतुं नथी. कारणके ज्ञानी, महात्माओ परमदयालु होय छे ते दुःखी जीवना दुःखनुं निवारण करवाने माटे तरतज उपदेश करेछे; दुःख सुखनां स्वरूप समजावेछे. सत्य अने असत्य वस्तुनुं ज्ञान करावेछे, ने ए रीते मायिक स्वरूपनो मोह खसेडेछे, अने सत् जे केवळ ब्रह्म, एक आत्मा, त्हेना तरफ

× कही पेरे सुख वर्णवुं तेहनुं ॥ एवो पाठ छे.

* मूळमां आर्त छे.

वृत्तिने दोरेछे. एथी संसारनां मिथ्या दुःख, पण जीवने दुःखी करी शकतां नथी.

ज्ञानि करे ते पर उपकार जेणे जिवनो होय निस्तार
ज्ञान विज्ञान ज्ञानी ते कहे(जो) सतशिष्य हृदयामां
ग्रहे ॥ ४१ ॥

ज्ञानी जन परोपकारज करेछे, एवुं ज्ञान बतावेछे के तेथी जीवमात्रनाज त्याग थइ जायछे. ज्ञानी पुरुष जे बोध अने अनुभव वार्त्ता कहेछे ते अधिकारने प्राप्त थएलो शिष्य हृदयमां संघरेछे, ने एथी जीवभाव छांडी ते पोताना आत्माने ओळखवा शक्तिमान थायछे.

शास्त्रार्थ ते कहिये ज्ञान आत्म अनूभव ते विज्ञान ।
विरक्त साधु शिष्य होये जेह उपदेश तेहनि देवो तेह ॥४२॥

शास्त्रोमां जे रहस्य बतावेलुं होयछे तेनुं नाम ज्ञान, अने आत्मानुभव एटले विज्ञान. एकला ज्ञानथी कंइ कार्य थतुं नथीः कारणके ए तो एक आत्माने ओळखवानुं साधन छे, पण ए साधनथी विज्ञान न लइए, आत्मा न ओळखीए, त्यां सुधी साध्य वस्तुनो लाभ नथी. त्यारे गुरुजन ज्ञान अने विज्ञान उभयनो लाभ आपेछे ज्ञानविज्ञाननो उपदेश जेने तेने करातो नथी. जे शिष्य वैराग्यने प्राप्त थएलो ने केवल साधुवृत्तिवाळो होय तेनेज एवो बोध अपायछे.

रघुकुल तिलक सुणो निरधार गुरूबोध* क्रमपालेंग्रहार
महावाक्यारथ ब्रह्मज्ञान (एह) प्रज्ञावतनें दीजे दान॥४३।

हे रघुकुळ तिलक ! त्हमे श्रवण करो; गुरू जे बोध आपेछे एथी क्रम सचवायछे, ज्ञानपरंपरानो भग थतो नथी अहं ब्रह्मास्मि वगेरे जे वेदना महावाक्य छे त्हेमनो अर्थ केवळ ब्रह्मज्ञानज छे ने एवा ज्ञाननुं दान स्थितप्रज्ञ थयला पुरुषनेज अपायछे, कारणके बीजा एवु गूढ ज्ञान सघरी शकता नथी

सुपात्र विण ए रस नव्य रहे महानुभाव राघव इम कहे।
निर्मल बुध्य होय तत्त्वसुभोग+देहबुध्ये नोहि आतमजोग
॥४४॥

ब्रह्मज्ञानरूपी केवळ रस सुपात्र विना रही शक्तो नथी. काणु, फूटेलु वासण जेम जळ संघरी शकतु नथी तेम अनधिकारी जीव ब्रह्मरस संघरी शकतो नथी. जेनी बुद्धि निर्मळ छे ते तत्त्वभोग करी शकेछे, अर्थात् आत्मयोग पामेछे, देहबुद्धिवाळा नहि; कारणके त्हेमनी चित्तवृत्ति जड पदार्थोमाज तद्रूप बनी गयली होयछे.

सेवि गुरू भणि सास्त्रपुराण तत्वगणत्री† करे प्रमाण।
(तांहांलगे) मळे नही देवाधिदेव ज्यां‡ लगि मन्य वसी अहंमेव ॥ ४५ ॥

* मूळमां गुरुउपदेश पाठ छ + मूळमा तत्त्वनो भोग छे †मूळमां तत्त्वसख्या छ ‡ मूळमा ज्यांहां छ

ना—देहबुद्धि एटले अहंता. देह ते हुं एवी बुद्धि होयछे त्यां सुधी देवाधिदेव कहेतां परब्रह्म जे आत्मा ते मळतो नथी, आत्मानुं ओळखाण पडतुं नथी. देहबुद्धिवाळो गुरूनी सेवा करे, शास्त्र-पुराणना पाना उथलावी जाय अने तत्त्वसंख्यानुं प्रमाण कहाडे तोय शुं थयुं ? एथी आत्मबोध थतो नथी, अर्थात् देहबुद्धिनो त्याग न थाय तो बधाए साधन नकामां छे.

आत्मरुपे आत्मा देखिये सत्वबुध्येथि प्रगट पेखिये ।
गुरूशास्त्र सतसंगे करी सत्वबुध्य ते प्रगटे परी+ ॥४६॥

आत्माने ओळखवानुं मात्र एकज साधन छे, ने ते आत्मा छे. श्रीमद् भगवद्गीतामा पण एमज बतान्युं छे, आत्मानम् आत्मना पश्येत्–बुद्धि निर्मळ थइ जाय तो आत्मस्वरूप प्रकट देखायछे एटले जडबुद्धिनी जडता जता तेज केवळ आत्मरूप बनेछे, ने पछी रहेनोज प्रकाश अनुभवायछे. बुद्धि सात्त्विक, निर्मळ थवानुं साधन गुरूसमागम, शास्त्राध्ययन, अने सत्सग छें.

अध्ययनादि कला सउ* जेह अणअभ्यासें जाये तेह ।
(पण) आत्मज्ञान कला इक होय क्षण क्षण वृद्धि ते पांमे सोय ॥ ४७ ॥

अध्ययनादि बधीए कळाओ एवी छे के स्हेमनो जो अभ्यास

+ पाठान्तरः—सत्त्वबुद्धि ते आवे खरी ॥
* मूळमां सर्व छ

न रहे तो ते भूली जवाय पण आत्मज्ञाननी कला एवी छे के ते एक वखत जाणी लीधा पछी रहेनी विस्मृति थती नथी. पण उलटो-रहेमां प्रतिक्षण वृद्धि थती जायछे. जेम जेम आत्मानो अनुभव थतो जायछे तेम तेम रहेनो प्रकाश वधतोज जायछे.

सतसंगति प्रगटे ते ज्ञान (ए) वेदवाक्य सुणजो भगवान।
ज्ञाने ज्ञेय निश्चें जाणिये जो अंतर अनुभव आंणिये ॥४८॥

एवी आत्मज्ञाननी कला सत्संगथी शीखायछे. एवुं हे प्रभु ! वेदवाक्यनुं कहेवु छे. ज्ञाननो हृदयमा यथार्थ अनुभव थाय तो ज्ञेय वस्तु कहेता आत्मा—ब्रह्म निसंदेह ओळखायछे.

स्वकंठविषेमणि बांध्यो जेह [पण] भ्रमवश जीव न देखे तेह।
प्रगट मणी त्यारे पांमिये भ्रम सकल ज्यारे वांमिये॥४९॥*

आत्मज्ञान न थवानुं कारण भ्रम—भ्रान्ति छे. एना उपर कठा-भरणनुं दृष्टांत आपेछे. कंठमा मणि पहेरेलो होय तेम छता भ्रान्ति-वश जीवने रहेनी फाम रहेती नथी. ते माटे म्हारो मणि क्यां गयो एम जीवने फाळ पडेछे. भ्रान्तिनुं निवारण नथी थयु त्यां सुधी मणि कंठमाज छे एवी स्मृति आवती नथी, पण ज्यारे ते टळी जाय छे त्यारे मणि प्रकट कंठमा देखायछे, स्मृति आवता हाथ जइने कंठना मणि उपर पडेछे.

---

* मूळमां स्वेकंठे छे, पाठान्तर —भ्रमविसे, त्याहारि, ज्याहारि.

(ईम)टलिअज्ञान प्रगटे निजज्ञान त्यारि स्वयंभासे भगवान;
गुरुवचनें वरते* नर जेह आत्मादर्शन पांमे तेह ॥५०॥

एम अज्ञान टळी जाय त्यारेज निजज्ञान कहेता आत्मस्वरूपनुं ज्ञान थाय छे अने परब्रह्म परमात्मा स्वयं प्रकाशी रहेछे अज्ञान गुरूपदेशथी टळी जाय छे. माटे जे पुरुष गुरूना वचनने अनुसरीने वरतेछे, रहेछे, त्हेने आत्मदर्शननो लाभ थायछे.

स्वस्वरूप जाणे नहि जेह भाग्यरहित नर भणिये तेह।
विपिविषया जे सुख करिग्रहे परिणामे म्हादुख ते सहे॥५१॥

जे पुरुष पोताना स्वरूपने कहेतां आत्माने ओळखतो नथी त्हेने भाग्यहीन जाणवो, कारणके आत्माना ओळखाण विना देहबुद्धिवाळो ते विषयोनुज ग्रहण करेछे अने विषयोने सुखरूप जाणी जे सजे छे तेओ परिणामे अत्यन्त दुःखनो अनुभव करेछे. केम के विषयो मात्र मोहथी भरेला छ ते भोगवये क्यारे पण तृप्ति नथी. त्हेमनी प्राप्तिमा, अप्राप्तिमा ने भोग सुद्धामा क्लेशनोज अनुभव थायछे, मात्र त्हेमनुं दर्शन मोहे करीने प्रिय लागेछे ने तेथी जीव ठगायछे.

आत्मज्ञान रहित नर जेह निश्चें पशुवत् जांणो तेह।
आत्मज्ञान त्यारे पामिये विषय सकल ज्यारे वांमिये॥५२॥

आत्मज्ञान विनानो पुरुष खरेखर पशु जेवो छे कारणके आहार

* मूळमां वरते ने बदले रहे छ

निद्रा, भय अने मैथुन, ए जेम पशुना विषयो छे तेम अज्ञानी जीवोना पण छे. विषय मात्रनो ज्यारे त्याग थाय एटले त्हेमा वासना न रहे त्यारे आत्मज्ञान पमायछे; पण अज्ञानी जननी वासना जती नथी, एटले ते पशु ने पशु जेवाज रहेछे.

ते नर दुरमति जाणो सही जे घट ज्ञानविवेकज नही ।
दुःखदायक जाणो संसार वलि वलि तेशूं करे विहार ॥५३॥

जे पुरुषना हृदयमा ज्ञानविवेक नथी त्हेने दुर्मति एटले विपरीत बुद्धिवाळो जाणवो, कारण के ते देहमाज ममता राखेछे, अने असत्य एवा पदार्थोमा प्रीति राखी संसारसुखनी तृष्णा राखेछे. संसार परम दुःखदायक छे तेम छता त्हेनुं स्वरूप अज्ञानी पुरुषना कळ्यामा आवतु नथी. ते एक वखत दुःखना अनुभव करेछे, क्षणवार निवृत्ति पाम्या जेवुं करेछे पण पाछो ते ने तेज पदार्थो साथे विहार करतो रहेछे, एटले चित्तवृत्ति एमाज रमती मुकेछे, एम बधुए आयुष्य दुःखानुभवमाज पूरुं थायछे.

देहादीक पदारथ येह तेशूं अतिशे करे सनेह ।
विषिलंपट नर होये जेह मनुष्य नही गरधभ तां तेह ॥ ५४॥

जे पुरुष विषयलंपट एटले कामातुर होयछे ते देह अने एवा बीजा जड ने नाशवंत पदार्थोमाज आसक्ति राखेछे; पण एटलु ते विचारतो नथी के विषयभोगथी मळतु सुख तो क्षणिक छे. एवो अज्ञानी कामान्ध पुरुष ते मनुष्य नहि पण खरू जोता गर्धव एटले

पशु छे; कारणके पशुने नथी होतां तेम एने पण विवेक, भय के लज्जा कंइ होतां नथी.

समान धर्म होये जेहनो जांणो अंश तेहनि तेहनो ।
देहनुं कारण कंइए×नथी जोज्यो वेदपुराणे कथी ॥ ५५ ॥

पशु छे; कारणके अज्ञानी विषयलंपट मनुष्य अने पशुना धर्म समानज छे. धर्मनी विशेषता मनुष्यमा होवी जोईए ते न होय तो तेहना ने पशुना अंश एकज जाणवा. देह एतो उपर उपरथी जोवा मात्र छे. मनुष्यदेह प्राप्त होवाथी कंइ मनुष्यत्व नथी, ने पशुना देहथी कंइ पशुत्व नथी. मुख्य कारण वृत्ति छे. माटे विषयवृत्तिवाळो मनुष्यदेहे पण पशुज छे ए वात सिद्ध छे. वेद अने पुराणोमां शोधी जोशो तो एज तत्त्व जडशे.

विषयतणो संकल्प करि जेह महा नरक भोगवि नर तेह।
विषयतणो संकल्पज नही मूक्तितणूं सुख भोगवि* सही
॥ ५६ ॥

जे पुरुष विषयनो संकल्प करेछे, विषयभावना उपजवा देछे, ते महानरक कहेतां अत्यन्त दुःख भोगवेछे. संकल्पज कर्मनुं कारण छे, ने कर्म ए जन्ममरणनुं कारण छे; माटे जन्ममरणना

× मूळमां फांइए छे. * मूळमां– मुक्ति सुख भोग ते सही ऐवो पाठ छे.

फेरामां नाखनार संकल्पज छे. त्हेनो जे त्याग करेछे ते मोक्षसुख अनुभवेछे. मननो धर्मज एवो छे के त्हेने न्हेतुं मूकीए त्यांसुधी ते अनेक पदार्थोनी कल्पना करेछे, अनेक विषयोनी भोगतृष्णा राखेछे, ने जीवने एवो दुःखी करी मूकेछे के एने एक क्षण पण सुखानुभव थतो नथी; माटे मनने संकल्प करतां वारवुं ए प्रथम आवश्यक छे.

स्वप्नतणा भोग मिथ्या ज्यंम मायाविलास जाणो त्यंम।
आकाशकुसुम मिथ्या मृगतोय एम हुं तुं वचन (मात्र) सउ* कोय॥ ५७॥

मनमां विषयभावना उपजेछे त्हेनुं कारण एम छे के मायानो मोहज कंइ अनिवार्य छे, एनो विलासज कंइ विलक्षण छे. ए एवा विविध रूप आगळ करेछे के मन त्हेमने जोईने अंजाइज जायछे; पण मायानो विलास तो मिथ्या छे एम अनुभव आणवो. कोना जेवो मिथ्या छे? तो कहेछे के स्वप्नभोगना जेवो. स्वप्ननो अनुभव जागृत दशामां मिथ्या छे ए दरेक जण जाणेछे. स्वप्नदशा ए केवळ अज्ञाननी छे तेम अज्ञानने लीधेज जीवने मायानो मोह वळगेछे. मायाना प्रभावेज वळी हुं, तुं, एवां भेदवचन ने समग्र संसार उपजेछे; पण ए आकाशकुसुम ने मृगजळनी पेठे मात्र नामनाज एटले मिथ्या छे. आकाशनुं फूल ने झांझवानुं पाणी ए शब्दो बोलवा मात्र छे; तेम संसार पण तेवोज जाणवो.

---

* मूळमां सर्व छे.

एम जाणि संकल्प सउ‡ तजे स्वस्वरूप निरंतर भजे।
जिवनमुक्त जोगेश्वर तेह आतमस्वरुप जाणे नर जेह ॥५८॥

आवो विवेक करी जे पुरुष संकल्प मात्रनो त्याग करेछे, एटले मननो निग्रह करी त्हेने हमेशां आत्मस्वरुपमा लीन राखेछे, ते पुरुष ग्वरेखरो जीवनमुक्त अने योगेश्वर छे एम जाणवुं; कारण के ते पोताना स्वरूपने ओळखेछे. संकल्पधर्मविनानुं मन ते शुद्ध चैतन्य–आत्मारूप छे, ने त्हेनोज प्रकाश अनुभवायछे एटले मोक्ष अने योग बधुंए सिद्ध थइ जायछे.

जे घटि केवळ वस्तु विचार ते जीवित* शोभे संसार।
अंतरगत्य बुध्य+ शीतल होय रागद्वेष हृदयाथी पोय ॥५९॥

जे पुरुषना घटमां, हृदयमां केवळ वस्तु एटले एक आत्मानोज विचार चालेछे, अर्थात् जे एक आत्मानुं सतत ध्यान धरेछे ते पुरुषनुं जीवन आ संसारमा अहो ! धन्य छे. एवा पुरुषोनी चित्त-वृत्ति शान्त होयछे ने त्हेमना हृदयमांथी रागद्वेषादि द्वंद्वभावनो त्याग थयो होयछे.

पक्षविपक्ष द्वंद परहरे साक्षीवत थको वीचरे।
विश्व एक आत्माने जोय अतिशे जीवित× शोभे सोय ॥६०॥

जे पुरुष पक्ष अने विपक्ष एवा द्वंद्वनो त्याग करेछे, आ म्हारुं

---

‡ मूळमां सर्व छे * मूळमा–जीवित्य छे. + पाठान्तर–बुद्धि.
× मूळ जीवितव्य

ने आ पारकुं एवा भेदने संघरतो नथी पण साक्षीनी पेठे व्यवहार करेछे, अने अखिल विश्व एक आत्मारूपज जूएछे त्हेनु जीवन, अहो ! धन्य धन्य छे.

जे घटि सम्यक आत्मज्ञान सदा निरंतर दृष्टि समान ।
समदृष्टी नर भणिये तेह देहउपाधि विवर्जित जेह+॥६१॥

जे पुरुषने यथार्थ आत्मज्ञान थयलुंछे, अने जेनी दृष्टि वस्तु मात्रने समभावथी जूएछे, ते पुरुषने समदर्शी कहेवो. एने देह पण आत्माथी भिन्न लागतो नथी एटले ए उपाधिथी पण ते रहित छे.

चैतन्यब्रह्म जांणे नर जेह सफळ जन्म तां भणिए तेह* ।
जेहनुं चित चिदसाथे रमें तेहनुं जन्म सर्वेने गमे ॥६२॥

जेणे चैतन्यब्रह्म कहेतां आत्माने ओळख्योछे ते पुरुषनो जन्म सफळ थयो जाणवो; जेनु चित्त चिदमांज रमेछे, चिद्रूपज बन्युंछे त्हेनु जीवन प्राणी मात्रने प्रिय लागेछे. एनो कोइ द्वेष करतुं नथी.

मरण निमित्य धरे जे शोक तेहनुं कर्त्तव्य सघलूं फोक ।
जेहनुं मूरख अंतःकरण (ते) देहनाशि कहि× आतम मरण ॥ ६३ ॥

+ पाठान्तर– समदर्शी नर भणिये तेह हेयोपादे विवर्जित जेह
* पाठान्तर –महासुखी नर भणिये तेह × पाठान्तर –करे.

आत्मा तो अमर छे; माटे मृत्युना निमित्तथी जे शोक करेछे त्हेनुं कर्म मात्र, साधन मात्र निष्फळ जाणवुं. कारणके जेनुं अंतःकरण मूर्ख छे, कहेतां जे जीव अज्ञानी छे, तेज देहना नाशथी आत्मानुं पण मरण थयुं एम कहेछे.

आकाशवत्त आत्मा निःसंग घटप्राये जांणो आ*लिंग।
मुरष देह आत्मा करि ग्रहे ज्ञानी ते ज्यम छे त्यम
ल्हे ॥ ६४ ॥

आत्मा आकाशनी पेठे सदा सर्वदा असंग छे, अने आ जे देह ते तो घटना जेवो छे. घटाकाशनुं दृष्टान्त समजावेछे के घट फूटी गयाथी जेम आकाश खंडित थतुं नथी, तेम देह पडी गयाथी आत्मानी कोइ पण अंशे हानि थती नथी. आम देह अने आत्मानो भेद छे ते विवेकथी समजी लेवानो छे. एटले देह नाशवंत ने अस्थिर छे ने आत्मा अमर अव्यय छे, ए वात जाणी लेवानी छे. पण अज्ञानी जीव देहनेज आत्मा करी मानेछे ने तेथी देहनो नाश थए आत्मा पण मरी गयो जाणी नाना प्रकारनुं कल्पान्त करेछे. ज्ञानी पुरुषोने एवो शोक थतो नथी, कारणके त्हेमने वस्तुनुं यथार्थ ज्ञान होयछे.

घटादीक पदार्थ जेह निश्चे नाशवंत तां तेह ।
अखंडीत निर्लेप आकाश इम× आत्मा अव्यय अवि-
नाश ॥ ६५ ॥

---

* मूळमा —देहलिंग छे. × पाठान्तरः-एम.

घटादि जे पदार्थो छे ते अवश्य नाशवंत छे, ज्यारे त्यारे फूटवाना छेज; पण आकाश अखंड अने निर्लेप छे, एटले घटादिना नाशथी एने कंइ बाध नथी, तेम आत्मा अव्यय अने अविनाशी छे माटे देहना मृत्युए एनु कदी पण मृत्यु थतुं नथी.

देह सदा अस्थीर प्रमाण्य देही नित्य अलेपक जाण्य ।
ए अवबोध हृदेमा राख्य अवर भाव ते सघलो नाख्य
॥ ६६ ॥

देह अस्थिर कहेता क्षणभगूर छे, एनो क्यारे नाश थशे ते कहेवाय नहि. क्षणे क्षणे एना मृत्युनी भीति छे. अने देही कहेता आत्मा नित्य एटले अमर अने लेप विनानो एटले असग छे. देहना देखीता योगथी एने कंइ संग लागतो नथी, ने देह साथे तेथी एनुं मृत्युए थतुं नथी. हे रामचद्रजी ! एज ज्ञान, विज्ञान सारी रीते मनमां संघरवुं अने बीजी बधी भावना टाळी देवी.

जन्ममरण आतमाने नथी जो ज्यो शास्त्र पुराणे कथी ।
क्वचित किंचीत कदा (चित) को काल आत्मा नहि* यौवन वृध बाल ॥ ६७ ॥

आत्माने जन्म मरण छेज नहि, क्यारे पण नथी. एना प्रमाण माटे शास्त्र पुराण जोवा होय तो जो जो. आत्माने वळी, कोइ पण

* मूळः-नोहे.

स्थाने, कोइ पण काळे, ने जरा पण अंशे, बाल्य, युवा अने वृद्धा, एवी अवस्थाओ नथी; ए सदा एकरूप अव्ययज छे, बाळ, युवान, अने वृद्ध ए सौनामा आत्मानुं रूप एक सरखुंज छे. एकज आत्मा सर्वेमा छे.

उत्पत्ति स्थिति लय ज्हेमां* होय आत्मस्वरूप निगम क्हे× सोय ।
जगत सर्व ए केवळ ब्रह्म तत्वज्ञानी जाणे मर्म ॥ ६८ ॥

जगतनी उत्पत्ति, स्थिति अने लय जेमां थायछे तेज आत्मस्वरूप एवुं वेदनु कहेवुं छे, अखिळ विश्व एक ब्रह्मरूपज छे, ब्रह्म सिवाय बीजुं कंइज नथी. आ मर्म, आ परम रहस्यनी वात, मात्र तत्वज्ञानी महात्माओज जाणेछे, बीजा ए वात जाणता नथी.

गगन तणी पेरि व्यापक जेह जन्म मरण क्यम पामे तेह ।
शुद्ध सूक्ष्म अव्यय शिवरूप अजर अमर ब्रह्म अकल स्वरूप ॥ ६९ ॥

आत्मा वळी आकाशनी पेठे सर्वत्र व्यापी रहेलो छे. वस्तुमात्रमां आत्मा छेज, ज्यां जोइए त्यां छेज, एटले एने जन्म मरण क्याथी होय ? अर्थात् नज होय. ए शुद्ध कहेता निर्मल, सूक्ष्म एटले मन, इंद्रियो ने बुद्धियी पर, अव्यय एटले अक्षर, फेरफार रहित, ने ब्रह्म

* मूळ -जेहमां × कहे

स्वरूप छे. जन्ममरण रहित आत्मब्रह्मनुं स्वरूप बुद्धिना कल्पनामां आवे एवुं नथी.

निस्य सनातन सर्वावास शुद्ध बुद्ध ते पूर्ण प्रकाश।
उत्पत्ती लय× वर्जित जेह आत्मस्वरुप जाणो जन
तेह ॥ ७० ॥

वळी आत्मा नित्य एटले भूत, वर्तमान अने भविष्य, ए त्रणे कालमा छे, सनातन एटले अनादि ने सर्वावास एटले बधीए वस्तु-ओमां रहेलो छे, निर्मल, ज्ञानस्वरूप एवो आत्मा पूर्ण ज्योतिर्मय छे, एनो प्रकाश सर्वत्र छे, जे उत्पत्ति अने लय एटले जन्ममरण रहित छे तेज आत्मस्वरूप एवो निश्चय करवो.

एक अद्वैत शान्त अविनाश जगत सर्व ते ब्रह्मप्रकाश।
भावाभाव रहित पद जेह सर्व भूतमां व्यापक तेह ॥७१॥

बधायमा एकज आत्मा छे ने ते अद्वैत छे, कारणके एना जेवुं बीजुं कंइ नथी; आत्मा शान्त एटले परिताप, दुःख रहित अर्थात् आनंद स्वरूप छे, ने आ बधुं जगत जे आपणे जोइएछीए ते एक आत्मारूपी ब्रह्मनीज लीला छे. आत्मब्रह्मथीज जगत्नो भास थायछे. सर्व भूतमां एटले प्राणीमात्रमां, वस्तुमात्रमां व्यापी रहेलो जे आत्मा, तेहे जड अने चैतन्य, क्षर अने अक्षर, एबंनेथी पर छे. माटेज तेने अक्षरातीत कहेछे.

× मूळ.—प्रलय.

आदीअंत रहित मध्यमान चिदानंद रुप ते विज्ञान ।
विश्व आतमा जाणे जेह सदा सुखी नर भणिये तेह ॥७२॥

आत्मा आदि अने अंतरहित छे. ए मध्यमान एटले वर्त्तमान स्थितिएज रहेछे, अर्थात् सदा सर्वदा छे ते छेज. काल न हतो ने आज छे एम नहि, के काल हतो ते आज नथी एम नथी, वळी भविष्ये पण नहि होय एम पण नथी; त्रिकाळे एनो नाश नथी, ए चिदानंदरूप ने ज्ञानरूप छे. अखिल विश्वज एक आत्मा छे एवो जेने अनुभव छे ते पुरुषने परम सुखी जाणवो.

मृणमय पात्र ग्रहीने पाण्य श्वपच गृहे भिक्षाश्रय जांण्य ।
मुरख जिव्यार्पे भलुंछे मरण द्वैत सहित जे अंतःकरण॥७३॥

द्वैतवासनावाळा अज्ञानी जनना जीवनथी मृत्यु बहु सारुं; कारणके एवुं जीवन तो माटीनुं शकोरूं हाथमां लइ चांडाळने घेर जइ भिक्षा मागनारना जेवुं अधम छे. अज्ञानी जन जड जे पदार्थो त्हेना विषय सुखनी भिक्षा मागेछे. ए भिक्षा चांडाळना घरनी भिक्षानी पेठे अग्राह्य छे.

विवेकविचार रहित निज ज्ञान प्रथम बुद्धि देहाभिमान ।
असत्य पदारथ सत्य करि ग्रहे शास्त्र मुरख जन तेह-
नि कहे ॥ ७४ ॥

विवेक विचार न करता जे पोतानुं स्वरूप कल्पेछे, त्हेनामां

प्रथमतः देहाभिमान उपजेछे; ते असत्य कहेतां मिथ्या पदार्थो सत्य छे एम मानी त्हेमनुं ग्रहण करेछे. आवा जनने शास्त्र मूर्ख एटले अज्ञानी वहेछे. माटे निज ज्ञान कहेतां हुं कोण छु ए ज्ञान विवेक वडे प्राप्त करवुं; एथी जड बुद्धिनो त्याग थशे.

व्याधी विषयापदनां दुःख तेह तुलाये क्यम कहु मूर्ख। मुरख जिव्यानुं दुःख छे जेह (कहो) कहि×पेरे वर्णविये तेह ॥ ७५ ॥

आ शरीर छे ते रोगथीज भरेलुं छे, ए रोगनुं अने विषयापद एटले मनने गमता विषयो भोगववाथी आवी पडती आपत्तिनुं जेवुं दुःख जीवने थायछे तेवुं हे अज्ञानी जनो! बीजा कशाथी थतु नथी. मूर्ख मनुष्यने त्हेनी जींदगीमां जे दुःख भोगववुं पडेछे त्हेनुं वर्णनज कोइ रीते थइ शके एम नथी.

भूतल मांहे ते दुःख नथी जोयुं सकल पुराणे कथी देहऽभिमान तणूं दुःख घणूं राघव सत्य सत्य हूं भणूं ॥ ७६ ॥

आ संसारमां अज्ञानी माणसोने जे दुःख पडेछे तेवुं जगतमां कंइए जोवामा आवतुं नथी. बधा पूराण ग्रंथोने संपूर्ण तपासी जोया पण एज वात सिद्ध थायछे. हे राम! अज्ञानी जनो दुःखी छे एनुं कारण ए छे के तेओ मिथ्या एवा देहनुंज हमेशां अभिमान धरावेछे.

× मूळ—केही.

आ देह ते म्हारो ने एनुं सुखदुःख तेज म्हारुं सुखदुःख, एवी तेओ भावना राखेछे, ने एवा अभिमाननुं दुःख अतिशय छे.

जन मन धरवो† तिव्र विराग‡ सर्वसंग करवो परित्याग।
देहाभिमान मनथी परहरो एकात्मभाव निरंतर धरो ॥७७॥

एम छे; माटे हे श्रोताओ ! मनमां खरेखरो वैराग्य धारण करवो, अने जरापण पदार्थोनो संग कहेतां स्पर्श थवा देवो नहि. देहनुं जे मिथ्या अभिमान जीवने थया करेछे त्हेनो मनथी त्याग करी नाखवो, देहमां जरा पण ममता बांधवी नहि, अने दृश्य पदार्थो बधां एक आत्मारूप छे एवी भावना हमेशा दृढ करवी.

ए परमारथ ए निज ज्ञान (जे)सघले करवी दृष्टि समान।
हृदये राखो ए* अभ्यास करजोडी कहि नरहरिदास ॥७८॥

सर्वत्र समदृष्टि राखवी, वस्तुमात्रमां एकात्मता अनुभववी, विश्वनेज आत्मरूप जाणवुं, ए खरेखरो परमार्थ ने आत्मज्ञान छे, माटे समदर्शन पामवानो निरंतर अभ्यास कर्या करो. एकात्म भावनाने जरा पण हृदयथी खसवा देशो नहि, भेद उपजवा देशो नहि.

इति श्रीवसिष्टसारगीतायां तीव्रवैराग्यवर्णनं नाम
प्रथम प्रकरणम् ॥

---

† मूळः—धारो ‡ वैराग्य. * पद.

प्रकरण २.

जगन्मिथ्या.

पूर्वछायो.

तिव्र वैराग्यनि वर्णव्यो (हवे) जग मिथ्याय कहेश।
मुनिवर राघवने कहे अध्यातम उपदेश ॥ १ ॥

अर्थ स्पष्ट छे असत्य पदार्थोमां राग राखवो नहि तिव्र वैराग्य धारण करवो, एवो उपदेश प्रथम प्रकरणमा कर्यो. एज विराग-भावना जगतनु मिथ्या स्वरूप यथार्थ समजाया विना दृढ थाय नहि माटे हवे ते समजावेछे.

मन उपजे जग ऊपजे (अनि) मन जातां जग जाय।
कारण सघलूं ए मन तणूं करमन शमन* उपाय ॥ २ ॥

मनउपजे छे एटले प्रवर्त्तेछे, संकल्प विकल्प करेछे, ते साथेज जगत् पण उपजेछे. मन अनेक पदार्थोनो स्पर्श अनुभवेछे त्यारेज जगत्नी प्रतीति थायछे पण मन ज्यारे शान्त थइ जायछे, संकल्प-धर्मने तजी देछे, विषयनी भावना सरखी पण करतुं नथी, त्यारे जगत् एवुं कइ भासतु नथी, कारणके संकल्पधर्म विनानु मन तो शुद्ध चिद्रूपज छे, ने रहेने तो ब्रह्म विना अन्य वस्तुनो भासज थतो नथी. आ प्रमाणे मन शान्त थवानी साथे जगत्नी भावनानो लय

* पाठान्तर शमवा

थइ जायछे, माटे जगतनु ने जगतनां सुखदुःखनुं कारण मन छे त्हेने शमाववानो प्रयत्न प्रथम करो.

पूछो पंडित जांणने (अनि) सोधो वेदपुराण ।
मन कल्पित संसार ए राखो एह प्रमाण ॥ ३ ॥

संसार ए रीते मननोज कल्पेलो छे एनुं प्रमाण जोइतुं होय तो पंडित अने ज्ञानी पुरुषोने रहस्यनी वात पूछी जूओ, वेद पुराणादि ग्रथोमा शोधन करो. सिद्धान्त एज ठरशे. माटे मन संसार कल्पेछे ने मनना लय साथे संसार भावनानो पण लय थायछे ए प्रमाण, ए तत्व, विशेषे दृढावी राखो.

साचूं साधन ते करो जेणे मंन समाय ।
अवर द्वंद सहुं परहरो कीजे तेह उपाय ॥ ४ ॥

वळी मन शान्त थइ जाय एवु साधन करो; कारणके मन जगतनुं कारण छे एटलुं जाण्याथी कंइ सिद्धि नथी. फळ मात्र पुरुषार्थमा छे, ने खरो पुरुषार्थ मनने शमावी मोक्ष प्राप्त करी लेवानो छे, बीजो बधो द्वंद, प्रपंच जवा दो ने ए एकज साधन करो.

श्रीरामोवाचः—

मुनिवर ते साधन कहो (जेणे) पामे मन आ शान्त ।
परमानंद पद पामिये भाजे भवनी भ्रान्त ॥ ५ ॥

ए प्रमाणे मनने शान्त करवानुं साधन करवानुं गुरूश्रीए बताव्युं, एटले श्रीरामचंद्रजीए प्रश्न कर्यो के हे मुनिवर ! त्यारे ए साधन ते कयुं ते कृपा करीने कहो, के जेथी परमानंदनी प्राप्ति थाय अने जन्ममरणने उपजावनार जे भ्रान्ति तेहेनुं निवारण थइ जाय. धर्मशास्त्रो अने ज्ञाताओए अनेक साधनो कह्यांछे, ने कर्मजाळ एवी फेलायलीछे के एमां खरी वात शी छे, मोक्ष प्राप्तिनुं साचुं साधन शुं छे ते जडतु नथी ने बुद्धि भेद उपजेछे.

चोपै.

भणेवसिष्ट सुणो सत्य राम ज्ञान अनूभवि रहि मन्य ठाम।
स्थीर मने संसारनिशांत्य आत्मज्ञाने भाजे भ्रांत्य ॥ ६ ॥

ए प्रश्ननो गुरूश्री उत्तर आपे छेः हे राम ! मनने ठाम राखवानुं, स्थिर करवानुं खरूं साधन तो ज्ञानअनुभव एटले अभ्यास छे. श्रीमद्भगवत्गीतामां अर्जुनने श्रीकृष्णपरमात्माए एज उत्तर आपेलोछे. मननो निग्रह करवाना साधनरूप वैराग्यने अभ्यासज कह्याछे. अहीं प्रथम प्रकरणमां तिव्र वैराग्यनी वात कही गयाछे एटले आगळनुं मात्र अभ्यासनुं साधन गुरूश्री बतावेछे. मन स्थिर थवाथी आ जे संसार एवो भास थइ आवेछे तेहेनी निवृत्ति थइ जशे, अने मन ब्रह्माकार थवाथी, चिद्रूप बनवाथी, आत्मज्ञानना लाभथी भ्रान्ति जे जन्ममरणने उपजावेछे तेहेनुं पण निवारण थशे.

कहुं दृष्टात तेहनुं सार रघुपति लेजो करी विचार ।
मंदरगिरि फरतो ज्यां रह्यो (त्यारे) क्षीर समुद्र विचीहिण थयो* ॥ ७ ॥

* मूळमां ज्या ने बदले ज्यारे ने हिण ने बदले रहित छे

एनुं गुरूश्री दृष्टान्त आपेछेः—क्षीर समुद्रनुं मंदराचलथी ज्यारे मन्थन कर्युं त्यारे ते बहुज खळमळी रह्यो हतो, पण मंथन बंध थयु, मंदराचळ फरतो स्थिर थयो ते साथे, समुद्रना विचि कहेतां मोजां पण शमी गयां. एज प्रमाणे मन ज्यां सुधी फरतु रहेछे त्यां सुधी अनेक प्रकारना क्षोभ उपजी आवेछे, ने शान्तिनो क्षण पण आवतो नथी; माटे रहेने उपर कहेला साधनथी, अभ्यासथी स्थिर, शान्त करवुं.

संसार तणो अस्तोदय* जेह निश्चे रघुपति सुणिये तेह ।
चित उपजे उपजे संसार चित समतां होये निस्तार ॥८॥

हे राम ! मन एज संसारनो उदय ने अस्त छे, ए सिद्धान्तनुं अवश्य श्रवण करो. चित–मन प्रवर्त्तवाथी संसार प्रवर्त्तेछे ने ते शमतां संसार शमी जायछे, एनो छेडोज आवी जायछे; कारणके ज्ञान दृष्टिए विश्व ते ब्रह्मरूप थायछे.

विषेवासना ज्यारे टळे त्यारे चित आफणिये गळे ।
(जो) कीजे प्राणायाम अभ्यास सम्यक वासना (तो) होये नाश ॥ ९ ॥

मन स्वभावथीज अस्थिर छे, अनेक संकल्प विकल्प करेछे, अनेक विषय भावनाओ रची काहाडेछे, मायाना विविध रंगथी मोह पामी

* सूक्ष्मो उदय अस्त छे.

च्यनता पामेछे ने वाराफरती पदार्थोना ग्रहण त्यागम मोहवश थइ कर्या करेछे. एने वश शी रीते करवुं ए शंका उठवानो समय जाणी गुरूज कहेछे के विषयवासनानो त्याग थवानी साथेज चित्त एनी मेळे गळी जशे, जड छे ते रस रूपज बनी जशे. वासनानो सपूर्ण नाश करवाने प्राणायामनो अभ्यास आदरवो.

मन:* संकल्प ते संसार निःसंकल्प मन ब्रह्माकार ।
क्षय पामे सम्यक संसार करतां आत्मा तत्त्वविचार॥१०॥

मननो संकल्प एज संसार छे, कारणके संकल्प विना संसारनो क्यारेय पण भास नथी. संकल्प विनानुं जे मन ते तो ब्रह्माकार बनी रहेछे, मन एवी संज्ञाज रहेती नथी. संसारनो फरीथी भासज न थाय, मन संकल्प विकल्प करतु बंध पडे रहेने माटे आत्मतत्त्वनो विचार कर्या करवो. आत्मा शु छे ? ते खरा विवेकथी समजी लेवुं एटले असत्य पदार्थभोगनी वासना त्यजाशे.

तत्वज्ञान निश्चे कह्युं एह रखे जन मन राखो संदेह ।
मनसंकल्प त्यजे जे † वार त्यारे क्षय पामे संसार ॥ ११ ॥

मनना संकल्पने त्यजतानी साथेज ससारनो क्षय थइ जायछे. ए परम तत्वज्ञाननी वात हुं कहुंछुं एम नक्की जाणवुं, ने कोईए हे श्रोताओ ! शंका करवी नहि.

* मूलमां मननो छे † मूलमां जेणीवार छ.

G

चित्रलखित सरप ता जेह अहिवुध्ये भय आपे तेह ।
चित्रांमण जाणे भय टले अही वुध्य ततक्षण टले॥१२॥

परम दुःखनीज प्रतीति करावनारो आ संसार ते आम मननो कल्पेलो ने मिथ्या केम कहेवाय एवी शंकानुं स्थान न रहे माटे गुरुजी शंका उठतां प्हेलांज रहेतु समाधान करेछे. हे श्रोताओ ! चित्रामणनो सर्प खरेखरज साचो सर्प छे एवी बुद्धि थाय तो भय पमायछे. पण चित्रामणनो सर्प जूठो छे, हाथनोज कहाडेलो छे, ते कंइ आवीने करडे नहि एवो विवेक थतां अहिबुद्धिनो नाश थायछे, ने आपणने ते दंश करशे एवुं भय पण दूर थायछे, माटे म्होटी वात बुद्धिनी छे. विवेकनीज प्रथम जरूर छे.

(त्यम) आत्मज्ञानि टले संसार जगत नांस्ति नास्ति निरधार ।
हुं तुं विश्व स्रव* कल्पित जाण्य (ए) केवल ज्ञान हृदयमां आण्य ॥ १३ ॥

चित्रामणनो सर्प ते जुठो छे तेम आ संसार ते मिथ्या भ्रान्तिनुंज परिणाम छे, मननी कल्पना मात्रज छे, ने खरो तो एक आत्मा छे. हुं जे आत्मा, ब्रह्म ए सिवाय बीजुं कंइज नथी, एवो विवेक थायछे त्यारे जगतनो अवश्य लय थइ जायछे. संसार, हुं, तुं एवा भेद पण मनना कल्पेला छे अर्थात् मिथ्या छे. ने आत्माज एक सत्य छे, अद्वैत छे, एवुं केवळ ज्ञान हृदयमां संघरवुं.

* मूलमा सर्व छे तेने बदले स्रव ए प्राचीन रूप मूक्युंछे.

पुरुपे मनने मोहे करी रच्यो संसार अविद्या धरी।
दुःखदायक कल्पित धी बाल (ए) प्रेते* ग्रह्या थया वहु
काल ॥ १४ ॥

पुरुपे पोताना मनना मोहथीज, अविद्याथीज आ संसारने रची कहाडेलो छे ने ते कल्पनाथी नीपजेला बुद्धिरूपी बालकने—जीवने परम दुःख देछे. संसार तो प्रेत जेवो छे, ने ते जीवने वळग्ये कंइ कालना काल थइ गयाछे; अर्थात् जन्म मरणनी परंपरामां भटकता जीवनी संसारभावना छूटती नथी. जे मोह ने अज्ञान लागेलां छे ते जतां नथी.

ब्रह्मविचार म्हा मंत्रज सार (तेणे) टळे ए प्रेततणो †
संसार ।
ते कारण जन यत्नज‡ करो, ब्रह्मविचार हृदयमा धरो
॥ १५ ॥

ए संसारप्रेततनुं निवारण करवानो महामंत्र ब्रह्मविचार छे. कारणके एनाथी संसारप्रेत जतुं रहेछे माटे हे श्रोताओ यत्न करी करीने ब्रह्म विचारनेज दृढ करो.

मायाकेरूं लक्षण एह दुःख ने सुख करि माने जेह ।
आपणपानो नाशज करे तिम तिम हर्ष हैडामां धरे॥१६॥

---

* पाठान्तर प्रत्ये छे. पण आगळना संबंधथी प्रेते एज बरोबर छे.
† मूळमा तणो नथी ‡ मूळमा जे ने बदले ते छे.

संसार छूटनो नथी तेहेनुं कारण माया छे. ए माया एवी छे के जे दुःखरूप छे तेहेने ए सुखरूप देखाडे छे ने जीव एथी फसाय छे. मिथ्या देहमां ममता थयाथी आपणपानी एटले स्वरूपनी हानि थाय छे. आम स्वरूपनी हानि करवामांज माया आनंद मानी ले छे!

मिथ्या माया केरूं रूप ते जोतां नर पडतो कूप* ।
प्रकृतिस्वभाव ए परहरि जेह ब्रह्मवेत्ता नर भणीये
तेह ॥ १७ ॥

मायानुं स्वरूप, आ एना विविध रंग मात्र मिथ्या छे; पण एनो मोह एवो अनिवार्य छे के तेहेने जोइनेज जीव अंजाइ जाय छे ने जेम अंध मनुष्य कूवामां पडी जाय छे तेम एनाथी अंजायलो जीव संसाररूपी कूवामा जइ पडे छे एटले जन्ममरणनोज अनुभव करतो रहे छे. ए संसारकूपमांथी जीवनी दृष्टि बहार नीकळवा पामती नथी, ने आत्मस्वरूपनुं क्यारे पण भान थतुं नथी. आवो प्रकृतिस्वभाव जे माया एनो त्याग करनार पुरुषनेज खरो ब्रह्मवेत्ता जाणवो.

चित्र विचित्र मायानूं रूप सुर दानव मोह्या मुनि भूप।
माया महा मदीरा जांण्य मोह्यो जीव भम्यो चहु
खाण्य ॥ १८ ॥

पण ए प्रकृति स्वभावनो त्याग करवो ते कंइ हांसी खेलनी वात नथी. एनुं स्वरूप एवुं चित्र विचित्र मोहथी भरेलुं छे के म्होटा

* मूळमां-पडे अंधकूप ॥

म्होटा देव दानव ने ऋषिमुनिओ ने राजेंद्रो ए विविध रूप जोइने मोही गयेलाछे, तो जेवा तेवा पामर जीवनी तो शी दशा ! माया वळी एक जातनी महा मदीरा छे. महा मदीरा छे, कारण के एनो निशो सहेज उतरतो नथी, ने जीव लक्ष चोराशी योनिमां भटक्या करेछे, पण शुद्धिमां क्यमे आवतो नथी.

विश्व सर्व मायामां रमे (अनि) शास्त्र भणतां पंडित भमे ।
मिथ्या मायाशूं चित लाय (ए) महदाश्चर्य सुणो रघुराय ॥ १९ ॥

मायानुं सर्वत्र साम्राज्य छे, बधुं विश्वज मायामां रमेछे. तत्त्वज्ञाननां परम गुह्यशास्त्रोनो अभ्यास करता पंडित जनो पण एनी पाछळ भम्या करेछे, ने एमनी चित्तवृत्ति मायानी पाछळज व्हेती रहेछे. माया मिथ्या छे एम जाण्या छता पण ए मनोधर्मनो त्याग थतो नथी ते हे राम ! मोटा आश्चर्यनी वात छे.

सर्वांगे व्यापक छे जेह चिदानंद पूरण ब्रह्म तेह ।
मायाये मोह्या नर जेह चैतन्यब्रह्म न जांणे तेह ॥२०॥

प्राणी मात्रमा, वस्तु मात्रमां सर्वत्र व्यापी रहेलुं जे चैतन्य ए तो सच्चिदानंद स्वरूप पूर्ण पुरुषोत्तम छे; तोपण एवा चैतन्यब्रह्मने मायाथी मोह पामेला पुरूषो ओळखता नथी ने देह एज हुं छुं एवी अज्ञानोक्ति करेछे.

ब्रह्म जांणवानो जे मर्म एक मना सुणिये ते धर्म ।
दृष्टिपदारथ दीसे जेह नाशवंत निश्चें तां तेह ॥ २१ ॥

ए चैतन्यब्रह्म जाणवानी कुंची हवे हुं बतावुं छुं ते हे राम ! एकाग्र चित्ते सामळो. प्रथम तो आ जे सर्व दृष्टिपदार्थो छे ते अवश्य नाशवंत छे, क्षणजीवी छे, नजरे पडी पडीने, मोह उपजावी उपजावी अंते क्लेश पमाडीनेज जता रहेवाना छे, एवो निर्णय करवो, ने एमने नाशवंत जाणी एमनामांथी वासना उठावी लेवी.

गांधर्व नगर मिथ्या मृगवारि एम* विश्व जांणो नरनारि।
कालत्रये विश्व ए नथी वेदशास्त्रमां †जोज्यो कथी॥ २२॥

दृष्टिपदार्थोथीज आ विश्व एवो भास थायछे. एनुं मिथ्यात्व केवुं छे ते दृष्टान्त वडे करीने हे श्रोताओ ! समजी ल्यो. गांधर्व-नगर, मृगतृष्णिका ए जेम मात्र नामनांज छे, वस्तुतः यथार्थ नथी तेम आ विश्व पण यथार्थ नथी, मिथ्या छे. विश्व काळत्रय मिथ्याज छे एवुं वेद उपनिषद आदि ग्रंथोमां कहेलुं छे. ज्ञानीने विश्व क्यारेए हतुं नाहि, हाल छे पण नाहि, ने हवे पछी थशे एवी कल्पना पण व्हेमने होती नथी. विश्व एम त्रिकाळ मिथ्या छे.

साचुं छे ते ग्रहज्यो‡ धीर भणे वसिष्ट सुणो रघुवीर ।
अति समीप छे आत्माराम ते व्यण ठालो नाहि को ठाम
॥ २३ ॥

---

* मूळमां धर्णीपेरे. † मूळमां वेदान्त शास्त्रे छे. ‡ मूळमां ग्रहज्यो.

आम त्यारे मिथ्या जे दृष्टिपदार्थो ने 'विश्व' तेमनो त्याग करी,ते विषेनी भावना कहाडी नाखी, हे धीर पुरुष! सत्य वस्तुनुंज ग्रहण करो. ए सत्य वस्तु बीजी कोइ नहि पण आपणो आ आत्मारामज छे, आत्माराम कह्यो, कारण के ते घटघट अणुपरमाणुनो व्यापी छे, एनी शोध बीजे क्यांय करवा जवानी नथी. ए अति समीप छे. ए जेटलो आपणी पासे छे तेटली पासे एके वस्तु नथी. सर्वत्र ए छे. एना विनानुं एक पण स्थान नथी.

अकल अनंत अरुप अविनाश सदासदोदित स्वयंप्रकाश। इंद्रिये ते ग्रह्यो न जाय नेति नेति श्रुति तेहनि गाय ॥ २४ ॥

ए आत्मा अकळ छे, एनुं स्वरूप बुद्धना कळयामां आवे एवुं नथीः अनंत छे, वाणीथी एनो पार पमातो नथी. वळी अविनाश छे, त्रिकाले पण एनो नाश नथी. ए सदा सर्वदा छे. एने बीजाना प्रकाशनी पण अपेक्षा नथी; कारणके ए स्वयं ज्योति छे. इंद्रियोथी एनुं ग्रहण थतुं नथी, सूक्ष्ममां सूक्ष्म बुद्धि ते पण एने ओळखवा पामती नथी ने श्रुति पण नेति नेति कहीनेज एनुं गान करेछे.

ब्रह्म जांणवानी जे युक्त ते सांभलज्यो एके चित्त । ज्यम निर्मल दर्पण होय सार (तांहां) भासे रूप ते साक्षात्कार ॥ २५ ॥

हे श्रोताओ, हे रामचंद्र! ए चैतन्यब्रह्मने जाणवानी युक्ति

मळावुं ते लक्ष्यपूर्वक सांभळो. मळ विनानुं एटले निर्मळ दर्पण होय त्हेमांज रूप मात्र जेवुं ने तेवुं एटले यथार्थ देखायछे.

नदी उपकांठे द्रुम जेह जलसहित प्रतिबिंबे तेह ।
(त्यम) आत्मा ज्ञाने ज्ञेय जांणिये* वस्तु सकल मांहां मानिये ॥ २६ ॥

वळी नदीना तट उपर उगेलां वृक्षनुं जळमां बरोबर प्रतिबिंब पडी रहेछे तेम प्रथम मलीनतानो त्याग थइ बुद्धि निर्मळ थाय त्यारे आत्मानुं दर्शन थवा पामे. आत्मानुं ओळखाण थाय एटले ज्ञेय वस्तु जे ब्रह्म ते पण ओळखाइ जायछे; कारणके ज्ञेयज्ञाननो अभेद छे. ने ब्रह्म वस्तु मात्रमां आत्मारूपे विलसे छे एम जाणवुं.

हलण चलण जेणे करि होय वस्तु अनोपम जांणो सोय ।
चैतनब्रह्म प्रकाशे जेह सर्ग† नाम तां भणिए तेह २७ ॥

सम्यग् दृष्टी (ज्ञान) ज्यारे होय त्यारे भिन्न न भासे कोय ।
(पण) देहबुधिनो करतां अध्यास आत्मज्ञान ते होये नास ॥ २८ ॥

---

* मूळमा प्रमाणीये. † सर्ग=सृष्टिनुं कारण.

असत्य सत्य वस्तु जाणी लेवानो विवेक थइ दृष्टि यथार्थ बने त्यारे वस्तु वस्तुमां समातिय विजातिय एवी जे भिन्नता मासे छे ते मासे नहि, ने सर्वत्र एकरस आत्मानोज अनुभव थाय. परतु देहबुद्धि धरवाथी आत्मज्ञाननी विस्मृति थायछे, देह ते हुं एवुं मिथ्या ज्ञान धरी बेसवाथी एमाज ममता बंधायछे, ने पोतानुं खरूं स्वरूप जे *आत्मा त्हेतुं जरा पण मान रहेतुं नथी.*

आत्मज्ञान (ज्यारें) गयूं वीसरी विपरित बुद्धि
त्यारे रुदि धरी ।
ज्यम अंधने सघळे अंधकार (त्यम) मूरप जन
देषे संसार ॥ २९ ॥

आत्मज्ञाननी विस्मृतिथी पुरुष विपरीत बुद्धिने संघरी बेसे-छे एटले असत्य देह ने पदार्थोने जीव सत्य मानेछे; दुःखरूप संसारमांज सुख प्राप्त करवानी मिथ्या प्रवृत्तिओ व्होरी लेछे ने अंध पुरूप जेम अंधकारनोज सर्वत्र अनुभव करेछे तेम अज्ञानी जीवो सर्वत्र संसार विना बीजुं कंइ देखता नथी. संसार एज सत्य छे एवी बुद्धि दृढ थइ जायछे.

नेत्रवानने वधे* प्रकाश (त्यम) ज्ञानीने नहि द्वैता-
भास ।
ज्यारे दृष्टि तमें आवरी (त्यारे) रज्जु विषे सर्पनि
मति धरी ॥ ३० ॥

---

* मूळमां सघळे छे

7

परंतु जेमने नेत्र छे ते सर्वत्र प्रकाशनोज अनुभव करेछे, तेम ज्ञानी पुरुषो अद्वैतज अनुभवेछे, द्वैतरूपी अंधकारनो भास सरखो पण थतो नथी. अंधाराने लीधे दृष्टि ढंकाइ जाय त्यारे दोरने पण सर्प मानी बेसायछे ने ए सर्पबुद्धिथी भय प्राप्त थायछे, तेम सत्य जे आत्मा, परमात्मा, त्हेने स्थाने विश्वनो भास थायछे ने त्हेने सत्य मानी लेवाथी दुःखपरंपरा उपजी आवेछे.

(ज्यम) रज्जुज्ञाने सर्पमति जाय* (त्यम) आत्म ज्ञाने प्रपंच जाय ।
आतमज्ञान रहित नर जेह पशु ताणि पेरे वर्ते तेह ॥ ३१ ॥

प्रकाश अनुभवाय ने रज्जुनुं यथार्थज्ञान थाय ते क्षणेज त्हेमां कल्पेली सर्पबुद्धिनो त्याग थायछे तेम ज्ञान पामवाथी, आत्मा ओळखायाथी प्रपंच कहेतां जगत, संसारनुं मिथ्यात्व समजाइ जाय छे, ने भयकल्पना पण सरी पडेछे; माटे आत्मज्ञान एज मुख्य वस्तु छे. आत्माना ओळखाण विनाना जीव पशुनी पेठे वर्तन करेछे. पशु जेम आहार, निद्रा, भय अने मैथुन ए चार विषयोनेज ओ-ळखे छे तेम अज्ञानी जीवो पण त्हेमनेज ओळखीने व्यवहार करेछे.

बंध मुक्तनूं लक्षण जेह निश्चें रघुपति सुणिये तेह ।
भोगभावना ज्यां लगि होय दढ बंधन जन जाणो सोय ॥ ३२ ॥ अर्थ स्पष्ट छे.

---

* मूळमां पलाय छे.

भोगभावना ज्यारे समे त्यारे मन कैवलपद रमे ।
मनमां धरवो* तीव्र विराग भोगभावनानो कर त्याग
॥ ३३ ॥

पण ए भोगबुद्धि शमी जतां, पदार्थोमांथी वासना उठ्या पछी मन कैवलपदमां रमेछे, अर्थात् ते ब्रह्मरूपज बनी जायछे. माटे तीव्र वैराग्य धारण करीने विषयवासना, भोगबुद्धि मनमांथी कहाडी नाखवी. असत्य पदार्थो क्यारे पण सुखने आपवावाळा नथी एम जाणी, त्हेमनो अनादर करी त्हेमनागार्थी वृत्ति खसेडवी.

मननी उतपति सुणिये राम ते जाणे मन छे निष्काम।
प्रकृतिपुरुपनें योगे मन मननां कल्पां त्रण्य भुवन†
॥ ३४ ॥

मन संसारनुं, बंधननुं, जन्म मरणनुं कारण छे; त्हेने निष्काम करवानुं छे माटे हे राम! एनी उत्पत्ति शाथी छे ते हवे हुं कहुंछुं ते सांभळो: प्रकति पुरुपने योगेज मन उभुं थायछे ने ते कल्पनाए करीने कंइ विश्वना विश्व घडी कहाडेछे, ने आ स्वर्ग, मृत्यु ने पाताळ ए त्रणे लोक मननाज उपजावेला छे.

त्रैलोकी मनमांहे समे मन प्रकृतिमांहे आथमे ।
प्रकृति परमपुरुषमां भले इम जांण्ये संशे स्रव टले॥

* मूळमां धरो, करो छे.
† मूळमां होय छे.

एम त्रण लोकने उपजावनार जे मन ते अंदरने अंदर शमी जाय एटले प्रकृतिमांज शान्त थइ जाय, पछि प्रकृतिनो पुरुषोत्तममां लय थाय त्यारे संशयमात्रनुं निवारण थइ जायछे.

व्यापकरुप परमात्मा जेह तांहां थकुं उपनूं मन एह । निश्चलथी चंचल मन थयूं चंचल मन निश्चलविपि रह्यूं ॥ ३६ ॥

सर्व व्यापकरूप एटले जे चेतन्यब्रह्म त्हेमांथीज मननी उत्पत्ति छे. आम ब्रह्म जे निश्चल त्हेमांथी चंचल मन थयुं छे. वळी ए चंचल मन रह्युं छ पण निश्चल ब्रह्ममांज. एनेज आशरीने ते प्रवर्तेछे.

तेहतणां द्रष्टांत इ जांण समुद्रविपे लेहेरी (प्रगट)मांन्य*। ल्हेरी समुद्रथके नहि भिन्न वस्तुविपे इंणिपर मंन ॥ ३७॥

हे राम ! एनुं एक दृष्टान्त छे ते बराबर जाणी ल्यो. समुद्र अने लहरोनुं प्रमाण देखीतु छे. लहरीथी समुद्र कंइ भिन्न नथी; कारणके समुद्रमां लहरीनी उत्पत्ति स्थिति ने लय छे तेम शुद्ध वस्तु जे केवल ब्रह्म त्हेमां मन लहरीनी पेठे रहेलुं छे.

राघव हृदि निश्चे ए जांण्य मन संकल्परहित जे जाण्य । जागृत स्वप्न दिसे आ जेह मनकल्पित जांणो विश्व एह॥३८॥

---

* मूळमा-प्रमांण्य.

ए प्रमाणे शुद्ध वस्तु ब्रह्ममां मन रहेलुंछे खरुं पण एथी एम न धारवुं के मननो संकल्पधर्म एमां रहेलोछे. ब्रह्म मन संकल्प रहित छे ए वातनो हे राम ! निश्चय करी ल्यो. वळी जाग्रत स्वप्ननी अवस्थाओ जे जीव अनुभवेछे ते मननी कल्पेली सृष्टि छे एम जाणवुं.

अत ए* मन कल्पित संसार कविवर पंडित कहे निर्धार ।
मुरख स्वप्न सत्य करि ग्रहे पंडित साक्षीवत थइ रहे ॥३९॥

माटे संसारज मननो कल्पेलो छे एम म्होटा म्होटा कवियो ने पंडितो निश्चयपूर्वक कहेछे. ज्ञानी पुरूष संसारने एक स्वप्न सरखुं ने मिथ्या मानीने साक्षीनी पेठे जगतमां व्यवहार करेछे, पण अज्ञानी जनोने मन स्वप्न सत्य छे तेम संसार पण सत्य छे, एटले ते कर्त्ता भोक्ता थइ वर्तेछे ने ए रीते बंधन पामेछे.

(ज्यम) बालक छायानें कहे प्रेत ते देखीनें थाय अचेत ।
(एम) असत्य सत्य करि मांने जेह सदा दुःख पामे नर तेह ॥ ४० ॥

न्हानुं बाळक पोतानीज छायाने जोइ ते भूत छे एम जाणी अचेत थायछे, पोतानी शुद्धि खूए छे अर्थात् भय पामेछे; तेम असत्य जे संसार तेने सत्य करी माननार पुरूष हमेशां दुःखनोज अनुभव करेछे. छायामां प्रेतबुद्धि थवी ए जेम भ्रान्ति के अज्ञान

* मूळ-अतएव.

छे, तेम संसार जे असत्य त्हेने वस्तुरूप मानी लेवानी जीवोनी बुद्धि ते पण अज्ञान छे.

भ्रांतिबुद्धि नर होये जेह मिथ्या जगने सत्य कहि तेह।
(ज्यम) अंध अलुक नव्य देखे सूर (त्यम) प्रगट ब्रह्म नत्र जाणे भूर ॥ ४१ ॥

माटे भ्रान्तिवश जीवोज असत्य जगतने सत्य मानी लेछे. उलुक सूर्यने जोइ शकतो नथी एटले एना प्रकाशनो पण एने अनुभव थतो नथी, माटे जगतमा सर्वत्र अंधकारज ते जुएछे. सूर्यनो प्रकाश प्रकट छे तेम ब्रह्म पण सर्वत्र भासमान छे; छतां अज्ञानी जीवो त्हेने ओळखता नथी, ने अंधकारने स्थाने मिथ्या संसारनीज त्हेमने प्रतीति थायछे.

(ज्यम) कनक निमित्त आभरण अनेक (ते) कनक सदा कहे ज्ञानविवेक।
(पण) अविवेकी कहे भूषण सत्य तेहनि (कोवारे) न उपजे कनकनि मत्य ॥४२॥

सूवर्णना अनेक अलंकार थायछे, पण ए जुदा जुदा घाट जोइने ज्ञानी ने विवेकी पुरूषो भेदबुद्धिने अनुभवता नथी पण बधुं सुवर्णज छे एम निश्चयपूर्वक मानेछे; सदाये मानेछे, क्यारे पण पृथक्तानो विचार आणता नथी. परंतु अज्ञानी जनोने एवो विवेक

ह्होतो नथी; अर्थात् जुदा जुदा अलंकार परिणामे एक सुवर्णनाज घाट छे एम वस्तुता तरफ जोता नथी, पण अलकारज सत्य छे एवी बुद्धि संघरेछे.

(एम) मूरख कहे सत्य ससार (अने) हृदे न आणे तत्वविचार ।
साधूने मन जग ए ब्रह्म स्वप्नांतरे न भासे भ्रम ॥४३॥

एज रीते मूर्ख एटले अज्ञानी पुरुषो संसार जे एक ब्रह्मनोज विलास छे त्हेने सत्य कहेछे पण तत्त्वनो विचार मनमा पण लावता नथी. साधु पुरुषने मन जगत् पण ब्रह्मरूपछे ने स्वप्ने पण तेओ भ्रमवायक कहाडता नथी; कारण के अभेदबुद्धि एवी एमनामां दृढ थयली होयछे.

(वली) अज्ञानीनुं लक्षण एह उंच नीच नानाबुद्धि जेह ।
पुरागार पर्वत वृक्ष नाग एणिपेरि कल्पे प्रथक विभाग
॥ ४४ ॥

वळी अज्ञानी पुरुष त्हेनी भेदमरी बुद्धिथीज ओळखाइ आवे छे, एने मन अमुक उच, अमुक नीच, आ म्हारूं, आ पारकुं, एवुं द्वैतज वसेलुं होयछे. वस्तु मानने ते स्वतत्र ने पृथक् पृथक् जूएछे. आ नगर, आ गृह, आ पर्वत , आ वृक्ष, आ नाग, एवी भेदगणनाज ते कर्या करेछे, पृथक् विभागनीज कल्पना कर्या करेछे.

दृष्टिपदारथ सत्य करि ग्रहे परमारथनी वात न लहे ।
मोहे मिथ्या करि आलाप वचनें वचनें परमें ताप
॥ ४५ ॥

वळी अज्ञानी पुरूषो दृश्य पदार्थो जे मिथ्याज छे ह्हेमने सत्य मानेछे ने सेवेछे. एथी परमार्थ जे मोक्ष ह्हेनी वात एमने सूजती नथी. असत्य पदार्थोने सत्य मानवाना मोहथी ते नाना प्रकारना शोकने वश थायछे, कंइ कंइ उद्गार कहाडेछे ने वचने वचने, क्षणे क्षणे महा परिताप पामेछे; कारणके पदार्थोमां जे रागद्वेष बंधायछे ह्हेनो क्यारे पण पार आवतो नथी, ने दु:ख परिणामी संसारनो क्लेश टळतो नथी. अज्ञानी जनोनी आवी दयापात्र स्थिति छे.

अज्ञानीने जग म्हा रोग क्षण क्षण भोगावे दुखना
ओघ ।
ज्ञानीने विश्व आनंदरूप (जे) सघले पेखे ब्रह्म
स्वरूप ॥ ४६ ॥

अज्ञानी जनोने जगत एक महारोग जेवुं छे. रोगपीडित जीवने एक क्षण पण शान्तिलाभ थतो नथी, तेम संसारी, प्राकृत जीव प्रतिक्षण दुःखनी परंपरा भोगव्या करेछे. अज्ञानीने क्यांय आनंदनी छाया सरखी भासती नथी ने संसार ह्हेने परम दु:खरूप लागेछे, महाभय उपजावेछे. ज्ञानीने जगत् आनंद रूप, परब्रह्मना

विलासरूप लागेछे; कारणके ए ज्या जूए छे त्यां ब्रह्मसिवाय अन्य एनी दृष्टि जोती नथी.

वोलूं वचन यथारथ एह अनुभवता टलि सत्र संदेह।
आवागमनतणो भय टले भिन्नभाव अंतरथो गले
॥४७॥

आ जे हुं कहुछुं ते परम सत्य छे ने एनो अनुभव करता हे राम! संदेहमात्रनो त्याग थायछे, आवागमन एटले पुन. पुनः जन्म धरवानुं ने मरवानु भय टली जायछे ने हृदयमा जे भेदभाव भरी मूकेलो होयछे ते गळी जायछे, अर्थात् समदर्शन पमायछे ने विविधरूपे भासतु विश्व एक आत्मरूप, ब्रह्मरूप भासेछे: अनेकतामा एकता अनुभवायछे.

वळी ज्ञाननी सांभल वात जेहनि ब्रह्मदर्शन साक्षात।
तेहतणो अनुभव छे जेह एकमनां सांभलज्यो तेह
॥ ४८ ॥

अर्थ स्पष्ट छे.

ज्यम निर्मल (निश्चल) व्यापक आकाश (तहां)
सहसा होये अभ्र प्रकाश।
उतपति स्थिति लय (गगन) निर्वाण्य एणीपेरि जग
ब्रह्ममां जाण्य ॥ ४९ ॥

विश्वने–जगतने ब्रह्मस्वरूप शी रीते मनाय ते कहेछे. आकाश स्वभावे निश्चल, व्यापक ने शुद्ध छे, कोइ पण स्थाने कोइ पण वस्तुमां आकाश नथी एम नथी, सर्वत्र ते व्यापेलुं छे; वळी ते निश्चल छे, क्यारे ए चलायमान थतुं नथी; शुद्ध छे, कारणके धूम्रादि मळनो एने स्पर्श थतो नथी. आवा जे आकाशमां एकाएक वादळां चडी आवेछे एमनी उत्पत्ति, स्थिति ने लय आकाशमांज थयां करेछे. ए रीते आ विश्वनो संबंध ब्रह्म साथे छे.

शुद्ध सनातन ब्रह्म अखंड (तेहनी) इच्छाये उपजे ब्रह्मंड।
वर्ते (समे) ब्रह्म महीं ब्रह्मंड निर्लेपक ब्रह्म अकल अखंड ॥ ५० ॥

ब्रह्म शुद्ध, सनातन ने अखंड छे, एनी इच्छाथीज, एना संकल्पथीज ब्रह्मांड उपजी आवेछे. ब्रह्मांड ब्रह्ममांथीज उपजेले ने पाछुं ब्रह्ममांज शमे छे. एना अस्तोदयथी ब्रह्मने कंइ लेप के खंडित पणुं प्राप्त थतुं नथी कारणके ते अकल, निर्लेप ने अखंड छे.

ज्ञानी नर तें सदा अनन्य को काले भासे नहि भिन्न।
(ज्यम) रवि थकि किरण अलग ते नही एक सूर्य ते जांणो सही ॥ ५१ ॥

ज्ञानी पुरुषमां निरंतर अनन्यता, अभेदज ठसी गयली होयछे एटले कोइ पण काळे एनी दृष्टि भेदभावने पामती नथी. ए विश्व

अने ब्रह्मने एक रूपेज जुएछे. रविथी किरण कई जुदां होता नथी पण एकरूपज होय छे. तेम ब्रह्म विश्व एकरूपज छे, एवो ज्ञानी जनोने अनुभव होयछे

(ह्यम) जगत ब्रह्मथी भिन्न न होय ज्ञानी एक स्वरूपे* जोय ।
निर्विकल्प नर भणिये जेह जगत ब्रह्ममय जांणे तेह ॥ ५२ ॥

जगत छे ते ब्रह्मथी जुदुं नथी पण ब्रह्म स्वरूप छे एवो विवेक करी ज्ञानी एकरूपे त्हेने जुएछे. जगतने जे पुरुष ब्रह्ममय जाणे त्हेने निर्विकल्प जाणवो. कारणके त्हेने मिथ्या पदार्थोनो अने विषयोनो संकल्प उपजतो नथी. आवी अभेदद्दष्टिने योगमा निर्विकल्प समाधि कहेछे.

जगत नाम मात्रे ते जाण्य केवल वस्तू बधे ‡ प्रमाण ।
नन मन राखो एह विवेक वस्त्र सकलमां सूत्रज एक ॥ ५३ ॥

जगत मात्र नामनुं छे; अर्थात् मिथ्या छे ते हे राम ! विवेकथी जाणी ल्यो ने सर्वत्र अनन्य अद्वैत ब्रह्मज संपूर्ण भरेलो छे, एवो निश्चय करो. हे श्रोताओ ! एवोज विवेक राखी रहो अने आखा

* मूळमा एक रुप ते.

‡ मूळमा सगळे छे.

वस्त्रमां एक सूत्र सिवाय बीजुं कंइ नथी एम जाणो. वस्त्र एकज सूत्रनो विस्तार छे तेम आ अखिल विश्व, अनेक ब्रह्मांडो एक ब्रह्मनुं स्वरूप छे.

पट मात्रेनो करो विचार तांणि वांणि तंतू निरधार।
पटबुद्धि सघली परहरो एक सूत्र हृदेमां (हां) धरो ॥ ५४ ॥

वस्त्रने विवेकथी जुओ तो एना ताणा वाणामां मात्र सूत्रज देखाशे. माटे पटबुद्धिनो त्याग करी एक सूत्रनोज निश्चय राखवो. अर्थात् ब्रह्मज असल स्वरूप छे ने आ विश्व पटनी पेठे विस्तार मात्र छे एवुं जाणो.

(ए) तंनमात्रा आत्मा इक रूप जगत सर्व ते ब्रह्म स्वरूप।
तंतु विना पट कहे न कोय (त्यम) ब्रह्म विना ब्रह्मांड न होय ॥ ५५ ॥

शब्द, स्पर्श, रुप, रस अने गंध ए पंचमहाभूतनी पांच तन्मात्राओ ने आत्मा कंइ भिन्न नथी, एक रूपज छे ने जगत बधुं ब्रह्म स्वरूप छे, ब्रह्मथी भिन्न नथी. तंतू विना वस्त्र बनतुं नथी तेम ब्रह्मना विना ब्रह्मांड पण उपजतुं नथी, ए निःसंदेह छे.

तंतू पट नें पटमां (हां) तंतु एक बुध्य धरे ते संत।
त्यम ब्रह्मे (ब्रह्मांड) ब्रह्मांडे ब्रह्म इम जाणे ते नर निष्कर्म ॥ ५६ ॥

तंतुओथी बनेला वस्त्रमां तंतु सिवाय बीजुं कंइ होतुं नथी. तंतु लइ लइए तो पट एवी कंइ वस्तुज रहेनी नथी माटे तंतु अने पट ते एकज छे एम एकरूपता जाणे, तंतुपटनो अभेद धारीने वर्ते रहेने संत एटले ज्ञानी कहेवो. एज रीते ब्रह्म अने ब्रह्मांड पण तंतुपटनी पेठे ओतप्रोत छे, ब्रह्माड ते ब्रह्मज छे एवुं जे पुरुष जाणेछे रहेने कर्मनो बाध नथी. ए सदाए निष्कर्म छे.

वलि दृष्टांत सुणो रघुवीर ते जोतां मन होये धीर।
(ज्यम) लहर समुद्रे उपजे शमे जलरुप थइ जल मांहे रमे ॥ ५७ ॥

हे राम ! वळी बीजुं एक दृष्टान्त कहुंछुं ते सांमळो. एथी मन धीर कहेतां स्थिर, शंकारहित थशे. समुद्रमांथीज लहरीओ उत्पन्न थायछे ने ते शमी पण रहेमांज जायछे. आम भरती ने ओट ए समुद्रनी लीला छे, जळरूप लहरीओ उत्पन्न थइ थइने जळमाज रमेछे, लीला करेछे.

(एम) अमृत सागर ब्रह्म निर्वाण्य विश्वविलास (ते) लहेरी जांण्य।
उपजि समे वर्ते ब्रह्म मांहि ब्रह्मथकी ते अलगुं न थाय ॥ ५८ ॥

एम ब्रह्मामृत ते सागरने स्थाने छे ने आ बधो विश्वविलास ते लहरीओ जेवो छे विश्व समुद्रनी लहरीनी पेठे ब्रह्ममांथीज

उपजेछे, रमेछे, वर्ते छे पण ब्रह्ममां रहीनेज, अने शमेछे एटले लय पामेछे पण ब्रह्ममां. आ उत्पत्ति, स्थिति अने लय एवी विश्वनी त्रणे अवस्थाओ एक अद्वैत ब्रह्मनी लीलाए थये जायछे; माटे विश्व ते ब्रह्मथी कयारे पण अलग एटले भिन्न थइ शकतुं नथी.

लहरी तोहे जल जांणजो (एम) विश्व सकल वस्तु जांणजो* ।
बुद्बुद फेन तरंग अनत ते जलथां भिन कहे न (को) संत ॥ ५९ ॥

वस्तु गतिए लहरीओ ते जलज छे, समुद्रज छे एम जाणवुं अने आखिल विश्व, ब्रह्मांड ते एक वस्तुज कहेता ब्रह्म छे एवो निश्चय करवो. जलमा परपोटा, फीण अने अनेक लहरीओ उपजी आवेछे, पण ज्ञानी तेहमने जलरूप कहेछे, जलथी ते भिन्न छे एवुं कहेता नथी.

(त्यम) विश्व भिन्न आत्माथूं नथी जोज्यो वेद पुराणे कथीं ।
(ते) कार्य कार्ण अभेदे जोय ब्रह्मवेता नर भणिये सोय ॥ ६० ॥

एम विवेके विश्व छे ते ब्रह्म—आत्माथी जुदुं नथी. वेद, पुराण वधाए ग्रंथो शोधी वळो पण एनी एज वात कहेली जडशे. आम

* मूळमां प्रमाणजो.

कारणकार्यनो जे अभेद जुएछे त्हेने ब्रह्मवेत्ता पुरुष कहेवो. कारणके भेददृष्टि छे त्यांसुधी ब्रह्म ओळखवामां आवतो नथी, एनी सर्वमयता अनुभवाती नथी.

(ज्यम) भाण्ड भिन्न मृतिकाथि न होय जल लहरी इक* जांणो सोय।
एक कनक कुंडल ते जांण्य विश्व आतमा एम† प्रमाण्य ॥ ६१ ॥

दृष्टान्त लई लइने सत्यवस्तुनो निर्णय करवो: माटीना वासण ते माटीथी भिन्न न कहेवाय, कारणके ए जुदा जुदा घाट ते जोवा मात्रज छे, तेम जळ लहरी अने सुवर्ण अने अलंकार ए पण एक बीजाथी भिन्न नथी. वस्तुता तरफ दृष्टि करता अभेदज छे. आवीज रीते विश्व अने आत्मामां त्रिकाळे पण भिन्नता नथी. ए उभय एक रूप छे एवो सिद्धान्त कहाडवो.

चोल्युं यथारथ वचनज एह अनुभवतां टळि सब संदेह।
आवागमनतणो भय टळे भिन्न भाव अंतरथी गळे ॥६२॥

विश्व ने आत्माना अभेदनुं म्हें जे आ तत्त्व बताव्युं ते यथार्थ छे ने एनो अनुभव पामवाथी संशय मात्रनो एटले पदे पदे जे द्वैत बुद्धि फरी आवेछे त्हेनो हे श्रोताओ ! त्याग थशे. वळी आवागमननो भय एथी जतो रहेशे, अने वस्तु वस्तुमा अज्ञानने लीधे जे भेद बुद्धि थायछे तेनो समूळगो नाश थशे. हृदयमांथी एवी द्वैत भावनाज गळी जशे.

---

* मूळमां एक † मूळमां पर्णापेरे.

पाछळना ४७ मा श्लोकनी अहि पुनरुक्ति छे.

ज्यां लगि नोहे आत्मज्ञान तां लगि मिथ्या जगतनुं भान।
आत्मज्ञान प्रगटे जिणिवार (त्यारे) जगततणो होवे निस्तार ॥ ६३ ॥

मिथ्या एवा जगतनुंज जीवने भान थ्या करेछे त्हेनुं कारण आत्मज्ञाननो अभाव छे. आत्मा ओळखाय त्या सुधी जगतनीज भावना थयां करवानी, परंतु जे क्षणे आत्मा ओळखायछे, त्हेनी एकरूपता, सर्वमयता अनुभव्यामां आवेछे तेज क्षणे जगतनी कल्पना छूटी जायछे, ने ते आत्माना एक विलासरूप जाण्यामां आवेछे.

(ज्यम)सर्पबुध्य रज्जूए जाय अही जनित भय सर्व पलाय।
रज्जुतणे अज्ञाने राम महा सर्प भासे ते ठांम ॥६४॥

अंधारामां रज्जुने सर्प मानी लेवाथी भय प्राप्त थायछे. रज्जुने रज्जुरूपे प्रकाशथी जाण्या पछी मिथ्या कल्पेली सर्पबुद्धि जती रहेछे. ज्यांसुधी रज्जुनुं अज्ञान होय, ते रज्जुरूपे ओळख्यामां न आवे त्यां सुधीज रज्जुने स्थाने महा सर्प होवानी कल्पना थायछे.

(राम) आत्माने अदर्शनि करी जगतबुध्य मन मांहे धरी।
आत्मतत्त्व विसरे संसार ते कारण कर स्वात्मविचार ॥ ६५ ॥

तेवीज रीते आत्मानु स्वरूप न ओळखवाथी मनमां जगत् बुद्धिनो उदय थायछे. आवो अज्ञानकल्पित संसार कयमे विसरतो नथी. जीव त्हेनेज सत्य मानेछे ने त्हेनाज प्रवाहमा तणायछे, एने विसारवानुं, एटुं मिथ्यात्व अनुभववानु साधन तो एक आत्मज्ञानज छे. माटे हे राम ! निरंतर पोताना आत्मानो विचार करवो.

आत्मज्ञाने जगते नथी सत्य सत्य वांणो ए कथी ।
रज्जुज्ञाने सर्प न (त्यम) होय सदा निरंतर (एक) रज्जू सोय ॥ ६६ ॥

एनी एज वात फरीथी कहेछे. आत्मज्ञान थया पछी जगत्नो भास थतो नथी, कारणके त्हेमनो अभेद जाण्यामा आवेछे. आ म्हारुं कहेवुं सत्य सत्य, परम सत्य छे, एमा शंकानुं स्थान नथी. रज्जुनुं ज्ञान थया पछी सर्पनो भास रहेतो नथी अने सदासर्वदा रज्जुनोज निश्चय रहेछे, तेम आत्मज्ञान थता विश्वकल्पनानो त्याग थइ निरंतर आत्मबुद्धिज रहेछे

आत्मज्ञाने अनसत नहीं निश्चल बुध्य रापो हृदि महीं ।
अवर सर्व ते जूठूं जांण्य आत्मतत्व ते सत्य प्रमांण्य ॥ ६७ ॥

आत्मज्ञान पाम्या पछी अनसत एटले अन्य सत्य, बीजुं कइ सत्य छे एवु भान रहेवानु नहि आम एक आत्माज सत्य छे ने बीजु बधुं मिथ्या, विलासरूप छे,एक कल्पनाज छे एवी जे भावना रहेनेज निश्चय बुद्धि कहेछे आवी बुद्धिने हृदयमा संघरी राखो. प्रपंच मात्र मिथ्या छे ने एक आमतत्वज सत्य छे एम निश्चयपूर्वक जाणवु

स्वप्नमांहि जागृत तां जेह असद्रूप राघव तां तेह ।
(एम) स्वप्नमांहि जागृतपणुं जेह मिथ्या रघुपति जाणो
तेह ॥ ६८ ॥

हे राम ! स्वप्नावस्थामां जीव जे जागृदवस्था भोगवेछे ते असत्य छे; कारणके निद्रामांथी जागी उठतां, स्वप्न जतुं रहेतां स्वप्नभोग मिथ्या छे एवो अनुभव थायछे. वास्तविक स्वप्नस्थितिमां जे जागृति भोगवायछे ने मिथ्या ने मायिक छे. नहि तो स्वप्ननो अनुभव सत्य ठरे, पण आपणे जाणीये छीए के तेम थतुं नथी. ने स्वप्नदशामां इंद्रासनने पामेलो जीव प्रातःकाळे उठी पाछो उदरनिर्वाहनी याचना करवा जायछे.

मरण अने उतपत्ति (वळी) राम जाणो जूठुं ए रुप
(ने) नाम ।
उतपति ने मृत्यू* तद्वत नास्ति पदारथ सत्तअसत्त॥६९॥

जगतमां मरण अने जन्म नाम रुपे अर्थात् जूठां छे; कारणके आत्मा अमर छे ते मरतो पण नथी ने जन्म पण लेतो नथी. मरण अने जन्म मिथ्या छे तेम असत्य पदार्थ ते मिथ्याज छे, एमने सत्य न कहेवाय; अर्थात् संसार जे कल्पना मात्र छे ते क्यारे पण सत्य नथी.

कार्य कारण सूक्ष्म स्थूल (ए) भ्रांति मात्र संसारनुं मूल।
भ्रांति बुध्य मनथी परहरो ब्रह्मभाव निरंतर धरो ॥७०॥

---

* —मरण

कारणथी कार्य अने सूक्ष्मथी स्थूलने भिन्न भिन्न मानवुं ए मात्र भ्रान्ति छे ने तेज आ संसारनुं मूळ कारण छे. वास्तविक कारणकार्यनो सूक्ष्म स्थूलनो अभेद छे. कार्य ते कारणनो ने स्थूल ते सूक्ष्मनो विकार मात्र छे एम जाणी भ्रान्तिनो अत्यन्त त्याग करवो, ने एक ब्रह्मनीज निश्चे भावना करवी एटले सर्वत्र एक अनन्य ब्रह्म सिवाय बीजुं कंइ नथी एवो अनुभव करवो.

विश्व सर्व केवल ब्रह्म जांण राघव ए अनुभव हृदि आंण्य ।
काहि नरहरि में जोयुं कथी पदारथ ब्रह्म विना कहिं नथी ॥ ७१ ॥

अर्थ स्पष्ट छेः—वस्तु गतिए एक केवळ ब्रह्मज सत्य छे एटले पदार्थ पण ब्रह्मरूपज छे. ब्रह्म न होय तो पदार्थो पण न होय.

जिवनमुक्त कहिये नर तेह सम्यग् अर्थ जांणे ए जेह ।
कर जोडी कहि नरहरिदास जिवनमुक्त रहित सत्र आश ॥ ७२ ॥

आवो अर्थ रूडे प्रकारे, पुनः संदेह न उपजे एवी रीते जे जाणेछे तेवा पुरूषने जीवनमुक्त जाणवो. जीवनमुक्त पुरुष पूर्णकाम छे एटले ब्रह्म प्राप्ति थये एनी सर्व तृष्णाओ आशाओ गळी जायछे. कारण के अनन्य लाभ थया पछी एने बीजो कोइ लाभ पामवानो रहेतो नथी.

॥ इति श्रीवसिष्टसारगीतायां जगन्मिथ्या नाम प्रकरणं द्वितीयं संपूर्ण ॥ २ ॥

प्रकरण ३.

जीवनमुक्त.

पूर्वछायो.

वैराग्य जगत् मिथ्या कह्युं [हवे] जीवनमुक्त कहुं सार।
(ए) अवस बोध हृदये धरो मूको अवर विचार ॥१॥

जीव भाव ते तां* लगे जां (हां) लगि नोहे ज्ञान।
आत्मज्ञानि हुं तूं टले होये दृष्टि समान ॥ २ ॥

आत्मज्ञान थयुं नथी, पोतानुं स्वरूप ओळखायुं नथी त्यांसुधी जीवभावना रहेछे हुं जन्ममरण, दुःखसुखनो अनुभव करनारो एक जीव छु एवी पुरुषने सत्यज्ञानना अभावे भावना थायछे पण आत्मज्ञान थयानी साथे हुं तुं एवो स्वपर भेद टळी जायछे, ने सर्वमां समदृष्टि थायछे.

हुं तूं टळतां हरि रहे (अने) हरि ते पूरण ब्रह्म।
कर्म न लागे ब्रह्मनें समजो समजूं मर्म ॥ ३ ॥

हुं, तुं एवी द्वैतभावना, भेदबुद्धि टळी जतां एकला आत्मानोज विचार रहेछे ने ए आत्मा ते पूर्ण पुरुषोत्तम छे. आत्माने ओळख्या

* मूळमां तहां

पछी जन्ममरणने आपवावाळुं, सुखदु:खनो अनुभव करावनारुं कर्म बाध करी शकतुं नथी. पछी कर्म कोने बाधे ? आत्माने, ब्रह्मने कर्मनो स्पर्श सरखो नथी. हे विवेकी जनो ! आ परमरहस्य, मर्मनी वात यथार्थ समजी ल्यो

मर्म न समझे मूलगो कथनी कथे अपार। ते नर पांमे पार नहि भुल्या भमे संसार ॥ ४ ॥

ब्रह्मने–आत्माने कर्मनो बाध नथी ए जे मर्म त्हेने जे पुरुष समजी शकता नथी, पण मिथ्या वाद कर्या करेछे ते आ जन्ममरण-रूपी संसारनो, भवसागरनो पार पामता नथी. भ्रान्तिवश थयला एवा पुरुषो तो संसारमा ने संसारमांज भम्या–भटक्या करेछे, जन्ममरणनी एनी ए यातना पुन: पुन: भोगवेछे.

भ्रम न टळे संसारनो; अनुभवि जो ब्रह्मज्ञान। ज्ञाने ज्ञेयज (भाई) जांणिये ज्ञाने बुध्य समान ॥ ५ ॥

संसार मिथ्या छता ते सत्य छे एवी जे भ्रान्तिबुद्धि छे ते वयमे टळती नथी; पण जो ब्रह्मज्ञाननो अनुभव पमाय एटले आत्मस्वरूपनो यथार्थ अनुभव थाय तोज ए बुद्धि टळेछे. आत्माने ब्रह्मने ओळखवानुं बीजुं एके साधन नथी. आत्माथीज आत्मा ओळखायछे, ज्ञानथीज ज्ञेयने पमायछे ने ज्ञानथीज समबुद्धिनो उदय थायछे. आत्मा भूतमात्रमा एकज छे, सर्वत्र एकज आत्मा प्रकाशेछे एवो निश्चय थया पछी हुं तुं, म्हारुं, पारकुं, प्रिय, अप्रिय एवा भेदनो विलय थायछे. एम भेदविलय थाय त्यारेज समदृष्टि थइ जाणवी.

श्रीरामोवाचः—

ते अनुभव सद्गुरु कहो (जेणे) जीवभाव ते जाय ।
बंधन छूटे भवतणां तन मन शीतल थाय ॥ ६ ॥

हवे श्रीरामचंद्रजी प्रश्न पूछेछेः—हे सद्गुरु ! आत्माने ओळखी सम्यग्दृष्टि करवानी वात आपे कही ते यथार्थ छे पण वच्चे जे आ जीवभाव उभो थयोछे तेहेनुं शीरीते निवारण थाय ? एवो कोइ अनुभव बतावो के हुं जीव छुं, सुखीदुःखी छुं, बंधायलोछुं, जन्ममरणने वश छुं, एवी भावनानो त्याग थाय, ने आ संसारनुं बंधन छूटी जाय. वळी जीवभाव छे त्यासुधी तन मन तपेळांज रहेछे, आधिव्याधिने उपाधिओनो ताप असह्य थई पडेछे, ए ताप शान्त थइ जाय ने शीतलता, शान्तिसुख अनुभवाय एवुं कंइ रहस्य कही बतावो.

श्रीवसिष्ठोवाचः—

जिवन्मुक्ततणूं फल एह, तत्त्वज्ञान पामीजे जेह ।
कीजे तेह तणो ऊपाय भणे वसिष्ट सुणो रघुराय ॥ ७ ॥

अर्थ स्पष्ट छे.

तत्त्वज्ञान तां तेहनुं नाम, (जे) ब्रह्मविना ठालो नहि ठाम । परमात्मा सवले जांणिये (एम) बोध हृदेमांहां आणिये ॥ ८ ॥

यथार्थ तत्त्वज्ञान क्यारे थयुं कहेवाय ? तो कहेछे के ब्रह्म

विना, आत्मा विना एक पण जग्या खाली नथी. एकरस ब्रह्म, वस्तु मात्रमां, स्थावर जंगम सर्वमा, एक सरखो भरेलो छे एवी दृष्टि थाय त्यारेज तत्त्वज्ञान पमायु कहेवाय. माटे परमात्मा सर्वत्रछे एवो अनुभव करवो ने एज अनुभवनु वारवार हृदयमा परिशीलन करवु.

ज्यम पावकिं तृण प्रज्वले (त्यम) तत्वज्ञानिं आशा स्रव चले । त्रित्रष्ण मन हृदि केवलज्ञान तेहनुं नांम अखंडित ध्यान ॥ ९ ॥

अग्निथी तृणनो नाश थइ जायछे तेम तत्त्वज्ञानथी संसारमांथी सुख प्राप्त करवानी जूठी आशा तृष्णानो नाश थायछे; ते वळी भस्मज थायछे, फरी तेहेमनु उत्थान थतु नथी. मन ज्यारे तृष्णा-रहित थायछे त्यारे केवळ ज्ञान कहेता आत्मज्ञाननो उदय थाय छे. ए ज्ञाननेज अखंडित एटले निर्विकल्प ध्यान ने समाधि कहेछे.

(राघव)सत्य समाधी एने जाण्य अवर नाम मात्रे परमांण्य। तत्त्वज्ञान तणो नहि गंध मनमां विषय वसे गुणद्वंद ॥१०॥

खरी समाधि ए केवळ ज्ञानज छे ने बीजां बधां ध्यान ने समाधिओ ए तो नामना छे; कारण के तत्त्वज्ञान विनानी, संकल्प विकल्पधर्मवाळी समाधि केम कहेवाय ? एमा तत्त्वज्ञाननी छाया सरखीए होती नथी अने मनमा विषयवासना ने त्रिगुणात्मक प्रपंच स्फूर्या करेछे.

मौन धरी एकान्तज रहे शास्त्र दंभ तां तेहनि कहे । दंभभाव सघलो परहरो (अने) तत्त्वज्ञान हृदयामां [हां] धरो ॥११॥

एकलुं मौन धारण करवाथी के एकान्तमां जइ बेसवाथी कंइ समाधि लाभ थतो नथी. योगशास्त्रमां एवा ध्यानने मात्र दंभज कहेछे. माटे जो कार्य सिद्ध करवुं होय तो एवो दंभ मूकी दो अने खरेखरा तत्त्वज्ञाननेज हृदयमा संघरो.

जाण्य जगत ए ब्रह्माकार ए जाण्ये होये भवपार।
शान्तिस्वभाव हृदयमां (हां) ग्रहो निश्चल थइ परब्रह्म विषि रहो ॥ १२॥

हे राम ! आ जगत छे ते ब्रह्मरूप छे एम जाणो. ए ज्ञानानुभवथी संसाररूपी समुद्रनो पार आवी जशे, जन्म मरण मटशे. वळी सदाये शान्ति राखवी, हृदयने जरा पण परिताप पामवा देवां नहि. ससारना सुखदुःखनो विचार करी जरा पण क्लेश पामवो नहि ने परमशान्त थइ निश्चल थइ रहेवुं, वृत्तिने क्षण पण चळवा न देवी ने द्वैतभावना मनमा पण आववा न देवी. एम निश्चल थइने पछी परमात्मानो योग करवो, परब्रह्म विषेज रहेवुं अर्थात् परब्रह्मरूपज थइ रहेवुं.

ब्रह्मकवच होय जेहनि अंग दुःख एके नावे ते संग।
सदा सुखी नर भणिये तेह* ब्रह्मविचार हृदे धरि जेह ॥ १३ ॥

ब्रह्मज्ञानरूपी कवच जेणे पहेरेलुं छे तेहने एक पण दुःखनो स्पर्श थइ शकतो नथी, ब्रह्मविचारमा तल्लीन थयलो पुरुष सदाए

* मूळ तेहने.

सुखीज छे एम जाणवुं; एने दुःख शुं होय ? मिथ्या संसारना भोगमा एवा पुरुषने लेश पण वासना होती नथी, कोइ लाभ पामवानी स्पृहा होती नथी, कारणके ब्रह्मरूप बन्या पछी ते पूर्णकाम बनेलो होयछे; एथी एने परिताप, क्लेश पामवानुं कदी होतुं नथी, पण एतो निरंतर परमानंदनो अनुभव करेछे, एथी बीजुं सुख कयुं होय ?

ते योगी परमेश्वर ब्रह्म जे घट केवल आतमधर्म ।
(जेहनुं) अंतःकरण अति शीतल होय परब्रह्म (पद) अवलंबे सोय ॥ १४ ॥

जेना घटमां केवल एक आत्मानोज धर्म प्रवर्तेछे, जेना मनोधर्म अने वासनाओनो अत्यन्त त्याग थयो होयछे, ते पुरुषने परम योगी कहेवो. परमेश्वर ने ब्रह्म पण तेज छे; कारण के जीवनुं अज्ञान टळी जइ ते ब्रह्मरूप थया पछी जीवशिवनो भेद रहेतो नथी. आम परब्रह्मने आशरीने जे पुरुष रहेछे तेहना अंतःकरणमा परम शान्ति वर्तेछे; एने कोइ जातनो लोभ, स्पृहा के क्लेश होतांज नथी.

निरालंब* पद सेवे जेह जिवनमुक्त नर भणिये तेह ।
केवल ब्रह्मशुं जेहनुं चित्त ते जोगी कहिये मोहंत ॥ १५ ॥

आम परमात्माने आशरीने रहेलो ने संसारना आश्रय रहित थएलो पुरुषज जीवनमुक्त छे; कारणके ए सदाए निरालंबपद सेव्या

* निरालंब एटले कोइना कइ पण आश्रयरहित.

करेछे, स्वतंत्र वर्तेछे. वळी केवल ब्रह्ममां एकाग्रता पामेलो पुरुष तेज खरो योगी ने महंत छे. बीजा बधा तो जूठा वेष छे. संसारमां अनेक प्रकारना दंभप्रपंच वर्तेछे तेवो ए पण दंभ प्रपंच छे.

(हवे) ब्रह्म ब्रह्मवेत्ता सुण्य राम ते जांणे लहिये निजधाम ।
एकमनां सांभलजो तात ब्रह्म ब्रह्मवेत्तानी वात ॥१६॥

हवे हे राम ! ब्रह्म अने ब्रह्मविद कोने कहीए ते सांभळो. ए रहस्य जाण्याथी निजधामनी प्राप्ति थायछे एटले ब्रह्मपदज पमायछे, कैवल्य मोक्ष मळेछे. माटे ब्रह्म अने ब्रह्मवेत्तानी वात कहुंछुं ते एक मने, कोईपण विषयमा वृत्ति जवा न देतां सामळो.

उपनीषदनुं तत्वज* ब्रह्म प्रकृति पुरुष रहित गुणकर्म ।
नेति नेति करता जे रहे मानुभाव ब्रह्म तेहनि कहे
॥ १७ ॥

उपनिषदनो वधो विस्तार छे एमांथी साररूप-तत्त्व एक ब्रह्म छे. ब्रह्म एटले प्रकृतिपुरुषने गुणकर्मनो त्रिकाळे बाध नथी एटले संसारनी कल्पनाथी, त्हेना निर्वाहथी के त्हेना संहारथी, एने कंइ बंधन प्राप्त थतुं नथी. ब्रह्मनुं स्वरूप वाणीए करीने बाधी शकातुं नथी; परंतु ब्रह्म नथी एवा पदार्थोनो त्याग करतां जे रहे तेज ब्रह्म एवुं महा पुरुषोनुं कहेवुं छे.

ब्रह्मभाव जेहनि मन होय ब्रह्मवेत्ता नर भणिये

* मूळमां– ते छे

सोय । हरख शोक विवर्जित संग संसारदुःख स्पर्षे नहि अंग ॥ १८ ॥

आ प्रकारे जे पुरुष ब्रह्मभाव उपजावी त्हेनाज ध्यानमा सदा रत रहेछे त्हेने ब्रह्मविद एटले ब्रह्मने जाणवावाळो कहेवो. ब्रह्मविदने कदापि हर्षशोक थतो नथी ने एने कोइ मायिक वस्तुनो संगम लागतो नथी. संगज अनर्थनुं मूळ छे, श्रीमद्भगवद्गीतामा श्री कृष्ण परमात्माए श्रीमुखे कह्युंछे के संगात् संजायते काम वगेरे. ब्रह्मविदने संग नथी, संसारना दुःखनो त्हेने स्पर्श पण थतो नथी. एम ब्रह्मविद परम सुखी छे.

अन्य सर्व कहिये दुःखवान तेहनि प्रकृति प्रपंचनुं ध्यांन । ब्रह्मवेताने दुःख ते नथी जोज्यो वेद उपनिषद कथी ॥ १९ ॥

ब्रह्मविद सिवायना बीजा बधा मनुष्यो दुःखी छे,कारणके त्हेमने प्रकृतिप्रपंच एटले संसारनुं-माया कार्यनुज रात्रि दिवस ध्यान होयछे; संसार ने संसारना विषयोने मूकी त्हेमने बीजो विचार आवतो नथी. ब्रह्मविदने संसार जेवु कइ होतुं नथी, अने ते साक्षीनी पेठेज जगतनो व्यवहार करेछे, एम निष्कामवृत्तिने लीधे एने संसार जनित दुःख थतु नथी. आ वातने वेद उपनिषद आदि ग्रंथोनो संपूर्ण आधार छे

दोष वेगला साधुथि रहे वसिष्ट राघवनें सत्य कहे ।

कामादिक (दोष) भय जिवने* जेह ब्रह्मविदने आश्रय नहि तेह ॥ २० ॥

गुरू वसिष्ट श्री रामचंद्रजीने कहेछे के हे भाइ ! ब्रह्मविद साधुजनने कर्मदोष लागतो नथी कारणके ते कर्मनो कर्ता नथी, ने कर्मफलनी त्हेने स्पृहा होती नथी. काम कहेतां राग, स्पृहा, तृष्णा, एमायी बधा प्रपंचो प्रवर्तेछे ने ते जीवने, कामवश पुरूषने महाभय पमाडेछे. ब्रह्मविद निष्काम छे एटले एने एवुं भय लागतुं नथी.

जे वन पर्वत लागी लाय मृग पंखी (जिवतां) हाथी दूर पलाय । लालच लागा रहे जे कोय निश्चे मरण ते पामे सोय ॥ २१ ॥

कोइ वन के पर्वत उपर दव लागे त्यारे पशु पंखी, हस्ति आदि पोतानो देह बचाववाने दूर नाशी जायछे; पण सुखनी लालचे जे, पशु पंखी त्या दव लाग्या छता पण पड्यां रहे त्हेमनुं अवश्य मृत्यु थाय, त्हेनी पेठे आ संसारनुं छे. संसारमां पदेपदे दुःखानुभव थायछे तेम छता त्हेमांथीज सुख प्राप्त करवानी तृष्णाए जीव एमा रच्या पच्या रहेछे, तो अवश्य त्हेमनो नाश थवानो ने वैराग्यवान पुरुषोज मात्र उगरवाना.

(एम) ब्रह्मविदने दोषाश्रय नही आश्रे तो लय पांमे

---

* जिवने ए शब्द बहीं उमेर्यो छे.

सही। वळिवळि राघव कहुं निर्धार ब्रह्मवीदने नहि संसार ॥ २१ ॥

ब्रह्मवेत्ताने क्यारे पण दोष पापनो स्पर्श के संग नथी, कारणके ते नष्ट थइ जायछे. जीवो जे दृष्टिए संसार जूएछे ते दृष्टिए ब्रह्मविदो जोता नथी. एमने सर्वत्र ब्रह्मदृष्टि होयछे एटले संसार कल्पनाज एमने थती नथी. विश्वब्रह्मनी एकरूपता जाण्या पछी ब्रह्मविदो संसारने जूदीज दृष्टिए जूएछे, माटे त्हेमने दुःखरूप ससार नथी.

वळि विशेष 'संतोनो सुणो ब्रह्मविदनो माहिमा छे घणो। संतप्रति (दुष्ट) आचरतो पाप (तोहे) तो उपजे मनमां (हां) संताप ॥ २३ ॥

संसारना इतर मनुष्य अने साधु पुरूषोमां बहु अतर छे ते हे राम! हवे श्रवण करो. ब्रह्मवेत्ताओनो माहिमा बहु छे अर्थात् जेटलु एमनुं गुणगान न थाय तेटलुं ओछुं. संत पुरुषो एवा तो क्षमावान ने शान्त होयछे के कोइ दुष्ट मनुष्य त्हेमनो अपराध करे तोपण तेथी ते क्रोधने वश यता नथी, त्हेमना मनमा संताप थतो नथी.

अनुकंपा तेहनि करि घणी राघव ए गति साधूतणी। असंतनि पेरे संत न करे संत सदाय क्षमा मन धरे ॥ २४ ॥

अपराध करनार मनुष्यनी उलटी तेओ दया आणेछे के अरेरे!

ए बिचारा अज्ञानी छे. आवी रीते साधुपुरुषो दोष, अपराधनो निर्वाह करी लेछे. ए असंत कहेतां दुष्ट जीवोनी पेठे क्रोधः आणता नथी, अपराधी जनोनी साथे लडवा जता नथी, मनमां वैरबुद्धि उपजवा देता नथी; पण सदाए क्षमा राखी तेओ वर्ते छे, एटले तेओने सदा ए परमानंद छे; केम के एमनी शान्तिनो क्यारेए भंग थतो नथी.

असंत पर उपर धरि क्रोध (अने) वैरी जांणी करे विरोध । संततणूं मन शीतल सदा ते माटे अंतर्गत मुदा ॥ २५ ॥

असंत एटले प्राकृत जीव पारका माणसने पोतानो अपराधी जाणी त्हेना उपर गुस्से थायछे, त्हेनी साथे कलह करे ने एटलाथी पण शान्त न थतां मनमां वैरबुद्धि राखेछे नेत्हेनाथी विरोध माडेछे. वळी प्राकृत जीव मनमां एम परिताप पामेछे के अरे! हुं ए अपराधनुं क्यारे सारुं वाळुं ? आवा परितापवाळा, वैरबुद्धिवाळा जीवने जराए शान्तिलाभ नथी. संतपुरुषो परिताप पामता नथी, वैरबुद्धिने ओळखता नथी, माटे एमनुं मन सदाए शीतल, शान्त होयछे ने ते माटेज त्हेमनी अंतरवृत्ति सदाए आनंदमां होयछे.

मने ते निज कर्म विपाक (पण) विषमभाव* नहि कर्म पाक । (जे) शत्रु मित्र करि जांणे राम । साधु पुरुष तां तेहनुं नाम ॥ २६ ॥

---

* मूळमा विसमभाव नहि मन कर्म पाक.

संसारमां जे जे योग घडी आवे ते पोताना कर्मनुंज परिणाम छे, एमां बीजा कोईनो कंइ संबंध नथी, एम मानी साधुपुरुषो विषम भावने पामता नथी; पण शत्रुनी पेठे वर्तता जनोने पण तेओ पोतानुं प्रिय करनारा एटले मित्र जेवा मानेछे. आवी रीते विषयबुद्धिने वश न थता जे संसारनां ने दुष्ट जनोनां कर्मनो निर्वाह करी छे त्हेनेज साधु पुरुष कहेवाय.

कर्मबंध साधूने नहीं जेहनि बुध्य शीतलता सही ।
असाधुने कर्म बंधन करे (जो) रागद्वेष हृदयमां (हां) धरे ॥ २७ ॥

साधु पुरुषने कर्मनुं बंधन नथी; माटे एने जगतना व्यवहारमां प्रवर्तेछे जोइ एम न मानवुं के ए बधां प्रवृत्तिकर्मनुं एने इतर मनुष्योनी पेठे बंधन नडशे. रागद्वेष विनानो एनो व्यवहार मात्र दृश्य संसारना निर्वाहरूप छे. नाहि तो एनी बुद्धि तो सदाये सात्त्विक रहेछे, रजो ने तमो गुणनुं ग्रहण करती नथी एटले एने वास्तविक कर्म के प्रवृत्ति नथी. रागद्वेषथी थतां कर्मनुं बंधन छे ने एवां कर्म असाधु एटले संसारी पुरुषो आदरेछे, माटे बंधन पण तेओज पामेछे.

तमे दृष्टि आवरि जेहनी असर्प विषे सर्पबुद्धि तेहनी ।
सम्यक्पिरि उद्योत न होय तां(हां) लगि भय ते पामे सोय ॥ २८ ॥

अंधाराने लीधे जे पुरुष देखी शकतो नथी ने वस्तुनिर्णय तेथी करी शकतो नथी ते असर्पमा पण सर्पबुद्धि करेछे, एटले रज्जु कंइ सर्प नथी पण यथार्थ द्दष्टि विना ने एने सर्पज धारी बेसेछे. सर्पबुद्धि थतांज व्हेनामां भय प्रवेश करेछे, ने ते ज्यासुधी बरोबर प्रकाश न थाय ने रज्जु सर्पनो निश्चय न थाय त्यां सुधी कायम रहेछे. अंधकार ए भ्रान्तिनुं कारण छे ने प्रकाश ए भ्रान्तिने निवारण करेछे तेम संसारपरत्वे अज्ञान ज्ञाननुं धारी लेवुं.

(एम) आतमज्ञान (ज्यारे) गयूं वीसरी (त्यारे) अखिल मोह बुध्य हैये धरी। मोहकार्य कामादिक जेह क्षण क्षण जिवने दुःख दे तेह ॥ २९ ॥

आतमज्ञान विसरी जायछे, एटले पोतानुं स्वरूपज ज्यारे भूली बेसायछे त्यारे हृदयमां सर्वथा मोहबुद्धि असत्य वस्तुने सत्य मनावेछे, ने व्हेमां रागादि उत्पन्न करेछे, काम–राग ए बधा अनर्थोनुं, दुःखनु कारण छे ते उपजी आव्याथी जीव क्षणे क्षणे दुःखानुभव करेछे. कामनी तृप्ति विषयभोगथी क्यमे थती नथी: उलटो ते प्रदीप्त थायछे ने वस्तुने प्रियाप्रिय मानी परिताप उपजावेछे.

(ज्यम) रज्जुज्ञाने सर्पमति जाय (त्यम) आतमज्ञाने मोह (कार्य) पलाय । अविद्वानानि देहनिसान विद्वान करे निज आतमज्ञान* ॥ ३०॥

---

* पाठान्तर–विद्वानने एक आतमज्ञान.

माटे रज्जुनुं रज्जुरूपे ज्ञान थाय त्यारेज भ्रान्तिवश थइ सर्प-बुद्धि धारण करेली ते निवृत्त थइ जायछे, तेम आत्मानु पीछाण थये संसारनो, मिथ्या पदार्थोनो, मायानो मोह खसीजायछे, विद्वान होयछे ते तो सदाए आत्मज्ञाननोज अनुभव लीधे जायछे, ए अमर आत्माने ओळखीनेज व्यवहरेछे, पण मूर्ख कहेता अज्ञानी जनोनी दृष्टि सदाये देह उपरज रहेछे, एनामाज ममता बांधी रहेछे.

(ज्यम) स्फाटिकमणि तेवो विद्वान ज्यां (हा) जेह-वुं तां (हां) तेहवुं मान । स्फटिक रक्त पीळो नव होय विद्वान कर्म फळे नव मोह्य ॥ ३१ ॥

ज्ञानी पुरुष ते स्फटिकमणि जेवो छेःएनो ज जे पदार्थोनी साथे योग थायछे ते ते पदार्थो रहेमा बराबर देखायछे, परंतु राती के पीळी वस्तुना योगथी, प्रतिबिंबथी स्फटिक मणिनी शुभ्रतामा कंइ फेरफार थतो नथी. एज रीते ज्ञानी जनो पदार्थोना देखीता योगथी, एमनी प्रवृत्तिओथी, कर्मफळनो मोह धरता नथी.

शुद्ध स्फटिक मणिने जांणज्यो तत्वज्ञानी इंम जांणज्यो । ज्ञानी तत्व विषे ते रहे राघव ए अनुभव हृदि ग्रहे ॥ ३२ ॥

स्फटिकमणि स्वत शुद्ध छे ते कदापिमळनुं ग्रहण करतो नथी. तत्वज्ञानी जननु पण एमज जाणी लेवुं. हे राम ! ज्ञानी जन तत्व-विचारमाज हमेशा मग्न होयछे ने ज्ञानानुभवनोज तेओ संग्रह करेछे.

वळी विद्वानतणी सुंण वात जेणे जांण्ये (पर) ब्रह्म साक्षात । (ते) बाह्येंद्रिय विषे सव ग्रहे (पण) ज्ञानी आत्मस्वरूप विषि रहे ॥ ३३ ॥

वळी ब्रह्मनो साक्षात्कार थयेलो एवा विद्वान पुरुषोनी स्थिति सांभळो. ते बाह्येंद्रियथी वस्तुओनुं ग्रहण करेछे ने आश्रमव्यवस्था लोककल्याणनी बुद्धिए यथार्थ पाळेछे. पण खरूं जोतां तो तेओ आत्मस्वरूपने ओळखीने त्हेमांज लीन रहेछे, प्रकृतिधर्मने कदापि वश थता नथी.

(ज्यम) निद्रायुक्त होये नर जेह अवर प्रपंच न देखे तेह । सुषुप्तिनें भोगवि जे जंन रघुपति तेह न जांणे अन्य ॥ ३४ ॥

निद्रावश थयला पुरुषनी दृष्टिएथी क्षणवार आ दृश्य संसार दूर रहेछे, ने त्हेमां पण जो त्हेनी निद्रा गाढ होय तो तो हे राम! त्हेने कशानुं पण मान रहेतुं नथी, ने संसार कलहने मूली ते एटली-वार शान्ति सुख पामेछे.

(एम) ब्रह्मस्वरूप विषे जे रह्यो संसार (जनित) ताप ते नरनो* गयो । निद्रावंतनि पेरे जेह ब्रह्मानंद सुख भोगवि तेह ॥ ३५ ॥

एम ब्रह्मस्वरूपमां लीन थयलो पुरुष संसारना परितापमांथी

* मूळमां ते नरने बदले तेहनो छे.

मुक्त थयोछे एम जाणवुं; कारणके गाढ निद्रा भोगवता मनुष्यनी पेठे ते ब्रह्मस्वरूपने ओळख्याथी जे आनद उल्लास थायछे त्हेनु सुख भोगवेछे.

एणि पेरि कर्म करे जे कोय कर्मबंध तेहनि नव होय।
चितनी चितवण सव परहरे ब्रह्मभाव निश्चल हृदि धरे ॥ ३६ ॥

ए रीते एटले ब्रह्मथीज तद्रूप बनीने जे पुरुष कर्म करेछे, त्हेने कर्मनुं बंधन नथी. हे राम! कर्मनो त्याग ते कंइ नैष्कर्म्य नथी. पण कर्मनी वासनानो त्याग एज नैष्कर्म्य छे. ब्रह्मरूप थएला पुरुषोने कर्मफळनी वासना होनी नथी एटले एमना सर्व कर्म निष्कर्म छे, माटेज बंधन पण नथी. ब्रह्मरूप ज्ञानी पुरुषो चित्तनी चितवण करता नथी, संकल्प विकल्प उपजवा देता नथी, पण केवळ एक ब्रह्मभावनेज स्थिर शान्त थइने संघरेछे, ब्रह्मनीज समाधि पामेछे.

जगत सर्व स्वप्नावत जोय हूं तुं भाव हृदेथी षोय।
यदपी कर्म (तो) करे साक्षात तोहि कर्मबंधन नहि तात ॥ ३७ ॥

ज्ञानीने कर्मबधन नथी त्हेनुं बीजुं पण कारण छे. ज्ञानी आ जगतने स्वप्न जेवुं एटले क्षणिक–मिथ्या जाणेछे. अने हुं तुं एवो भेदभाव तेओ हृदयथी तजीने बेठा होयछे. एम समान, सर्वमय आत्मबुद्धिवाळा ते साक्षात कर्म आचरे, लोकाचार करे तो पण हे भाई! त्हेमने कर्मनुं बंधन नथी.

हरख शोक पंडितनें नहीं जेणे वस्तु जथारथ लही। अद्य मरण आवे (तो) नहिं दुःख कल्पांते नावे (तो) नहि सूख ॥ ३८ ॥

पंडित कहेतां ज्ञानीने कोई दृश्य लाभथी हर्ष नथी तेम कोई पदार्थनी दृश्य हानिथी शोक पण नथी; कारणके वस्तुतः लाभ हानि एवु कंइ छेज नहि, माटे ज्ञानी जन वस्तुस्वरूपने बराबर ओळखेछे. संसारमां जे विषय के वस्तुलाभथी आपणे राजी थइए छीए,महा हर्ष पामीए छीए, त्हेनीज पाछी हानि थए परम खेद उपजी आवेछे. मांटे लाभहानि मानवांज नहि. आज मृत्यु थाय तो पण ज्ञानीने त्हेतुं दुःख नथी, ने आखा कल्पना कल्प वही जाय तो पण मृत्यु न आवे तो तेथी ते कंइ सुख मानतो नथी. कारणके ज्ञानदृष्टिए मृत्युज नथी.

कलंक राहित ज्ञानी नर होय को काले नव्य पामे म्होय। जदपि हेम कर्दे* परडाय तोहे हेमपणूं नव जाय ॥ ३९ ॥

शुभा शुभ नही तेहने ब्रह्मज्ञान हृदे (होय) जेहनें। ज्ञानि पुरुष ते कहीये धीर (जेणे) ज्ञानाग्निये दह्यां (लिंग) शरीर ॥ ४० ॥

ज्ञानीजनने वळी शुभ ने अशुभ, प्रियाप्रिय एवुं कंइ होतुं

* मूळमां कर्दमा छे

नथी. कारण के ते ब्रह्मभावने पामेलो होयछे. ए खरेखरो धीर, पुरुष छे, कोइ पण संयोगथी चलित थतो नथी. एनी ब्रह्माकार वृत्ति कदापि बदलाती नथी, ने एकवार भेदभावनानो, कर्मफल वासनानो त्याग थयो ते पुनः उपजी आवती नथी; कारणके ज्ञानरूपी अग्निथी ह्हेना शुक्ष्म शरीरनो नाश थइ गयो होयछे. मन राजा कबजे थयो ह्हेनी साथेज एने वश वर्ततुं बधुं सूक्ष्म शरीर पण नाश पामेछे. बधी भावनाओ, बधी वृत्तिओ शान्त थइ जायछे.

पडे पिंड (जो) काशीमां जाय तोहे ते रलियात न थाय । अथवा श्वपचगृहे तनु तजे तोहे कलुष पणूं नव भजे ॥ ४१ ॥

देहादि मिथ्या वस्तुओमां ज्ञानीजनोने राग–प्रियता होतां नथी. आ देहनुं शुं थशे एवो ए कदी विचार लावता नथी. एटले गमे तो काशी जेवा पूण्यक्षेत्रमा देह पडे तो एथीं ज्ञानी कइ लाभ के आनंद मानतो नथी, ने गमे तो ते एक चंडाळने घेर पडे तो एथी एने मन कंइ खेद थतो नथी.

ब्रह्मज्ञानी जीवनमुक्त टलुं अभिमान गल्युं जे (हनुं) चित्त । ब्रह्मज्ञाने सर्वमय ब्रह्म को काले भासें नहि भ्रम ॥ ४२ ॥

एम ब्रह्मज्ञानी पुरुष जीवनमुक्त थइ रहेछे. मन.संकल्पनो नाश थता, चित्त गळी शान्त थइ जतां, देहादिनुं मिथ्या अभिमान छूटी जायछे ने केवळ एक आत्मा तरफज दृष्टि वळेछे. एम ब्रह्मज्ञान थए,

पोतानो आत्मा ओळखाय, अखिल विश्व सर्वे ब्रह्मरूप देखायछे, अनुभवायछे. आवी ब्रह्मदृष्टिवाळो पुरुष पछी कोइ काळे भ्रम पामतो नथी एटले असत्यने सत्य कहेतो नथी, द्वैतोचार करतो नथी पण बधुं ब्रह्मरूपज छे एवी वाणी वदेछे.

तत्वज्ञानी सदा निरास जे घट नहि कंइ* विषयविलास। निराशिपणेथि अलंकृत जेह अतिशय जीवित शोभे तेह ॥ ४३ ॥

तत्वने जाणवावाळो पुरुष तो सदाए निराश थइने रहेछे. एने मन कोइ जातना विषयभोगनी लालसा होती नथी. आशा एज परम दुःखनुं कारण छे. तृष्णा मनुष्यने पामर बनावी देछे, कारणके ऐहिक लाभनी आशानो, तृष्णानो पार क्यारे पण आवतो नथी. नित्ये नवी नवी आशाओ तृष्णाओ उभी थायछे ने ते तृप्त करवाने प्राकृत जीव मथेछे. एक पदार्थभोगनी तृष्णा करी रहेने भोगव्ये पण तृप्ति नथी, एथी तृष्णा वधतीज जायछे; पण आशात्याग एटले निराशामाज सुख छे; कारणके पछी कोइ जातनो परिताप के उद्वेग रहेतो नथी माटे मायामोहने अडवा न देता निराशाथीज विभूषित थएला ज्ञानी पुरुषनुं जीवित धन्य छे.

विषयतृष्णा नहि जेहनें पृथ्वितल गोपद तेहने। स्तंभप्राय मेरुए सही जेहनि माया ममता नहीं ॥४४॥

जे पुरुषने विषयभोगनी तृष्णा रही नथी एटले जे निराश

---

* मूळमां —करो ~

मेनी रहेलो छे त्हेने मन विश्वनी कंइ गणत्री नथी. समग्र पृथ्वीतळ एक गोपद एटले गायना पगला जेटली त्हेने भासेछे, ने मेरु आदि महान् पर्वतो स्थंम जेवा त्हेने देखायछे. आम अति स्थूल वस्तुओ अति सूक्ष्मरूप बनी रहेतां त्हेएनो ज्ञानीने स्पर्श थतो नथी. अर्थात् संसारना विषयो तरफ ज्ञानीनी कदीए दृष्टि जती नथी, केमके एनी माया ममतानो त्याग थइ गयो होयछे.

आकाश सर्व मुद्रिका प्राय निश्चल चित जेहनुं रघुराय। त्रणमात्र तेहनि त्रिभुवन जेहनुं निर्विषय होय मन॥४५॥

हे राम! जे पुरुषनुं मन निश्चळ एटले स्थिर, शान्त थइ ब्रह्माकार थयुंछे त्हेने मन आ अनन्त देखातुं आकाश एक वींटी जेवुं छे, ने आ त्रिभुवन पण तृणवत् छे; कारणके त्हेनुं मन निर्विषयी बनेलु होयछे ते कदी विषयनुं ग्रहण करतुं नथी.

सकल कल्याण सदाए राम जेहनि विषे तृष्णा नहि काम। जिवनमुक्त ते जांणो सही सत्य सत्य वांणी इम कही॥ ४६॥

हे राम! जे पुरुषने विषय, तृष्णा ने काम व्यापतां नथी त्हेने हमेशां परम सुखज होयछे: एने एक पण अभिलाष तृप्त करवानो होतो नथी. आम पूर्णकाम थएलो पुरुषज जीवनमुक्त छे एम जाणवुं, आ सिद्धान्तज खरो छे.

जेहनि भिन्न न भासे राम तत्वज्ञानी तेहनुं नाम।

[ज्यम] बाह्य मध्य घटने आकाश (एम) ज्ञानी देखे ब्रह्मप्रकाश ॥ ४७ ॥

हे राम ! जे पुरुषनामां भेदभावना नथी एटले जे वस्तुमात्रने पोतानाथी कहेतां आत्माथी भिन्न न गणतां एकरूप समजेछे तेज खरो तत्त्वज्ञानी छे घटाकाशनुं दृष्टान्त छेतां घटनी अंदर ने बहार सर्वत्र जेम आकाश व्यापेलुंछे तेम ज्ञानी पुरुष विश्वमां सर्वत्र ब्रह्म प्रकाशज जूएछे, ब्रह्मथी जगत्‌ने ते भिन्न मानतो नथी.

(ज्यम) अव्यनीए व्यापक एक तोय अर्णव कुंभ पुरण जल सोय। (एम) ज्ञानि न देखे ठालो ठाम बाह्याभंतर आत्माराम ॥ ४८ ॥

पृथ्वी उपर व्यापेलुं बधुं जल एकज छे. समुद्रमां ने घडामां भरेला जलमां उपाधि भेदे कंइ पण भेद समजवानो नथी. ज्ञानी उपाधि तरफ दृष्टि न करतां सर्वत्र सर्वमां-विश्वनी बहार ने भीतर एकज आत्माने भरेलो-व्यापेलो जाणेछे-अनुभवेछे.

प्रिय अप्रिय नहीं तेहनें तत्वज्ञान हृदे जेहने । वस्तु-दृष्टि निरंतर होय तत्त्वज्ञानी भणिये सोय ॥ ४९ ॥

तत्त्वज्ञानी पुरुषने वळी अमुक वस्तु प्रिय ने अमुक अप्रिय एवी विषमबुद्धि होती नथी; कारणके एनी दृष्टि निरंतर वस्तुता तरफज होयछे; उपाधिने लइ ते भेद पामतो नथी. खरो तत्त्वज्ञानी आवाज पुरुषने कहेवो.

सुपोपतिने पांम्यो (जन) जेह शुभाशूभ देखे नहि तेह । (एम) जे घट केवळ ब्रह्मज्ञान तेहनि नोहे द्वैतनुं भान ॥ ५० ॥

गाढ निद्रामां पडेलो पुरुष शुभ अशुभ योग जोतो नथी, अर्थात् निद्राकालमां ते मपंचमात्रनुं विस्मरण पामेछे; तेम एक अद्वैत ब्रह्मजोग जे सदोदित विचार कर्या करेछे त्हेने द्वैतवासना स्फूरती नथी; एटले स्वपरनी भेदबुद्धि त्हेने उपजती नथी, बधुंए त्हेने आत्मवत् लागेछे.

जिवनमुक्त नर भणिये तेह संशय सकल विवर्जित जेह । जीवनमुक्त रहित हूंकार* सदा निरंतर वस्तु–विचार ॥ ५१ ॥

वळी जे पुरुष संशय मात्रथी मुक्त छे ते जीवनमुक्त छे एम जाणवुं: संशयज विनाशनुं कारणछे; ज्या सुधी संशय वसेछे त्यासुधी सत्य वस्तु जे आत्मा त्हेनो निश्चय थतो नथी, ने अहंबुद्धिज प्राधान्य भोगवेछे, पण संशयरहित जीवनमुक्त पुरुष अहबुद्धि वगरनो होयछे. वस्तुनिश्चय, आत्मज्ञान थयाथी एनो अहंकार छूटी जायछे ने ते नित्ये वस्तुविचारमा मग्न रहेछे.

(ते) सदेह थका वीदे(ह) जाणजो चित्रदीपवत प्रमाण-जो । निश्चल शांत सदा स्थिर मंन जिवनमुक्तनां ए(ह) वा चे (हे) न ॥ ५२ ॥

जीवनमुक्तनां लक्षण केवां छे ते कहुं छुं: देह छतां पण जीवनमुक्त पुरुष विदेही छे, देहमुक्तछे, कारणके देहनुं अभिमान ने देहमां थयायली ममता छूटी गया पछी ते होय त्होय शुं ने न होय त्होय शुं मोक्षानुभवमा पछी देह आडे आवनो नथी. कारणके जीवनमुक्त पुरुषनु मन चित्रदीपनी पेठे सदाए निश्चल, शांत, अने स्थिर रहेछे: चित्रनो दीवो जेम वायुए करी बुझातो नथी तेम जीवनमुक्तनुं मन मायामोहे करी चळतुं नथी.

अहंवासनानो लय होय जिवनमुक्त जाणो तम सोय ।
किंचित विषयतणूं नाहि ध्यान अनूभवे केवळ ब्रह्म-
ज्ञान ॥ ५३ ॥

अहंवासना एटले देहाभिमाननो लय थाय, एवो लय थइ जाय के पछी देह तेज हुंछु ने देह म्हारो छे एवी अज्ञानोक्तिज न थाय ने सदाए आत्माने अशरीरीज रहेवाय त्यारे, जीवनमुक्ति प्राप्त थइ कहेवाय. जीवनमुक्त पुरुषनी दशा केवी होयछे ते कहेछे: संसारना विषयोनुं जीवनमुक्त पुरुषने मान सरखु होतुं नथी तो त्हेमनो विचार तो क्यांथीज आवे ? विषयनु चिंतवन न थाय एटले भोगबुद्धि उपजेनहि ने ए प्रमाणे जीवनमुक्त पुरुष केवल एक परब्रह्म नोज अनुभव लीधे जायछे.

ब्रह्म विषे जे स्थिर थइ रहे जिवनमुक्त गुरू* ते कहे!
जिवनमुक्त पाम्यानूं मर्म एकमना सांभलज्यो (ते)
धर्म ॥ ५४ ॥

मां घ ग

आम परब्रह्मरूप जे बनी रहेछे, स्थिर थइ रहेछे एटले क्यारे ए ब्रह्ममाथी वृत्तिने खसवा देतो नथी, निरंतर ब्रह्मसमाधिज अनुभवेछे, तेवा पुरुषने गुरु जीवनमुक्त कहेछे हे श्रोताओ! जीवनमुक्ति पामवानो एज मार्ग छे, ने ए मार्ग अनुसरी मुक्ति पामवी ते मनुष्य मात्रनो धर्म छे, माटे एकमने ए रहस्यनु श्रवण करो.

(जे) ए (हे) वो अनुभव आणे जेह मुक्ति लोक इह पामे तेह। बंधुवर्ग अघपेरे त्यजे ते नर निश्चल मुक्ती (ने) भजे ॥ ५५ ॥

उपर कह्युं तेम अहंबुद्धिनो जे पुरुष लय करे, ने जे ब्रह्ममाज स्थिरता पामे, तेज आ संसारमा मोक्षनो अनुभव करेछे. सगा संबधीनी ममता खोटी छे, तेओ कर्मजाळमाज मारी मचडीने नाखेछे, एटले तेओ पापरूप छे एम जाणी जे त्हेमने त्यजेछ अर्थात् त्हेमनामा कोई जातनी ममता राखतो नथी ते पुरुष निश्चल मुक्ति पामेछे. निश्चल कहेवानु कारण ए छे के एकवार जीवनमुक्ति पाम्या पछी त्हेमा पछी कोइ जातनो विक्षेप आवतो नथी.

सर्पवत्त संगवर्जित जेह जिवनमुक्ति पामे नर तेह। रोग (तणि) पेरि जाणे जे भोग ते नर पामे आतम जोग ॥ ५६ ॥

वळी जीवनमुक्ति पामवाने माटे संपूर्ण रीते संगथी छूटी जवुं जोइए; ते कोनी पेठे तो क्हेछेके सर्पनी पेठे. सर्प एकवार शरीर

उपरनी कांचळी उतारी नाख्या पछी त्हेना सामुं सरखुं जोतो नथी तेम छूटेली वासना, मनेथी ममतानो फरीथी स्पर्श सरखो न थवादे ते पुरुष जीवनमुक्ति पामे. संसारना अनेक विषयभोग केवळ मोहथी भरेला छे ने ते जीवने ललचावी ललचावीने पोताना तरफ आकर्षे छे, पण जे पुरुष एवा भोगने रोगना जेवा एटले परम दुःखरूप ने विनाश करवावाळा जाणेछे तेज आत्मयोग पामेछे अर्थात् जीवन-मुक्ति अनुभवेछे.

स्त्रीनें ते तृणवत तुछ करे (ते) नर भवसागर सुखें तरे । मित्र शास्त्र (धर्म) सद्गुरुनें करे सतसंगे भव-सागर तरे ॥ ५७ ॥

संसारना बीजा बधा विषयोमांथी वासना कदाच उठे पण स्त्रीमाथी ममता खसवी ए अति दोह्यलुं छे. ए राग क्यमे छूटनो नथी. एकवार एमाथी वृत्ति खेंची लइए त्होय फरी फरीने ए मोहिनी रूपथी ते आकर्षायछे, ने जेम दीवाने जोइ पतंग अंजाइ जइ मही बळीमरेछे तेम जीवनुं पण थायछे, एवी ए एपणा गाढछे; तोपण जे पुरुष पोताना स्वरूपने विचारी ए मोहनीरूपनो तृणनी पेठे त्याग करीदेछे ते आ जन्ममरणरुपी संसारने सहेजे तरी जायछे.आ प्रमाणे स्त्रीनो संग छोडी शास्त्र अने सद्गुरुनो समागम करे, तो ए सत्सं-गथी पुरुष भवसिंधुने तरी जायछे.

(जे) गृहे धर्म अधर्म परिहरे मुक्ति सदाए सेवा करे । रघु उपदेश यदी ए गमे निश्चें ते केवल पद रमे ॥५८॥

स्वधर्मना सेवनथी अने अधर्मना परित्यागथी मोक्ष सहजे अनुभवायछे. मुक्ति पामवी ए वात कंइ कठिण नथी, पण स्वधर्म पाळवो जोईए. स्वधर्म ने अधर्म शो ? स्वधर्म एज आत्मज्ञान ने अधर्म ते देहबुद्धि. माटे आ जे धर्माधर्मनुं रहस्य जेने गमेछे अर्थात् जे विधिनिषेध बराबर पाळेछे, ते पुरुष अवश्य कैवल्य पदने पामेछे. रमेछे एम कह्युं, कारणके ब्रह्मरूप थया पछी आत्मानो मात्र विलासज रहेछे.

दृष्टिपदारथ जे (मनथी) परहरे शीतल बुध्य हृदयमां धरे। आकाशवत्त निर्मल चित जेह जिवनमुक्त परमेश्वर तेह ॥ ५९ ॥

वळी दृष्टिपदार्थो जे अवश्य मिथ्या छे स्हेमनो जे परित्याग करेछे, सात्विक बुद्धि धारण करीने रहेछे, अने आकाशनी पेठे पोताना मनने निर्मल राखेछे, निर्लेप असंग राखेछे ते पुरुष जीवनमुक्त छे, परमेश्वर छे.

अव्यग्र चित होये जेहनूं जिवनमुक्त नामज तेहनूं। वलि लक्षण सुणिये तेहनां विशुद्ध चित्त सदा जेहनां ॥ ६० ॥

गमे तेवा अनिष्ट देखाता प्रसंगोमां पण जेनुं चित्त जराए व्यग्र थतुं नथी, काम क्रोधादिने वश थतुं नथी, ते पुरुषनुं नाम जीवनमुक्त. एनुं एक विशिष्ट लक्षण छेः जीवनमुक्त पुरुषनुं चित्त हमेशां अति शुद्ध, विशुद्ध होयछे, एटले विषयभावनाथी कदाए मलीन थतुं नथी.

(ते) निंद्य कर्म सघलां परहरे ध्यानादिक सत्कर्मो करे । वांच्छे फल नां त्यजे न कर्म उत्तमआशीनो ए धर्म ॥ ६१ ॥

जीवनमुक्त पुरुष उत्तम आशी छे एटले सात्त्विक कर्मो करनारो छे. शास्त्रमां जे जे कर्मोने निंद्य -निषिद्ध गण्यांछे त्हेमनो ते त्याग करे-छे अने ध्यान वार्तादि शुभकर्मनी ते प्रवृत्ति करेछे. ए कोइ दिवस कर्मने तजी बेसी कर्म भ्रष्ट एटले अकर्मी थतो नथी, कारणके कर्मने छोडी देवाथी अथवा एमनो आरंभ न करवाथी कंइ नैष्कर्म प्राप्त-थतुं नथी, माटे ए शुभ–सात्विक कर्मो तो करेछे पण त्हेमनां फलनी याच्त्रना राखतो नथी.

एणि पेर राघव वरते जेह जिवनमुक्त निश्चें तां तेह । तृष्णा त्यजि मुक्ती तां होय राखो मन संदेह न* कोय ॥ ६२ ॥

ए रीते जे पुरुष वर्ते छे त्हेने अवश्य जीवनमुक्त जाणवो. संसारनी भोगवासना–तृष्णा त्यजीने ए जन्ममरणना दुःखमाथी छूटी जायछे, विमुक्त थइ जायछे, एमां हे श्रोताओ ! कोइए मनमां कंइ संदेह लाववो नहि.

चंधमोक्षनो कहुं वलि भेद सांभलज्यो जन तजि मन खेद । एणि विवेके संशे टले जीवभाव अंतरथो गले ॥ ६३ ॥

हवे संसारमा बंधन शुं ने मोक्ष एटले शुं त्हेनो भेद बतावुछुं ते हे श्रोताओ ! मनना खेद, उद्वेग कहाडी नाखी, शान्त थइ, एक चित्ते श्रवण करो. बंधमोक्षनो भेद जाणवाथी संशय मात्र छूटी जशे अने वच्चे आ जे जीवभाव उपजी आव्योछे ते अंतरथी गळी जशे एटले एनो लय थइ जशे, ने शुद्ध आत्मस्वरूपज ओळख्यामा आवशे.

देहात्ममति ते बंधन जाण्य नाश तेहनो मुक्ति प्रमाण्य।
बंधमोक्ष आत्मानें नथी जोज्यो सउ* सिद्धान्ते कथी।
॥ ६४ ॥

देहने आत्मा मानवानी जे बुद्धि तेज बंधन छे देह एज आत्मा छे, देहने सुखेदु खे ते सुखी दु खी छे, ने देहने नाशे आत्मानो पण नाश थाय छे, एम समजवु एज बंधनकारक छे, एवी बुद्धि टळी जाय त्हेनी साथे जीवनी कल्पना जतीरहे, बंधन छूटीजाय, कारणके जीवभाव टळी जतां जे शुद्ध आत्मतत्त्व प्रकाशेछे त्हेने तो बंध के मोक्ष कंइ नथी. धर्मशास्त्रोना तमाम सिद्धान्तोनुं आ वातने प्रमाण छे ते गमे तो तपासी जोजो.

अद्वैत एक व्यापक परब्रह्म तेहनि नथि को धर्माधर्म।
जेनि तुलाये नावे कोय बंधमुक्ति तेहनि वयम होय
॥ ६५ ॥

आत्मा एतो एक ने अद्वैत छे, सर्व व्यापक परब्रह्म छे, एने धर्म के अधर्म एवु कइ नथी एटले एने बंधमोक्ष संभवतां नथी ए अद्वैत

---

* मूळमा सकल छे.

छे एटले एनी समान बीजी कोइ वस्तु नथी. एने बंधमोक्ष एवुं कंइ यथार्थी होय ?

आत्मज्ञाननूं लक्षण जेह निश्चे रघुपति सुणिये तेह ।
मनना कल्प्या सघला लोक दृष्टिपदारथ जांणे (सर्व)
फोक ॥ ६६ ॥

हे राघव ! हवे आत्मज्ञाननुं लक्षण बतावुंछुं: आ लोक मात्र, अनंत ब्रह्मांडो, मननी मात्र एक कल्पनाज छे अने दृष्टिपदार्थो बधा मिथ्या छे, सत्य एवो तो एक आत्मा ब्रह्म छे, एवो निश्चय थाय त्यारेज आत्मज्ञान थयुं कहेवाय.

(एणें) ज्ञाने मुक्ति ते पांमीये तापत्रय तत्क्षण
वांमिये । ब्रह्मज्ञाने मुक्ति ते होय वेदवाक्य कहे सत
सोय ॥ ६७ ॥

ए प्रमाणे आत्मज्ञान थवाथी जीवे जे जूठुं बंधन मानी लीधुं होयछे तेहमांथी ते मुक्त थइ जायछे.अर्थात् आत्मज्ञान थतांनी साथेज संसारना त्रिविध ताप शान्त थइ जायछे. ब्रह्मज्ञानथी मुक्ति थायछे - एवुं जे वेदनुं वचन छे ते सत्य छे, यथार्थ छे.

ज्ञानविना मुक्ति कहिये नथी जो जो वेद पुराणे कथी ।
गगन परे जदपी नर जाय (पण) मुक्तिपदारथ
तांथि न पाय ॥ ६८ ॥

मोक्षसाधन माटे अनेक उपाय बतावबामा आवेछे, पण वेद पुराणादि धर्मशास्त्रोनो एवो सिद्धान्त छे के ज्ञान विना क्यांये मुक्ति मळवानी नथी. जप करो, तप करो, पूण्यदान सर्व करो, पण ए कर्मजाळ प्रसार्याथी कदी पण मोक्ष मळवानो नथी, ए कर्मजाळमां जीव वधारे लपेटातो जायछे अर्थात् एना बधन सखत थायछे. संसारनुं बधन अज्ञानथी छे माटे अज्ञानथी उलटुं ज्ञान थाय तोज मोक्ष सधाय, आम तेम तीर्थाटन कर्याथी के गगन उपर जवाथी पण मुक्ति पदार्थ त्यां कंइ शोध्यो जडे एम नथी.

सप्त पताले करे प्रयाण मुक्ति न पांमे त्यां निर्वाण।
प्रथम वितल सघलूं रडवडे तोहे ताथी मुक्ति न जडे
॥ ६९ ॥

ज्ञान विना मुक्ति मळती नथी एज वचनने दृढावेछे के कोइ माणस साते पाताळमा फरीवळे, प्रथम वितल वगेरे भटकी मरे, तोपण त्यां क्याय मुक्तिलाभ थवानो नथी, अर्थात् तीर्थाटन करवाथी, उंडी एकान्त गुफाओ ने वनपर्वत सेववाथी कंइ मोक्ष थतो नथी.

(ज्यारे) होय विषयतृष्णानो नाश (त्यारे)
मुक्ति आवे तेहनि पास। शांत चित्त सदा जेहनूं
जिवनमुक्त नांमज तेहनूं ॥ ७० ॥

मात्र विषयतृष्णानो संपूर्ण रीते नाश थाय ने एथी ज्ञानोदय थाय तोज मुक्ति समीप आवे, एटले संसारनां बंधन एके एके छूटतां जाय. तृष्णानो त्याग थतां मुक्ति एनी मेळेज अनुभवाती

जायछे, एने कंइ शोधवा के मेळववा रखडवुं पडतुं नथी. जे पुरुषनुं चित्त विषयतृष्णाना त्यागथी हमेशां शान्त रहेछे, आनंदमग्न रहेछे ते पुरुष जीवनमुक्तज छे.

जे घट केवळ ब्रह्मज्ञान तेहनि नोहे द्वैतनुं भान।
चिदानंद वीपे रहि जेह द्वैतभाव विवर्जित तेह॥७१॥

जे पुरुषने ब्रह्मज्ञान एटले आत्मज्ञान थयुं होयछे त्हेने कदीए द्वैतनो भास थतो नथी; विश्व अने ब्रह्म ए बंने सत्य ने एक बीजाथी भिन्न छे एवुं ब्रह्मज्ञानी मानतो नथी. चिदानंदस्वरूप जे ब्रह्म त्हेमां तल्लीन थएलो पुरुष भेदबुद्धिथी मुक्त होयछे.

(जे) केवल ब्रह्म निरंतर जोय (ते) बंधमुक्ति देपे नाहि कोय। अनंत निर्विकल्प अविनाश सदा सदोदित स्वयं प्रकाश॥ ७२॥

ब्रह्मज्ञानी एक केवळ ब्रह्मनेज सर्वत्र देखेछे एटले बंधमोक्षनी एने कल्पना सरखी थती नथी. ब्रह्म—आत्मा अनंत, निर्विकल्प अने अविनाशी छे, नित्य ते स्वयंज्योति छे, एने बंध शो!

बंधमुक्त केहनि कहुं राम (जो) ब्रह्म विना ठालो नहि ठांम। बंधमोक्ष व्रस्तुगत नथी जोयुं वेद वेदांते कथी॥ ७३॥

हे राम! सर्वत्र एकरस ब्रह्म भरेलो छे; एना विना एक पण स्थान खाली नथी, एटले आ बंधनमां पडेलो छे ने आ मुक्त छे एवुं

ते हुं कोने कहुं ? वस्तुगति बंध ने मोक्ष छेज नहि; कारणके ब्रह्म क्यारेए बंधन पामतो नथी एटले जे बंधातो नथी त्हेने मोक्षनी अपेक्षा क्याथी होय ? वेद उपनिषद् सघाए ग्रंथो जोइ, शोधी आज सिद्धात म्हें कहाड्योछे.

संकल्पयुक्त मन जां लगि होय तां (हां) लगि बंधन पांमे सोय । मननो संकल्प सघलो टाल मुक्त थइ पछि (केवल) ब्रह्म निहाल्य ॥ ७४ ॥

वस्तुगतिए बंधमोक्ष नथी, पण ज्यां सुधी मनना संकल्प धर्मनो त्याग थतो नथी त्यांसुधी पुरुष बंधननो अनुभव करेछे. माटे मननो संकल्पज कहाडो नाखो एटले मुक्त थइ जशो, जे मिथ्या बंधन आवी वळग्युंछे ते छूटी जशे. ए रीते मुक्त थइने निरतर ब्रह्म तरफज दृष्टि राखो.

ब्रह्मविचारे सघ भ्रम समे स्वभाव राघव मुजने (ए) गमे । नित्ये करवो ए अभ्यास करजोडी कहि नरहरिदास ॥ ७५ ॥

ब्रह्मविचारथी, आत्ममननथी सघ, तरतज भ्रान्तिनुं निवारण थायछे, माटे हे राम ! जे पुरुष निरंतर ब्रह्मविचार कर्म करेछे त्हेनो स्वभाव म्हने बहु प्रिय लागेछे. माटे नित्ये एज अभ्यास कर्या करवो. ब्रह्मज्ञानथी एक क्षणपण विमुख थवुं नहि.

इति श्रीवसिष्टसारगीतायां जीवनमुक्तवर्णनं नाम तृतीयं प्रकरणं ॥ ३ ॥

प्रकरण ४.

मनोलय.

पूर्वछायो.

जिवनमुक्त वर्णन कर्यूं (हवे) मननो लय वॅलिश ।
वसिष्ट राघवने कहे अध्यातम उपदेश ॥ १ ॥

हे राम ! आ प्रमाणे त्हमने जीवनमुक्तनां लक्षण कही बताव्यां, हवे मननो लय शी रीते थाय ते साधन आ प्रकरणमां बतावुंछुं, एम कही श्रीवसिष्टगुरु श्रीरामचंद्रजीने अध्यातम ज्ञान कहेता हवा.

'मनना सूक्ष्म, अति सूक्ष्म धर्म समजवाने बहु कठिण छे, ने मन उपरज बधा संसारनुं मंडाण छे, माटे एवा मनने मुक्तिने अर्थे शमावी देवाय एवा साधननी प्रथम अगत्य छे.

संसारनुं बंधन तां लगे जां लगि ऊभूं मन । मनशमतां बंधन टळे (होवे) कीजे तेह जतंन ॥ २ ॥

हे भाइ ! मन उभुं छे, संकल्प विकल्पमां रमेछे त्यांसुधी संसारनुं बंधन रहेवानुं. ए मन जो शमी जाय, मरी जाय, ब्रह्माकार बनी जाय तो तेज क्षणे संसारनु बंधन पण छूटी पडे, एक क्षणमांज मोक्ष

अनुमवाय एम छे, माटे जेथी मन शमी जाय एवो जतन एटले यत्न, अभ्यास करवो जोइए.

दुर्लभ मानव देह नहि पांमो वारंवार । मन शमवा
साधन करो चित चेतो नरनार ॥ ३ ॥

मोक्ष माटे मनुष्यदेह जेवुं एके साधन नथी; मनुष्य देह पामवो ए वळी दुर्लभ छे; फरी फरी कंइ मनुष्यावतार आवतो नथी. लक्ष चोराशी योनिओमा आथडवानुछे ने बीजी एके योनिमां मनुष्य योनिना जेवुं साधन मळवानुं नथी, माटे हे श्रोताओ! आगळथी चेतो अने मनने शमावानुं साधन करो ढील न राखशो, हजु तो घणाए दिवस छे, अवस्था थशे त्यारे रामनुं नाम लइशुं, ज्ञान भक्तिवार्ता करीशुं एम कही कालक्षेप न करो.

डाह्या शाणा* सहु मळी (अने) राखो एहज थाप ।
मन अमन ज्यारे बने[1] त्यारे (ते) आपो आप ॥ ४ ॥

संसारमां बहु डाह्या, शाणा, व्यवहारनिपुण गणाता पुरुषोने उद्देशीने गुरु कहेछे. तमारी बीजा बधा काममां जे शीणवट छे, जे चतुराइ छे तेवीज चतुराइ आ परम पुरुषार्थनी वातमां राखो, बधाए एकठा थाव अने आ जे रहस्य हुं बतावुंछुं ते हृदयमां ठसावी दो; आ मन पछी उतावळ, उन्मनीपद दशाने, पामतां आपोआप सहु रहेशो, एटले शुद्ध स्वरूपने पामशो, आ मिथ्या वेश उतरशे.

* मूळमां सयाणा । बने ने बदले होय.

श्री रामोवाच.

रूप कहो मन अमननूं (अने) मननो लय क्यम होय। ते साधन सदगुरु कहो वलि वलि पुछुं सोय.॥५॥

अहो गुरुजी ! मन अने अमन एमनुं रूप केवुं छे, एमना लक्षण शा छे, वळी मनना लक्षण कही एनो लय शीरीते करी देवाय ते साधन कृपा करीने बतावो. हुं आपने वारंवार विनीत करीने कहुंछुं के म्हने एवुं कंइ साधन बतावो.

श्री वसिष्ठोवाच. चोपाइ.

वसिष्ट कहे सुणो रघुराय अमन नाम ता ते कहेवाय। स्वस्थांनके रहे मन जेह अखंड आत्मा भणिये तेह॥६॥

सद्गुरु वसिष्ठ कहेछेः—हे रघुराय ! मन अमननां लक्षण बतावुं छुं ते सांभळोः मन पोताने स्थानक रहे, कोइ प्रवृत्तिमां भमे नहि त्यारे ए अखंड आत्मारूपज छे. संकल्पधर्मे करीने आत्मा एज मन. एवी संज्ञा पामेछे.

निर्मल निश्चल चित जे होय आतमस्वरुप तां कहिये सोय। प्रियाप्रिय संकल्पज (जेहने) नहि ते मन आत्मा जांणो सही ॥ ७ ॥

जे चित सदाए निर्मल, निश्चल, स्थिर छे ते आत्मस्वरूपछे; वळी जे मन प्रिय अने अप्रिय संकल्पोने तजी बेठुंछे एटले विषय वासनाथी मुक्त छे तेज आत्मा छे एम जाणवुं

संकल्प सहित होये चैतन नाम (ते) तेहनूं कहिये मन । संकल्पतणे त्यागे सुण राम ब्रह्मरूप तां तेहनं नाम ॥ ८ ॥

हे राम ! संकल्प विकल्पवाळुं जे चैतन्य ते मन. चैतन्य तो शुद्ध केवळ ब्रह्मरूप छे, पण ते मायाना मोहने लीधे ज्यारे सक्ल्प करतुं थायछे तेज क्षणे त्हेनुं नाम मन कहेवायछे पण जो सकल्पनो त्याग थाय तो मन गळी जायछे, शान्त थइ जायछे, अर्थात् एनुं शुद्ध स्वरूप जे चैतन्य तेज रहेछे ने एज ब्रह्मरूप पण छे.

व्यापक ब्रह्म परमात्मा जेह सर्व समर्थ भणिये तेह । विश्वविभागरचना तिणि करी कल्पनाशक्ति जारे धरी ॥ ९ ॥

आ सर्व व्यापक ब्रह्म परमात्मा छे, एना सामर्थ्यनो पार नथी, सर्वुंए करवाने ए शक्तिमान छे, एणे कल्पनाशक्ति धारण करी आ बधा विश्वविभागनी रचना करी छे.एकोऽहं बहु स्याम् एवा एक संकल्प मात्रथी आ अनेक ब्रह्माढ एणे उपजाव्याछे.

(ज्यम) समुद्र लिलाए लेहेरी करे लीलाए पाछी संवरे । (एम) विश्व ब्रह्ममां (हां) उपजे शमे ब्रह्मरुपथूं ब्रह्ममां रमे ॥ १० ॥

समुद्र लीलाथी लहरी–मोजां उत्पन्न थायछे ने एनी एज ली-

लथी पाछी ए लहरीओ समुद्रमांज मइने शमी जायछे तेम ब्रह्ममांथी मायाना प्रभावे विश्व उपजी आवेछे ने पाछुं ब्रह्माज शमेछे. आ एक समुद्रनी जेम लीला छे तेम परमात्मानी माया छे ने ब्रह्मरूप ब्रह्माज रमेछे.

शुणो राम[1] सांचो संकेत अहो ज्ञान आणी हृदि हेत।
संकल्पे कीधो संसार संकल्पे होये निस्तार ॥ ११ ॥

हे राम! सकलयीज संसार उपज्योछे ने संकल्प शमी जतां संसारनो लय थइ जायछे, ए एक प्रभुनो संकेतज छे. खरुं ज्ञान आज छे माटे ऐहेनुं परम उल्लासथी ग्रहण करवुं जोइए छे.

जेणे उपजे तेणे समे कहुं दृष्टान्त (जे) सहूने गमे।
(ज्यम) वह्नि ज्वाळा वाये करी वायु रह्यो ज्वाळा आवरी ॥ १२ ॥

आम विश्व जेमांथी उत्पन्न थायछे तेज साधनथी पाछुं ते शमी जायछे, ए वात बधाओने बराबर समजाय माटे एक दृष्टान्त आपुं छुं' वायुथी अग्निमां ज्वाळा प्रगट थायछे, ने ए ज्वाळा वायु स्थिर थता, पवन रोकता पाछी शमी जायछे.

घन विषये संकल्प* जि राम संसार उपजे एणें काम।
ब्रह्म विषे संकल्पज करे सद्य संसार सकल निस्तरे ॥ १३ ॥

[1] पाठान्तरः-सुणि राघव। मूळ प्रेहेज्यो * पाठान्तर-असंकल्पे

मन कहेतां दृष्टिपदार्थो विषे ज्यारे संकल्प थायछे त्यारे संसार उपजी आवेछे; पण जो ब्रह्मविषये संकल्प थाय तो क्षण मात्रमां बधाए संसारनो पार आवी जाय, पछी संसार तरवानो रहेम नहि. अर्थात् बंध मोक्ष ए जीवनी स्वसत्तानी वात छे, जीव हाथे करीनेज बंधनमां पडेछे, ने पोतानाज सामर्थ्ये करी मुक्ति पण पामेछे.

ब्रह्मभाव राघव हृदि राख्य अवर भाव ते सघलो नाख्य। मन कल्पित उपजाव्यूं जेह नाशवंत निश्चे तां तेह ॥ १४ ॥

माटे हे रघुपति ! ब्रह्मभावज हृदयमां दृढ करवो, ने पदार्थनी भावना सरखी उपजवा देवी नहि, एवी बधी भावना कल्पना मनमांथी कहाडी नाखवी, कारणके पदार्थ मात्र, संसार मात्र मिथ्या अने नाशवत छे, केम जे आपणे उपर कही गया तेम एतो मननुं उपजावेलु छे.

कुविचारि नाना बुध्य होय सुविचारि भिन भासि न कोय। मरण स्वप्नमाहे तां जेह वृथा जाणजो निश्चें तेह ॥ १५ ॥

मिथ्या पदार्थोनी कल्पना करवी एनुं नाम कुविचार अने ब्रह्मभाव ते सुविचार. कुविचारथी विविध प्रकारनी बुद्धि उपजेछे, वृत्तिओ उदय पामेछे, भेदज भासेछे, पण ब्रह्मभावथी कशु भिन्न एटले ब्रह्मथी जुदुं एवु भासतुं नथी, सर्वत्र अभेदज अनुभवायछे, बधाएमा एकरूपता देखायछे. भेद मात्र खोटो छे, पदार्थमा नाना बुद्धि थायछे

14

ते खोटी छे, तेहेनुं दृष्टान्त आपेछे के कोइ माणसने स्वप्न आवे त्यारे ते प्रत्यक्ष पोताने मूएलो जूए पण ए वात जागी उठतां खोटी ठरेछे, तेम पदार्थकल्पना स्वप्नना अनुभव जेवी मिथ्या छे.

एम विश्व मिथ्या ए मंन (ज्यम) रज्जू भुजंग मिथ्या स्वपंन। अतेव मननुं मिथ्यारूप सत्य सत्य कहुंछुं रघु भूप ॥ १६ ॥

एटले विश्वज मिथ्या छे एम मानवुंः रज्जुमां सर्पकल्पना मिथ्या छे, स्वप्न मिथ्या छे तेम हवे मननुं मिथ्या स्वरूप बतावुंछुं, यथार्थ बतावुंछुं ते हे राम ! श्रवण करो,

मंन नाम ते भणिये तात (तेहने) ब्रह्मदर्शन नोहे साक्षात दे (ह) दर्शन होये जेहने मंन नाम कहिये तेहने ॥१७॥

शुद्ध चैतन्य जे आत्मा ते संकल्पधर्मथी मन एवी संज्ञा पाम्युं त्यारथी एने साक्षात् ब्रह्मदर्शन थतुं नथी, एटले एना स्वरूपने हानि थायछे; एने पछी देहदर्शनज थायछे, देह एज आत्मा ने सर्वस्व एम ए मानेछे.

आत्मबुध्य अनात्मा विषे मानुभाव मन तेहेने लखे । अवस्तुने (जे) वस्तू करि ग्रहे साधु पुरुष मन तेहनि कहे ॥ १८ ॥

अनात्मा विषे एटले जड पदार्थो विषे आत्मबुद्धि करे, एटले

मिथ्या पदार्थोने सत्य माने त्हेने महात्माओ मन ए नामथी ओळखे-छे, अवस्तु ने वस्तुरूप मानीने, कहेतां असत्यने सत्य मानी त्हेनुं ग्रहण करे ते मन एम साधु पुरुषोनुं कहेवुं छे.

हुं हूं म्हारुं करि जे कोय निश्चे राघव मन तां सोय ।
कल्पे जल्पि दहों दिश धाय महापुरुष मन तेहनि गाय
॥ १९ ॥

वळी हुं ने म्हारुं कहेनार पण हे राम ! मनज छे; ते नाना प्रकारनी कल्पना संकल्प करेछे, जल्पे छे एटले मिथ्या भाषण करे-छे, हर्ष शोकादिने वश थइ उद्गार कहाडेछे ने दशे दिशामा धाय छे, प्रवर्तेछे, अर्थात् एनी प्रवृत्तिओनी सीमा रहेती नथी. महा-पुरुषो आवा धर्मवाळाने मन कहेछे.

ब्रह्मविचार हृदयमां धरो मिथ्या भाव सकल परहरो ।
देहभाव ते मनथी टाल केवल ब्रह्म निरंतर न्याळ* ॥२०॥

आवुं जे मन त्हेने वश करवानुं बतावेछेः—एक ब्रह्मज सत्य छे ने जगत् मिथ्या छे एज विचार हे राम ! हृदयमा सुदृढ करवो, एवो ठसावी देवो के पछी बीजा मलीन विचारो प्रवेश करवाज न पामे. वळी मिथ्याभाव एटले असत्य पदार्थोनी कल्पना करवानी कहाडी नाखवी, कारण के ए ब्रह्मविचारमा आडे आवेछे. आ देह छे तेज हु छुं ने एना सुखदुःखथी हुं सुखी दुःखी छुं, एना नाशथी

* मूळ –निहाळ.

म्हारुं मृत्यु थशे एवो अज्ञानविचार टळी देवो ने केवळ ब्रह्मप्रतिज निरंतर दृष्टि राखवी.

ब्रह्मभावि मननो लय थाय राघव अन्य नहीं ऊपाय।
साचो अनुभव एहनि जाण्य अवर सर्व मिथ्या परमांण्य
॥ २१ ॥

हे राम ! ब्रह्मभावथीज मननो लय थायछे, बीजुं कंइ साधन नथी. खरो अनुभव एज छे. कोइ बीजां साधन बतावशे पण एथी मन तो मरशे नहि ने कर्मजाळ मात्र वधशे; माटे ए बीजां साधन मिथ्या छे एम मानवुं.

विषयसुख मळवा यत्नज करे मौनादिक साधन ते धरे।
दुःख टाळवा करे उपाय एकान्त रहे तीरथ वन जाय॥२२॥

मौनादिक शारीर तपनां जे साधन करेछे त्हेमने मन तो ऊंडी विषयसुखनीज तृष्णा भरी मूकेलीछे. आ संसारमां सुखसाधनना अभावे स्वर्गप्राप्तिने माटे कोइ काम्य कर्म आरंभेछे, कोइ कोइ संसारनी अनेक प्रकारनी विटंबणाओथी कंटाळी त्हेमांथी छूटवाने माटे एकान्त सेवेछे, तीर्थाटन करता फरेछे, ने जंगलमां जइ मनुष्यसंसर्गथी दूर रहेछे, पण एवा पुरुषो संसारथी अने मोक्षपद उभयथी भ्रष्ट थायछे.

[एम] हेयोपादे* इम करि जेह दृढबंधन बांध्यू मन तेह।
ब्रह्मविचारे बंधन टले सुखदुखभाव बधोए[1] गले ॥२३॥

* हेय उपादान मूळ. † मूळ -सर्वे.

एवी रीते असत्य पदार्थोना ग्रहण त्यागथी मन दृढ बंधनमां पडेछे. आज एक पदार्थ प्रिय लागे तो ते संघर्यो, ने काल ते अप्रिय लागतां पडतो मूकी बीजा प्रिय लागता पदार्थो मेळववा मननी प्रवृत्ति थायछे. एने आवी प्रवृत्तिओमां क्षणवार पण निवृत्ति मळती नथी ए दृढ बंधनज छे. पण जो ब्रह्मविचार सूझे तो ए बंधन क्षणवारमां सरी पडे ने सुखदु:खनी कल्पना मात्र टळी जाय.

जां (हां) लगि नोहे ब्रह्मविचार तां (हां) लगि मन कल्पे संसार । जगततणो करता ए मंन मननां कल्प्यां त्रण्य भुवंन ॥ २४ ॥

पण मन संसार अने संसारना मिथ्या पदार्थोनी भावना कर्या करे त्यांसुधी ए ब्रह्मविचार आववानो नहि; कारणके फरी पाछुं कहुं छुं के जगतनो कर्ता मन छे, ने आ त्रणे भुवन मननां उपजावेलाछे.

मन कल्पित लोको ए जाण्य मंन जीवपुरुष प्रमाण्य । मननुं कृत्य कहीए कृत्य (पण) मनविण देहनुं कृत्य अकृत्य ॥ २५ ॥

मनना कल्पेलाज ए बधा लोक छे ए वात नक्की जाणवी अने मन एज जीव छे ए पण जाणी लेवुं. कर्म मात्र मनना छे, एमनो कर्ता मनज छे. मन न होय तो देह एकलानां कर्म तो अकर्म जेवां छे. आम त्यारे कर्मनो कर्ता जे मन तेज बंधनमां पडेछे ने मुक्तिनी अपेक्षा पण ए रीते मननेज रहेछे.

ज्यारे मन निर्वासनि होय (त्यारे) देहकृत्य नत्र लागे कोय। कारण सवलूं मननुं राम देहनुं नहीं अहीं कंइ काम ॥ २६ ॥

पण एवुं मन निर्वासन थाय एटले एनी विषयवासना टळी जाय त्यारे देहकृत्य एटले देहना साधनथी करेलां कर्मनुं बंधन पमातुं नथी. कारणके हे राम! बंधननुं कारणज मन छे; केमके ए कर्मनो कर्ता छेः कर्मबंधननी वातमां देहनो जरा पण संबंध नथी.

देह कृत्य एके नव्य करे कशी वासना मन (मांहे) जो धरे। तो ते नर निश्चे बंधाय पाप पुन्य भोगवि रघुराय ॥ २७ ॥

देह एक पण कर्म करतो नथी ने एना तरफनुं पुरुषने एक पण बंधन नथी. मन जरा पण वासना संघरे तेज क्षणे पुरुष अवश्य बंधायछे. कारणके कर्मनुं मूळ वासना छे ने ए रीते बंधन बांधनार पण वासनाज ठरेछे. आवी रीते बंधनमां पडेलो जीव पछी पापपुण्यनो. सुखदुःखनो अनुभव करेछे.

दृष्टिपदारथ दीसे जेह तेहनुं कारण चित तां येह। जां (हां) लगि ऊभुं होये चित्त तां (हां)लगि त्रिभुवन जांणो सत्य ॥ २८ ॥

आ बधा दृश्य पदार्थो नजर आगळ तरी आवेछे तेहनुं कारण

मन एटले चित्त छेः चित्त उभुं होय एटले स्थिर, शान्त थइ गळी गयुं न होय त्यासुधी पुरुषने ए दृष्टिपदार्थो, संसार, ने त्रिभुवन सत्यज भासवानां, एमनुं मायिक स्वरूप समजावानुं नहि.

ज्यारे चित्त क्षय पामे राम। त्यारे विश्वतणूं नहि काम।
चित शमवानूं यत्नज करो अवर उपाध्य सर्वे परहरो
॥ २९ ॥

हे राम ! आ उं अनर्थ करवावाळुं चित्त ज्यारे लय पामे त्यारे विश्व जेवुं कंइ रहेतुं नथी, माटे चित्तने शमाववानोज यत्न करवो ने बीजी बधी जे कर्म-उपाधिओ छे त्हेमनो त्याग करवो; कारणके एथी चित्त मरशे नहि ने विश्व उभुं ने उभुं रहेशे.

चित शमवानूं साधन जेह सांभळजो जन कहुंछुं तेह।
विषयवासना जां (हां) लगि राम बंधाये तां (लगि)
ठामो ठाम ॥ ३० ॥

हे श्रोताओ ! ए चित्तनो लय करीदेवानो उपाय बतावुं छुं ते ध्यानपूर्वक सांमळो. हे राम ! ज्यां सुधी विषयवासना रहेछेछे त्यां सुधी चित्त ठामोठाम बंधन पामेछे.

एकवार श्रोताओनुं लक्ष खेंची उत्तम अधिकारी रामने सावधान कर्याछे.

विपे वासनानो* लय होय जिवनमुक्त काहिये नर सोय।
आत्मविवेके तृष्णा टळे निर्वासन मन ब्रह्ममां भळे ॥३

* मूळ घासना.

विषयवासनानो क्षय थाय तो पुरुषनां बंधन छूटे, ते जीवनमुक्त थाय. वासना आत्मविवेकथी टळी जायछे. जड शुं, चेतन शुं, नाशवंत शुं, शाश्वत शुं, एवा एवा विचार करतां करता आत्मविवेक थायछे, ने वासना टळी जायछे; एम मन एकवार निर्वासन थयुं, एटले ते ब्रह्माकार थायछे, कारणके वासना शमी जतां शुद्ध चैतन्य रहेछे ने ते तो ब्रह्म छे एम आपणे पाछळ कही गया.

आत्मविवेक हृदयमां (हां) धरो मो [ह] मच्छर माया परहरो। इंद्रि सकल पाछां संवरे अंतर लक्ष निरंतर धरे ॥ ३२ ॥

आत्मविवेक एज मुख्य साधन छे, एम जाणी त्यारे एनेज दृढ करो, ने मोह, मत्सर ने संसारनी जूठी मायानो त्याग करी दो. ए कोइ काळे पण एमनी मेळे नहि छूटे, माटे एमनो तो त्यागज करीदो, अने आ जे इंद्रियो विषयो तरफ व्हेती मूकी छे ते पाछी संकेली ल्यो. काचबो जेम अंग संकेली लेछे तेम बधीए इंद्रियोने पाछी खेंची ल्यो, वश राखो, अने ब्रह्म एज सत्य छे ए लक्ष निरंतर राखो; एना एज विचारनुं परिशीलन करी रहेनेज सुदृढ करी नाखो.

जगलक्षण छे तृण तां जेह ब्रह्माग्निमां (हे) होमीये तेह। भ्रम रहित चित जेणे थाय आत्मज्ञान * संतो ते गाय ॥ ३३ ॥

१५ जगत् जगत् एवुं जे जीवनुं लक्ष्य छे ते ब्रह्म अग्निमां होमी दो

* मूळ विवेक.

एटले विश्वनो ब्रह्ममाज लय करी नाखो. विश्व ए ब्रह्मज छे, ब्रह्म सिवाय अन्य कंइ नथी एवो विवेक करो. एथी ब्रह्मरहित एटले ब्रह्मस्थित चित्त थशे, मननी पछी प्रवृत्तिओ बंध पडशे ने ते ब्रह्माकार थइ जशे. आनुंज नाम सत पुरुषो आत्मविवेक कहेछे.

नर मन धारो तीव्र विराग करो विषय तृष्णानो त्याग ।
आशा महा पिशाची जेह निरंतर नरने दुख दे तेह॥३४॥

हे श्रोताओ ! विवेक वैराग्यादि जे साधन छे ते साधी ल्यो अने विषयनी तृष्णा मात्रनो परित्याग करो, जरा पण तृष्णाने पासे आववा देशो नहि, कारणके ए तृष्णा—आशा एक पिशाचिणी जेवी छे ने मनुष्योने ते अतिशय दु ख देछे. आशानो जेम पार नथी तेम मनुष्योना दु खनो पण पार रहेतो नथी.

निर्मल नर नारायणरूप ते आशाए भिक्षुक भूप।
ज्येम चंद्र अभ्रे आवर्यो त्यम आशाए ब्रह्म जिव कर्यो
॥ ३५ ॥

पुरुष स्वभावे निर्मल, नारायणरूप छे रहेनी राजेंद्रने भीखारी बनावे एना जेवी बूरी हालत आशाए करी मुकी छे— निस्पृह ब्रह्मने कगाल जीव बनावी दीधोछे, सदासर्वदा आनंद रूपने दु खमा डूबावी दीधो छे! त्यारे शु ब्रह्म करता आशा वधी? ना, चंद्र जेम वादळाथी छवाइ जाय तेम ब्रह्म आशाना आवरणे करी जीव थयोछे वादळाथी चंद्रना शुद्ध स्वरूपने हानि नथी, ए हानि दृष्टाने छे वादळ खसी गया एटले चंद्रप्रकाश एनो एज, तेम आवरण खसता ब्रह्मज प्रकाशे छे, जीवभाव मटी जायछे.

उजवलने मपि दूगण ज्यम नरने आशा जाणो त्यम ।
आशाबंधन मो(हो)टुं जाण्य आशा टलि पामे निर्वाण्य।
॥ ३६ ॥

कोइ उजळा वस्त्रने गेंशनो डाघ पडे ने ए जेम दूषण गणाय, तेम पुरुषने आशा दूषणरूपज छे; कारणके एनी उज्वलताने ए मलीन करेछे, एने ब्रह्मनो जीव बनावी देछे, माटे संसारमां आशा एज म्होटुं बंधन छे. आशा टळी जाय तेज क्षणे निर्वाण पहेतां मोक्ष छे.

आशा बंधन त्यारे टले ज्यारे संत विवेकनि मले । विवेक विचार विरागनि मली सद्य आशा सघळी ए टली॥३७॥

आशानुं बंधन एमने एम छूटवानुं नहि, ए माटे तो शुद्ध विवेक थवो जोइए; सत्य शुं ने असत्य शुं ए बराबर समजातुं जोइए. वळी एकलो विवेक करता शीखीने पण बेसी रह्ये कइ सिद्धि नथी; विवेकमांथी पाछो वैराग्य उपजवो जोइए. असत्य पदार्थने असत्य जाण्या एटले एमांथी प्रीति उठवी जोइए ने सत्य वस्तु जे केवळ ब्रह्म तेहेमां वृत्ति जोडावी जोइए. आनेज वैराग्य कहेछे. विवेक ने वैराग्य मळ्यां एटले आशा क्षण वारमां टळी जशे.

आशा टलि चित्त शुद्धज थाय उपाधि पदारथ सघळा जाय। (तेहने) कदा किंचित्त उपजे नही काम जे(ह)जाणे मिथ्या रूप नाम ॥ ३८ ॥

आशा टळी गये चित्त शुद्ध थशे ने संघरवाना ने तजवाना पदार्थो अहश्य थशे, मनमा पण नहि वरो; कारणके पदार्थोनां नाम रूप तो मिथ्या छे ने खरी वस्तु तो एक ब्रह्म छे; ए सत्य एकवार जाण्या पछी, निर्मळ वैराग्यथी समज्या पछी चित्तमां कामवासना उपजवाज पामती नथी.

विवेके चितनो लय थाय (ज्यम) ईंधण विण पावक शमि जाय । चित्ततणूं राघव ए रूप जहां मले तां हा (होय) तद्रूप ॥ ३९ ॥

विवेके चित्तनो लय थाय एम कहुं ते शीरीते ? तो कहेछे के काष्ट विना अग्नि होलाइ जाय तेम दृश्य पदार्थो काष्ट जेवा छे, ह्वेमनो जो मन साथे योग थाय तो ते अग्निनी पेठे भभकी उठे, पण विवेक एमनो योग थवा देतो नथी. वळी हे रघुपति ! चितनो स्वभाव एवोछे के जे वस्तु साथे ते जइ मळे ह्वेमाज ते तद्रूप थइ जाय छे, आसक्त थइ जायछे ते केमे खसेडयुं खसतुं नथी.

घोररूप जागृति चित थाय दुःसह कोणे सह्यूं न जाय । स्वप्नावस्थाए चित्त मूठ राखे पावक राख्यो गूठ ॥४०॥

जागृत अवस्थामा चित्तनुं स्वरूप घोररूप होयछे, अति दुःखी होयछे, अनेक कंटालो आपे एवी प्रवृत्तिओ वेठवानी होयछे. एनो थाक, एनुं दुःख एटलुं बधुं होयछे के ते कोइथी सहन न थाय.

स्वप्नावस्थामां चित्त मूढ बनी जायछे, वर्तमान संसारनुं एने भान सरखुं रहेतुं नथी, ने गखोडीमा जेम अग्नि छूपो रहे तेम ते शमी गयु जणायछे.

सुषुप्ति* विषे शांती थइ रहे मग्न थयो काइ नव लहे। अवस्था भोगवे चित सोय उत्पत्ती (स्थिति) लय वलि वलि होय ॥ ४१ ॥

अवस्था त्रैण रहित जो थाय त्यारे चित तुरिया घर जाय। तुरिया ए चित्त होये नाश कीजे तुरियानो अभ्यास॥४२॥

जागृत्‌ स्वप्न अने सुषुप्ति ए जे चित्तनी त्रण अवस्थाओ एमांथी ते मूक्त थाय त्यारे ते तुरिया कहेतां चोथी अवस्थाने पहोचे. तुरीयामां चित्तनो संपूर्ण नाश थइ जायछे, ने उपर कह्यु तेम अवस्थान्तर थतुं बंध पडेछे; माटे तुरीयानी स्थितिने पामवानो यत्न करवो जोइए छे.

तुरियानूं रुप राघव जेह वाणीए न वदाये[×] तेह। हुं तुं भाव रहित गुणकर्म तुरिया तणो अलोकिक धर्म ॥४३॥

तुरीयानु स्वरूप एवु छे के ते वाणीथी वदातुं नथी; वाचाथी ए पर छे ए दशामा हुं, तुं एवो भेद के गुण, कर्म कंइ रहेता नथी, एवो एनो अलौकिक धर्म छे.

---

* मूळ–सुषोपति. मूळ.– न कहेवाये.

तुरिया चितनें शुद्धज करे ते (हा) दृष्टान्त वसिष्ट उच्चरे । आदे अंते जल शुध कह्युं मध्य मलीन (ते) रजे* कारि थयूं ॥ ४४॥

तुरीया चित्तने शुद्ध करेछे, ने ए अवस्था ज्ञान दशानी छे. एवुं श्रीवसिष्ठ दृष्टान्त आपेछे. जळ आदि ने अन्ते शुद्ध छे, निर्मळ छे, एटले एमा जो कंइ मलीनता देखाती होय तो ते रजने लीधे छे एम जाणवुं.

कतकफल स्पर्शे मल (ते) जाय त्यारे जल ते सुद्ध कहेवाय । (एम) तुरियाने स्पर्शे जिणिवार त्यारे मन होय ब्रह्माकार ॥ ४५ ॥

मलीन देखाता जळमा कतकनी मूकी नाखीए एटले मलनु शोधन थाय ने जळ शुद्ध स्वरूपे जणाय. ए प्रमाणे तुरीयावस्था थता मन ब्रह्माकार बनी रहेछे मन स्वत. ब्रह्मज छे पण वासनाने लीधे मलीनता पाम्यु छे; ए मलीनतानो—वासनानो त्याग थाय तो अवशेष ब्रह्मज रहे, मन एवी संज्ञा न रहे.

ते (ह) कारण कह्युं तुजने राम सेवो सदाय तुरियाधाम । ज्यां लगि तुरिया सेवे नहीं त्यां लगि चित ते ऊभू सही ॥ ४६ ॥

माटे हे राम ! आत्मस्वरूपने ओळखावनारी जे तुरीया एनुंज

---

* मूळमां पक.

सेवन करो, इष्ट उपासनाथी सेवो, तुरीयाना सेवन विना मन हमेशां उभुं ने उभुं रहेवानुं, एनी प्रवृत्तिओ एनी ए रहेवानी.

चित्त उभे ऊभो संसार चित्त ऊभे बंधन निरधार । चित्त समे संसार न होय चित्त समे बंधन नहि कोय ॥ ४७ ॥

चित्त उभुं रह्युं एटले संसार उभो रह्यो समजवो, एनी भावना दूर खसवानी नहि, ने बंधन पण एनां एम रहेनांनां; पण जो चित्त शमी जाय तो संसार अने बंधन बंनेनो नाश थइ जाय, एक पण बंधन न रहे ने मोक्ष अनुभवाय.

(ज्यम) वाये वृक्षपत्र चलि+राम निश्चल वायुए (पत्र) तरु ठाम । (एम) चित्ते देहनि होय प्रवर्त्ये चित शमतां देहनी (होय) निवर्त्ये ॥ ४८ ॥

पवन आवतो होयछे त्यारे वृक्षनी डाळीओ ने पांदडां हाले छे, ने ते बंध रह्यो होयछे त्यारे ए स्थिर एटले पोतपोताने स्थाने होय छे. एम मननी प्रवृत्तिए देहनी प्रवृत्तिओ चालेछे, ने चित्त निवृत्ति पामेछे त्यारे देह पण निवृत्ति पामेछे, अर्थात् कर्म थतां बंध थायछे.

ध्यानधारणा करतां राम चंचल चित ते आवे ठाम । कारण तेह कहूं रघुवीर ध्यानधारणा कीजे धीर ॥४९॥

चित्त चंचळ छे माटे ते हाथमां आववुं, खीले बंधावुं बहु कठण-

छे, पण ध्यान अने धारणाना अभ्यासथी ए तुरत ठेकाणे आवी जायछे, प्रवृत्ति करतुं बंध पडेछे; माटे हे राम ! धीर थइने धारणादि करवां.

ध्याननणां छे आठज अंग (ते) सम्यक* पातकनो करि भंग । आसन प्राणयम प्रत्याहार यमनिमध्यान धारणा सार ॥ ५० ॥

अष्टमुं अंग ते छिं समाध्य ए अनुभवतां टलि सव व्याध । अष्टांगयोग एवो तां कह्यो मन जितवा योगीए ग्रह्यो ॥ ५१ ॥

अने आठमुं अंग समाधि छे एनो अनुभव कर्याथी व्याधिमात्रनो, दुःख मात्रनो नाश थइ जायछे. ए प्रमाणे अष्टांग योग बताव्यो. महात्माओए मन वश कराने अर्थेज एने साधेलो छे.

सकल अवेव शरिरनां जेह एकान्त रहि स्थिर कीजे तेह । मुक्ति पांमवा ए साधंन प्रथमे जीतो चंचल मंन ॥ ५२ ॥

शरीरना बधाए अवयवोने एकान्तमां बेसी स्थिर करवा ने ए प्रमाणे प्हेलुं अंग जे आसन ते साधवुं. मन चंचल छे माटे एने प्रथम स्थिर करी रयो, ने मोक्षप्रदाता एवो जे योग त्हेनुं साधन करो.

---

* सम्यक- संपूर्ण रीते पातक- पाप, मलीनबुद्धि.

स्वइच्छाए विचरे जेह चपल चित्त तां भणिये तेह। स्वचित्तनें जे वश नव करे (वली) वली ध्यान वार्ता ऊचरे ॥ ५३ ॥

चित्त स्वेच्छाए करीने पदार्थ कल्पना करेछे, विषय शोधवा निकळेछे; माटे एने चंचळ कह्युंछे. आवा चंचळ चित्तने जे वश करी शकता नथी ने ध्यान उपासनानी मात्र वातो कर्या करेछे एमनो पुरुषार्थ मिथ्या छे. शास्त्र वांच्यां, पंडित कहेवाया, ज्ञानी ने वेदान्तीनी छाप लीधी, बुद्धिविलास करतां बहु आवड्यो पण ए कशायी सिद्धि नथी. एवो वाणीविलास तो जगतने ठगवानो दंभ छे. ने एवा मिथ्या आडंबरथीज वेदान्तीओ " शुष्क " ने नामे वगोवाया छे.

निर्लज नर ते जांणो सही जे चित जितवा समरथ नही। ध्यानवारता कारि बहु अर्थ पण चित्त जितवा सामि* असमर्थ ॥ ५४ ॥

माटे नानाप्रकारनी ध्यानवार्ता मात्र करी जाणनार पण मनने वश राखवानो समय आवतां जे निर्बळ थइ जाय छे,विषय प्राप्त थयलो जोइ मोह पामी जायछे, गळी जायछे, शिथील थिथील थइ जायछे, एमने तो निर्लज समजवा; कारणके पोतानां नीच कर्म करी लोकोना आगळ डहापण बतावतां तेओने लज्जा प्राप्त थवी जोइए ते थती नथी.

* पाठान्तरः— खिपि.

ते नर निर्लज मूरख राम जेहनुं चित नहि एके ठाम। मनने एम करे वश (नर) जेह सकल पदारथ पामे तेह ॥ ५५ ॥

जे पुरुषनुं चित्त एके ठाम ठरीने रहेतुं नथी, हमेशा ममतुज रहेछे ते पुरुष पोताना स्वरूपथी अज्ञान रहेछे. पण जे मनने वश करछे ते पूर्णकाम थायछे, एना बचाए पदार्थो सघाइ जायछे, कारण-के मोक्षपद पामता बीजा बघानी तृष्णाज जती रहेछे.

समस्त देव तणो मन देव (जांणो) राघव कहुं ए अव-शमेव। सकल अर्थ मन जीते होय। रिद्धि सिद्धि निधि पांमे सोय ॥ ५६ ॥

मन देवमात्रनो देव छे; कारणके ते परब्रह्मस्वरूप छे ए वात सत्य छे ते हे राम ! त्हमे जाणी ल्यो. मन जीत्याथी अर्थमात्र सिद्ध थायछे. मन जेणे जीत्युछे एवा पुरुषने रिद्धि सिद्धि ने नवे निधि प्राप्त थायछे, कारणके मोक्षप्राप्तिमा अर्थ मात्रनी प्राप्ति समाइ जायछे

(जे) मन जीत्या विण साधन करे एक क्लेश ते-हनि ऊगरे। व्रथा कृत्य सकल तेहनूं निश्चल चित नोहे जेहनूं ॥ ५७ ॥

प्रथम मन जीत्या वगर मुक्ति मळवानुं कोई साधन आदरे, योगादिनो अभ्यास करे, तो अर्थसिद्धि तो नहिज थाय पण एने

क्लेशज प्राप्त थशे. कारणके जेनुं चित्त निश्चल कहेतां स्थिर नथी रहेनुं कृत्य मात्र व्यर्थ जायछे, अभ्यास छूटी पडेछे, ने एम निराशाथी दुःख थायछे.

निश्चल चित्तनुं कारण एह स्वस्थ थई सांभलजो तेह। वल्लभ वस्तु अपांमे राम जेहनुं चित्त सदा रहे ठांम ॥ ५८ ॥

हवे निश्चल चित्तनुं लक्षण शुं छे ते कहुंछुं ते हे राम ! स्वस्थ थई सांभळो. जे पुरुषनुं चित्त सदाए स्थिर रहेछे, ठामनुं ठाम रहेछे, रहेने कोई प्रिय वस्तुनी प्राप्ति करवानी होती नथी; कारणके रहेनी विषयवासना टळी गइ होयछे, ने तेथी कोइ पण पदार्थ रहेने प्रिय के प्राप्य लागतो नथी.

स्थीर मंन नर होये जेह जिवनमुक्त भणीए तेह। जदपी नर त्रिभुवन जय करे (पण) मनना जय व्यण अर्थ न सरे ॥ ५९ ॥

जे पुरुषनुं मन स्थिर थयलुं छे रहेने जीवनमुक्त जाणवो. कोइ त्रिभुवनने वश करी ले तेम छतां रहेनाथी मन जो न जीतायुं तो एनो अर्थ सरतो नथी, बंधन छूटतां नथी.

पंडित सुर नां करशो गर्व मन जीते जीत्यूं ते सर्व। जां (हां) लगि मननो जय नव होय तां लगि माया (पूर्ववत्) सर्व ही कोय ॥ ६० ॥

पंडित हो, देव हो, पण कोये अभिमान करवानुं नथी के मनमां शुं जीतवु छे. प्रत्यक्ष कर्मनो त्याग करी बेसशो पण कंइ निष्कर्म थवाशे नहि, विषयोने हठ करी नहि भोगवो पण मन तो एमां ममतुं ने ममतुं रहेशे; माटे प्रथम वश करवानुं मन छे तेहने वश करी ल्यो, जीती ल्यों, एटले प्रकृति मात्र वश थइ जशे. मन न जीताय त्यां सुधी स्थिति पूर्ववत्‌ज जाणीं लेवी: यम नियमादि पाळवानो आडंबर कर्यो, ने पाना पुस्तक फेरवी गया एथी कंइ सधातुं नथी, स्थिति बदलाती नथी.

मन जीत्यानूं साधन करो अवर भाव सघलो परहरो। मन जयनां साधन जे च्यार सुण राघव ते कहुं निरधार ॥६१॥

माटे बीजो वधो धंधो—उद्योग—अभ्यास पडतो मूकी प्रथम मनने वश करवानुं साधन करो. मनना उपर जय मेळववानां चार साधन छे ते हे राघव! हुं कहुंछुं ते श्रवण करो.

प्रथम संतसंगतविषि राग विजूं विषयतृष्णानो त्याग। त्रिजुं अध्यातमवस्तुविचार चोथूं प्राणायम निरधार ॥६२॥

संतसमागमनी प्रीति ए प्रथम साधन छे. विषय तृष्णानो त्याग बीजुं साधन छे. त्रीजुं साधन अध्यात्मवस्तुविचार ने चोथुं प्राणायाम छे.

करता ए चारनो उपाय थोडे काले मन वश थाय। मन जीत्यानुं फल छे जेह एक चित्त सांभलजो तेह ॥६३॥

ए चार साधन वडे थोडा वखतमां मन स्थिर थायछे. मन स्थिर थयानुं, जीतायानुं शुं फल छे ते हवे बतावुंछुं ते हे श्रोताओ! एकाग्र चित्ते श्रवण करो.

मन जीत्येथि मनोरथ जाय सकल मनोरथ पूरण थाय
जगत सर्व पूरणं ब्रह्म जोय भिन्न न भासि क्यवारे कोय
॥ ६४ ॥

मन जीतायुं एटले मनोरथ जता रहेछे, शमी जायछे; कारणके पछी बधाए मनोरथ, अभिलाषो पूर्ण थइ जायछे. प्राप्य वस्तुज रहेती नथी, बधुं जगत ब्रह्मथीज पूर्ण भरेलुं दृष्टिए आवेछे, अने कदाचित्त कांइ एक आत्मार्थी जूठुं भासतुं नथी, बधुंए आत्मरूप वर्तायछे.

वादविवाद रखे करि कोय मनपूरण पूरणता होय ।
कहुं दृष्टान्त तेहनुं एक राखो हृदि ए ज्ञानविवेक ॥६५॥

आ बाबतमां कोइए वादविवाद करवानो नथी, लेश पण शंका लाववानी नथी. मन पूर्ण थयुं, ब्रह्माकार बन्युं, एटले सर्व अर्थनी सिद्धि थइ गइ एम जाणवुं, प्राप्त वस्तुज न रही; एनुं एक दृष्टान्त आपुंछुं ए ज्ञानविवेक ग्रहण करो.

उपांन (सहित) चरण छे जेनां राम (तेहने) चर्म
विना ठालो नहि ठांम । (एम) अद्वैतबोध ज्यारे
मन होय त्यारे ब्रह्म निरंतर जोय ॥ ६६ ॥

जोडा पहेरीने कोइ चाल्तुं होय त्यारे ए ज्यां पग मूके त्यां चर्म विना एने बीजुं न देखाय, बीजानो स्पर्श न थाय; तेम अद्वैतबोध पाम्या पछी, मन ब्रह्मरूप बन्या पछी, ज्यां दृष्टि जाय त्यां सर्वत्र निरंतर ब्रह्मनांज दर्शन थाय, जड पदार्थो नजरे न चहडे.

अद्वैतभाव ते मुक्ति प्रमाण्य द्वैतभाव (ते) दृढ बंधन जांण्य । द्वैत अद्वैत तणूं रुप जेह निश्चें नर सांभलजो तेह ॥ ६७ ॥

अद्वैतभाव एटले वस्तुमात्रनो अभेद एज मुक्ति छे, अने द्वैतभाव कहेतां भेदबुद्धि एज दृढ बंधन छे. कारणके भेदबुद्धि छे त्यां सुधी कामक्रोध, रागद्वेष बधुंए रहेवानुं, ने रहेने लइ करेला कर्म जन्म मरणनेज आपनार छे माटे ते बंधन छे. आत्मसत्ता समाया पछी रागद्वेष रहेतो नथी, वासनानोज लय थइ जायछे, एटले निष्काम बुद्धिनां कर्मनुं बंधन नथी; बंधन नथी, एटले जन्ममरण नथी, मोक्षज छे. आवा द्वैत अद्वैतनुं लक्षण बतावुंछुं, ते हे श्रोताओ ! अवश्य सांभळो.

द्वैतभावनूं लक्षण एह असत्यने सत्य मांने तेह ।
अहंजीव संसारी रूप माया मोहि पाम्यो अँध कूप ॥ ६८ ॥

द्वैतभावनुं लक्षण आवुं छेः एवी पुरुष असत्य पदार्थोने सत्य मानी लेछे, अहंपदने पामी जीव बनेछे ने ते संसारमांज तद्रूप थइ रहेछे. वळी अंध मनुष्य जेम कूवामां जइ पडेछे तेम मायाना मोहे करी ते संसाररूपी कूवामां निमग्न थइ जायछे.

एह भाव जेहनि मन होय दृढ बंधन बांध्यूं मन सोय।
अद्वितभावनुं लक्षण सार जे अे(हे)ता होये भवपार ॥ ६९ ॥

माटे द्वैतबुद्धिवाळा पुरुषनुं मन दृढ बंधनथी बंधायलुंछे एम जाणवुं. अद्वैतभाव पाम्याथी संसाररूपी समुद्रनी पार उतरायछे, जन्ममरण मटी जायछे, मोक्ष मळेछे; माटे तेहेनुं लक्षण कहुंछुं ते हवे सांभळो.

(ते) ब्रह्मविषे निश्चल थइ रहे अहंब्रह्म सर्व ब्रह्म कहे।
चराचरे ब्रह्म पेखे जेह दृढ मुक्त जांणो जन तेह ॥७०॥

अद्वैतभावने पामेलो पुरुष ब्रह्ममांज स्थिर थइ रहेछे; हुंज ब्रह्मछुं एवी बुद्धिवाळो सर्वत्र ब्रह्म छे एवुं वदेछे. चर अने अचर एटले पदार्थ मात्रने ब्रह्मरूप जोनारनुं मन जन्ममरणना दृढ बंधनमांथी मुक्त थयुंछे एम जाणवुं.

चित्तने लये लय संसार वालि वलि राघव कहुं निरधार।
सजाति विजाती हूं तूं [ज्यारे] टलें ब्रह्मभावि निश्चें चित गले ॥ ७१ ॥

चित्तनो लय थगे संसार लय पामी जायछे ए सिद्धान्त हे राम ! हुं पाछो फरी कहुंछुं. एथी सजातीय, विजातीय, हुं, तुं, एवा भेद टळी जायछे ने एम ब्रह्मभाव पमायाथी, अद्वैत अनुभव्याथी चित्त निःसंदेह गळी जायछे, ब्रह्मरूपज बनी जायछे.

चित गलतां परब्रह्मज रहे वसिष्ट राघव प्रत्ये कहे ।
शान्त नित्य अनामय जेह सघळे पूरण व्यापक तेह ॥७२॥

चित्त गळी जतां ते परब्रह्मरूप थइ रहेछे परब्रह्म शांत, नित्य, अनामय कहेतां निर्मल-विशुद्ध, सर्वत्र पूर्ण अन सर्व व्यापक छे.

(ए) आत्मज्ञान हृदे जेहने ब्रह्मज्ञानि कहींये तेहने ।
ब्रह्मभावे मन ब्रह्ममां भळे जन्ममरण संशे सव टळे ॥७३॥

आवुं अध्यात्मज्ञान जेना हृदयमां भरी मूक्युंछे, रहेने ब्रह्मज्ञानी कहेवो; ब्रह्ममात्र पमायाथी मन ब्रह्ममां मळी जायछे अने जन्ममरणनी शंका मात्र टळी जायछे, मोक्षपद सिद्ध थायछे.

जे जन पांम्यो परमानंद (तेहने) को काळे भासे नहि द्वंद । तेहनि उपमा शी कहुं राम पाम्यो जेह परम निजधाम ॥ ७४ ॥

जे पुरुषने परमानंदनी प्राप्ति थइछे रहेने कोई काळे बंधन लागतुं नथी. जे पुरुष परम पदने एटले निज स्वरूपने पाम्योछे रहेने हे राम ! शी उपमा आपुं ! अर्थात् उपमा आपी शकाती नथी; कारणके एना जेवी बीजी स्थितिज नथी.

तजो प्रमाद धिरज मन धरो मूढपणूं सघळूं परहरो ।
अंतर राखो ए अभ्यास कर जोडी कहि नरहरिदास॥७५॥

इति श्रीवसिष्टसारगीतायां मनोलय नाम प्रकरणं चतुर्थम् ॥ ४ ॥

प्रकरण ५.

वासनोपशम.

पूर्वछायो.

मननो लय ते वर्णव्यो कहूं वासना (लय) तेह ।
सावधान थइ सांभलो हवे कहूंछूं तेह ॥ १ ॥

संसारनो लय थाय माटे त्हेना कारणरूप मननो लय करवानी वात संपूर्ण रीते पाछला प्रकरणमा कही दीधी; तोपण ज्या सुधी वासना छे, विषयनी भावना अंतरमा उंडी भरी मूकीछे, त्या सुधी मननी प्रवृत्तिओ बंध थवानी नहि. मन मारवुं होय, एने शान्त, निश्चल, चिद्रूप बनावी मूकवुं होय तो प्रथम वासनानी शान्ति थवी जोइए. पदार्थने, विषयने जोताज त्हेमा भोगबुद्धि उपजी आवेछे ने अंतरनी उंडी वासनाने लीधे आनेज गीताजीमा काम कह्योछे, अने जहि शत्रुदुरासदम् कही एनो नाश करवानु श्रीकृष्ण परमात्माए उपदेश्युछे. एज उपदेश अहीं गुरु आपेछे वासनानो उपशम करवो ने एनुं स्वरूप जाणवुं ए बहु सूक्ष्म वात छे. *

---

* मनुष्य ज्यारी पेठे सावधान–एकचित्त होय तोज ए सूक्ष्म वात लक्ष्मां आवे, कहिए मन भमवुं न जोइए क्याए चित्तवृत्तिओ परावावी न जोइए, म टे कहेछे क हे श्रोताओ ! सावधान थइने आ वासनोपशमनो उपदेश सांभळो.

सम्यक टलि नहि वासना* ए मन ऊभुं थाय[1]। विषय वासना जिणि टळे कीजे एह उपाय ॥ २ ॥

संपूर्ण रीते वासनानो त्याग न थाय त्यांसुधी मन पाछुं उभुं थवानुं, मन उभु थयुं रहेनी साथे संसार ने संसारना विषयो, चिन्ताओ ने दु ग्वसुखना संयोगो पूर्ववतज उभा थवाना, माटे विषय भोगववानी जे सूक्ष्म वासना छे रहेने टाळी दो एवुंज कोइ साधन करो के ते हमेशने माटे शान्त थइ जाय चिद्रूपने मन बनावनार ए वासनाज छे, एटले मननुं ए कारण छे. माटे ससारना कारणनु पण कारण छे. रहेनो त्याग थयो एटले अनायासे बधुंए शान्त थइ जवानुं.

जां लगि ऊभि वासना तांलगि मन निर्धार। मन ऊभे हूं तूं बने हूं तुं ते संसार ॥ ३ ॥

उपरनीज वात अहीं कहेछेः वासना उभी छे त्या सुधी मन पण अवश्य उभुं जाणवुं, ने मनज हुं तु एवी भेद बुद्धि उपजावे छे. आवु द्वैत एज संसार, हुं तुं एवो भेद न होय तो संसारनी कल्पना पण न समेव.

बीज सकलनूं वासना विश्व धासने होय। सय वासना जिणि टले कीजे साधन सोय ॥ ४ ॥

माटे बधा प्रपंचनु ने तेथी बधा दु ग्वनुंज बीज वासना छे बीज-माथी जेम वृक्ष, पत्र, पुष्प, फल आदिनो विलक्षण रीते विस्तार

* मूळ -सम्यक वासना टल्याविना

[1] मूळमा -होय.

थायछे, तेम वासनामांथी विश्वनो, विश्वना संजोगोनो, ने त्हेना दुःख-रूप परिणामनो विस्तार थायछे; माटे तुरतज वासना टळी जाय, ने मनोज नाश थाय, एवुंज कंइ सत्य साधन करो, बीजा प्रयासो मूकीदो.

श्रीरामोवाचः—

कर जोडी राघव कहे (हुं) लागुं मुनिवर पाय । ते
साधन गुरुजी कहो जिणे वासना (सघली) जाय ॥५॥

अर्थ स्पष्ट छे.

श्रीवसिष्ठोवाचः—

स्वात्मविचार धरो चित राम कवण देह कवण हुं* नाम ।
बीज दुष्ट द्रुमनूं तां जेह नाश विचारे पामे तेह ॥ ६॥

वासनाने शमाववानुं साधन साधवानुं कह्युं, वासना बीजनेज बाळी मूकवानुं बताव्युं, पण ते शी रीते ? तो गुरुजी कहेछे के हे राम ! स्वात्मविचार करो, अर्थात् पोतानाज आत्मानुं स्वरूप विचारो. ते आ रीतेः हुं एवी जे संज्ञा छे ते कोण ने आ देह कोण ? हुं कहेनार ते कंइ देह नथी. देह तो अवाचक छे, माटे हुं ते देहथी भिन्न न्यारो छे. आवा आत्मविचारथी संसाररूपी दुःखरूपी वृक्षनुं बीज जे वासना त्हेनो नाश थशे.

अहंवासना भणीये जेह संसार वृक्षनुं विज तां तेह ।
ब्रह्मज्ञानि ततक्षण टले उयम अग्नी आवरि विज बले
॥ ७ ॥

---

* मतमो आत्मा

* जे बीजमांथी संसार स्फुरी आवेछे, विस्तारथी फाली निकळेछे, ए वासना ते बीजा कशानी नहि पण अहंनी छे. हुं एवी व्यक्ति उभी थवाथी संसार वृक्ष उगी निकळेछे, माटे उपशम करवानो ते अहंवासनानो छे. ए वासना बीजा कोइ साधनथी टळती नथी, पण हुं ते आत्मा, ब्रह्म, एवुं सर्वमय ज्ञान थवाथी क्षणवारमां लय पामी जायछे, ने अग्निथी जेम वृक्षबीजनो अंदरनो गर्भ सुद्धांए बळी जायछे तेम ब्रह्मज्ञाने अहंवासनानो अत्यन्त नाश थायछे. ब्रह्मज्ञान थया पछी मन के संसार उभां थतां नथी.

दग्ध बीज ऊगे नहि ज्यंम निर्वासनि चित जांणो त्यंम ।
नीर्वासनी चित जे तात पूर्ण ब्रह्मतां ते साक्षात् ॥ ८ ॥

बळी गयलुं बीज जेम उगतुं नथी तेम जे चितमांथी वासना उडी गइ, एटले जे निर्वासन थयुं तेहेमांथी संसार उपजी आवतो नथी, पण ए पछी साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तमज थइ रहेछे; ए रूपे, ते पोताना शुद्ध स्वरूपे भासेछे.

विचारादर्शशुं जे छे लग्न ते चिद्रूप विषे छे मग्न ।
आधिन व्यापे तेहनि राम जेहनुं मन धीरय करि ठांम
॥ ९ ॥

विचाररूपी दर्पणमां जे जोइ रह्योछे ते चिद्रूपमांज मग्न थइ रहेछे, अर्थात् आत्मानुं प्रकट दर्शन थवाथी ए ब्रह्मरूपज बनेछे. हे राम ! स्थिर बुद्धिए करीने जेनुं मन ठाम बेठुंछे तेहेने आधीन रही-

* मूळमां:— होय.

तेज प्रपंच पण वर्तेछे अर्थात् एने कशामांए प्रतिकूळता लागती नथी, बधो व्यवहार सरळ ने सुखरूप थइ रहेछे. कारणके परम सुख व्यवहारमांथी प्राप्त करवानुं होतु नथी, पण एहेना निर्वाहमांज ते रहेलुं छे. कंइपण क्षोभ विना एनो निर्वाह करतां आवडवुं जोइए.

अनेक सुखदुःख उपजे शमे (पण) निश्चल चित्त चळे नहि क्यमे । (ज्येम) चित्रलता वायें नव्य चले [एम] अचल* बुध्य ते ब्रह्मनां भले ॥ १० ॥

जे पुरुषनी बुद्धि निश्चळ थइ छे एटले ब्रह्मरूप बनीछे ते अनेक सुखदुःख उपजवाथी ने न्हेमना लयथी क्षोभने पामती नथी, कशाथीए चलित थती नथी. कारणके ए सुखदुःखनो पोते भोक्ता छे एवुं स्थिर बुद्धिवाळो पुरुष मानतो नथी. संसारमां अनेक मनुष्यो जन्मेछे ने मरेछे, अनेक सारा नठता संजोगो बनेछे, कंइ राज्यनां राज्य स्थपायछे, ने उलटी जायछे, अनेक शान्ति विग्रहो चालेछे, पण आपणने जेम ते साथे कंइ लेवा देवा नथी तेम स्थिरबुद्धिवाळाने पोताना नामना संसारनां सुखदुःखनी गणना होती नथी. चित्रेली लता वायुए करी चलित थती नथी तेम असंग बुद्धि ब्रह्माकार थती रहेछे, क्यारेए चळती नथी.

अध्यातम विद्यातणो विचार तत्त्वज्ञान तेहनि निर्धार । मानु मात्र पंडित विद जेह ब्रह्मज्ञान कहे कवि तेह ॥ ११ ॥

आत्मानुं ज्ञान प्राप्त थवाने जे विचार करवो त्हेनुं नाम तत्र-

ज्ञान जाणवुं. महात्माओ, पंडितो, विद्वान पुरुषो, आवा आत्मज्ञानने, तत्त्वज्ञाननेज ब्रह्मज्ञान कहेछे. आजना युगमां शास्त्रोनो, तत्त्वज्ञानना ग्रंथोनो पार रह्यो नथी, पण ए बधा ग्रंथो ते आ लक्षणथी तत्त्वज्ञानना ने शास्त्रना ग्रंथो नथी एवुं विवेकी जनोए समजी लेवुं.

दुग्धमांहि माधर्य छिं ज्यम ज्ञेय ज्ञानमां जांणो त्यम । ज्ञान थको ज्ञे अलगो नथी जो जो वेद पुराणे कथी ॥१२॥

आत्मामांज परमात्मा रहेलोछे. ज्ञान जे आत्मा त्हेमांज ज्ञेय परमात्मा छे. ते कोनी पेठे तो कहेछे के दूधमां मधुरता, मीठाश रहीछे त्हेनी पेठे. वेदपुराण आदि ग्रंथो तपासी जो जो, ज्ञेय ने ब्रह्म ते ज्ञान जे आत्मा त्हेनाथी क्यारे पण अलग एटले भिन्न नथी.

आत्मभाव हृदये जेहनें भिन्न न भासे ते तेहनें सम्यक ज्ञानविचार छिं* (जेहने) हृदे ज्ञाता ब्रह्म विना नव्य वदे ॥ १३ ॥

अखिल विश्वमां, पदार्थ मात्रमां ज्हेनी आत्मभावना थएलीछे "आत्मवत् सर्व भूतेषु यः पश्यति" एवुं जे समदर्शन पामेलोछे, त्हेने पोतानाथी ब्रह्म कंइ भिन्न भासतो नथी. हे राम! जना हृदयमा सम्यक् एटले विवेक साथे ज्ञानविचारो भरी मूक्याछे एवा ज्ञानी पुरुष ब्रह्म विना बीजूं कंइ छ एवुं कदापि वदतो नथी.

समदरसी जन† कहिये तेह सघले आतमा जांणे जेह ।

---

* मूळमां:-होय. † मूळमां संत

(ब्रह्मा) विष्णु रुद्र आदिक जे देव कृपा करे ते अ-
वश्यमेव ॥ १४ ॥

सर्वत्र समदृष्टिवाळा साधु जन, पवित्र पुरुष बधेय एक आत्माज विलसेछे, प्रकाशेछे एम जाणेछे. एवा पुरुषना उपर ब्रह्मा, विष्णु अने महेश्वरनी तरतज कृपा थायछे; अर्थात् ए त्रिपूटी रूप मे सच्चिदानंद स्वरूप रहेनो एने लाभ थायछे.

ब्रह्मविद ते तम जांणो राम जे घट नहि वसि तृष्णा*
काम । वस्तुविचार हृदयमां ग्रहे संत ब्रह्मविद तेहनि
कहे ॥ १५ ॥

हे राम ! हवे ब्रह्मविद कहेतां ब्रह्मने जाणनार पुरुष शी रीते ओळखाय ते सांभळो. जे पुरुषने कोइ पण जातनी तृष्णा के काम एटले वासना होती नथी, पण पदार्थोने असत्य जाणी जेणे तजेलाछे, एमांथी पोतानी वृत्ति उठावी लीधीछे ने जे केवळ एकज वस्तुनो, परब्रह्मनो विचार हृदयमां संघरेछे, तेने साधुजनो ब्रह्मवेत्ता कहेछे.

विश्व कवण नें कवण हुं एह निरंतर एम विचारे जेह ।
जगत असत जांणे जे राम विचारवंत तां तेहनुं नाम
॥ १६ ॥

आ बधुं देखायछे ते विश्व शुं ने हुं ते कोण एवो अहर्निश विचार करी करीने जगतनुं मायिक स्वरूप जे जाणी लेछे ने हुं ते

* मूळमां कामना

अमर आत्मा छुं एवो निश्चय करेछे ह्हेने हे राम! विचारवंत कहेवो. दुनियामां विचारवंत ने डाह्या पुरुषो बहु गणायछे, पण ए व्यवहार खोटो छे. जे सत्यासत्यनो विचार करी ह्हेमनुं स्वरूप ओळखेछे तेज खरेखरा विचारवंत छे, ने बाकीना मूर्ख, अज्ञानी छे एम जाणवुं.

मुरखपणूं बधुं* जेहनुं गयूं तेणे तत्त्व जथारथ लह्युं। विश्व चराचर इक ब्रह्म जोय भिन्न न भासे तेहनि कोय ॥ १७ ॥

मूर्खपणुं एटले अज्ञान, ने ते पोताना स्वरूपनुं ए जेनामांथी विचारे करीने जवा पाम्युं छे ते पुरुषे तत्त्वनी वात बराबर जाणी लीधीछे एम जाणवुं. जे स्थावर जंगम बधाए विश्वने एक ब्रह्म स्वरूपेज जूएछे ह्हेने कशुंए ब्रह्मथी ने पोताना आत्माथी भिन्न भासतुं नथी, ए सर्वमां ब्रह्म ने ब्रह्ममां सर्व समायछे जुएछे.

आत्मबुद्धि हृदि जेहनि नहि (तेहने) द्वैतवासना उपजे सही। (ज्यम) मृगजल ने विदु जल नव्य कहे रविप्रकाश जांणीने रहे ॥ १८ ॥

पण जेनामा आत्मबुद्धि नथी ह्हेनामां ब्रह्म ने विश्व जूदां एवी द्वैतवासना एटले भेदबुद्धि उपजी आवेछे ए निःसंशय छे; पण खरुं जोतां तो आ जे विश्व ते मात्र भासरूप छे. जे ज्ञानी छे ते मृगजळने जळ कहेता नथी, ने ह्हेनी प्राप्ति माटे दोडता नथी. कारणक तेओ एम जाणेछे के एतो मात्र सूर्यना किरणनो प्रकाशज छे. सत्य जे

* मूळमां:- सघळूं.

ब्रह्म रहना विश्व प्रकाश मात्र छे ने मृगजल तृष्णा छीपववाने कोइ दिवस प्राप्त थतुं नथी तेम सुखनी अपेक्षावाळा जीवने मृगजळ जेवा असत्य संसारमांथी सुखना विषय क्यारेए मळता नथी.

(एम) ज्ञानि आत्मबुद्धि हृदि धरे नाना बुध्य सकल परहरे। (जे) सकल निरंतर न्याळे* ब्रह्म ते योगी निश्चल निष्कर्म ॥ १९ ॥

ज्ञानी पुरुष सदाए आत्मबुद्धिज राखी रहेछे, ने नाना बुद्धि एटले ब्रह्म विश्वने, पदार्थो, पदार्थोने जुदा जुदा मानवानी पृथक् भावना मात्रनो त्याग करेछे जे पुरुष निरतर बधायने एक ब्रह्मरूपेज न्याळेछे ते परम योगी छे. वळी ते निश्चळ छे, क्यारेए ते आत्मबुद्धिथी चळतो नथी ने वस्तुवस्तुमा भेद जोतो नथी. आवो पुरुष खरेखर निष्कर्म छे, जगतना निर्वाह माटे करेलां कर्मनो रहेने स्पर्श थतो नथी.

योगि वासनानो क्षय होय त्यारे चित चिद्रुप ते होय। चित चिद्रूप थयूं जिणिवार (तेहनें) उपजी वासना नहीं लगार ॥ २० ॥

चित्तवृत्तिना निरोधने योग कहेछे. एथी वासनानो लय थइ जायछे. वासना शमी जतां चित्त चिद्रूप कहेतां ब्रह्माकार बनेछे. आवी स्थिति प्राप्त थया पछी फरी कोइ दिवस अहंवासना के विषयतृष्णा जराये उपजवा पामती नथी.

* मूलमां निहाले.

तजी वासना चित ब्रह्म धरो (पछी) जे इच्छा आवे ते करो । एम थई वरते रघुराय ते नर कर्मे नव बंधाय ॥ २१ ॥

आ प्रमाणे वासनानो त्याग करी ब्रह्ममांज चित्तवृत्ति परोवो, तल्लीन थइ जाव, पछी स्वेच्छाए वर्तो, तो कोइ वाते बाघ आवशे नहि. हे राम! आवी स्थितिने पामेलो पुरुष रहेने हाथे थतां कर्मथी बंधातो नथी, कारणके निष्काम बुद्धिए करेलां कर्म लोकोपकार ने प्रपंचना, उपाधिना निर्वाहने माटेज होयछे.

(जेणे) जोग जुगत सत आवे राम देखाडूं तुजने ते ठाम । साधुसंग सतशास्त्र करी जोग जुगत ते आवे खरी ॥ २२ ॥

जे स्थानथी आवो योग प्राप्त करवानी खरी कूंची हाथ आवे एवुं स्थान हुं रहमने बतावुंछु: संत समागम ज्यां थतो होय, ज्यां सत्शास्त्रोनुं श्रवण करवा मळे एम होय, त्यां अवश्य मनु एवा स्थाने जवाथी, समागम आभथी, ने श्रवणथी योग शीखवानी युक्ति जडशे ए नि संदेह छे.

सतमति राघव सांभल सोय संगति शास्त्र परायण होय* तेणे (करी) आवे तेहनि ज्ञान (पण बहु) काल तणूं ना करवूं मांन ॥ २३ ॥

---

* मूळ–जे सत सगती सत शास्त्रपर होय

हे सत्यमति, विचारवंत रामचंद्रजी! सांमळो, साधु समागम अने शास्त्र श्रवणना अभ्यासथी पुरुषने ज्ञान थायछे, वासना शमावी आत्मयोग पामवानुं शीखायछे. एमा वखतनी गणत्री करवानुं कइ कारण नथी. अनेक जन्मे पण जे लाम न पमाय, अमुक वये जे बोध ग्रहण न थाय, ते महात्मा अने शास्त्रनो प्रसाद मळशायी एक निमिषमां मळी जायछे.

ब्रह्मनेष्टा बुध्य पांमे तेह एकाग्र सत संगत रहि जेह। एकचित्त विण सिद्धि न होय साचूं राघव कहुंछुं सोय ॥ २४ ॥

एक मने, बीजा कोई पण विषयमां चित्तवृत्तिने न जवा देतां जे साधु पुरुषोना समागममां रातदिवस रहेछे रहेनामां ब्रह्मनिष्ठानो उदय थायछे, पण आवो लाम एकचित्त थया विना मळतो नथी, ए वात हे राम ! हुं सत्यज कहुंछु. ब्रह्ममां ज्यारे वृत्ति परोवाय ने रहेमां स्थिर थाय त्यारे ब्रह्मनिष्ठा आवी कहेवाय.

साधू संगनुं फल छे जेह एकमना सांभलजो तेह। संत पुरुषनो करता संग भवदुःखकेरो होये भंग ॥ २५ ॥

साधु संगनुं फल घणुं मोटुं छे ते हुं बतावुंछुं ते हे श्रोताओ ! एकचित्ते सामळो. संत पुरुषनी संगतिमा रहेवायी आ संसारना—जन्ममरणना दुःखनो भंग थइ जायछे, एनो पार आवी जायछे.

तत्वबोध पांमी जे सोय (जेणे) देहादिक सव जूठुं

होय । भवे भावना सघली टले सतसंगे परमेश्वर मले ॥ २६ ॥

एथी तत्त्वबोध थायछे एटले सत्य जे आत्मा ते सारी पेठे ओळखायछे ने देहादिक प्रपंच जूठो छे एवो निश्चय थइ जायछे. आम सत्यासत्यनो निश्चय थयाथी संसारनी भावना मात्र टळी जायछे. संसार एवुं द्वैत उपजतुं नथी, ने परमात्मानी प्राप्ति थायछे एटले मोक्ष मळेछेः बंधननी असत्य कल्पना, भ्रान्ति ते खसी जायछे.

साधन त्रण्य सुणो ते राम जिणें वासनानो टालि ठांम । उपाजि हृदये आत्मज्ञान (अने) सद्य टले देहाभिमान ॥ २७ ॥

हे राम! मुख्य त्रण साधन छे ते हवे कहुंछु ते सामळो. एथी वासनानो ठाम टळी जशे अर्थात् वासनाने रहेवानुं कंइए स्थानज नहि रहे; वळी आत्मज्ञाननो उदय थशे ने जे मिथ्या देहाभिमान प्रवर्तेछे ते टळी जशे.

केवल ब्रह्मनो करे दढाव केवल ब्रह्म विषे इक भाव । केवल ब्रह्मशुं अनुसंधान तेनुं नाम ते आत्मज्ञान ॥२८॥

केवळ एक ब्रह्म सिवाय बीजुं कंइ नथी, विश्व ब्रह्मांड ते एनां उपजावेलां, एना भासरूप ने मिथ्या छे एवा विचारने जे पुरुष दृढाव्या करे, ब्रह्म अने हुं आत्मा ते भिन्न नथी पण एकज छीए एवो जे एकभाव पामे, अने पछी केवळ ब्रह्मथीज अनुसंधान राखीने वर्ते रहेने आत्मज्ञान थयुं कहेवाय, नहि तो नहि.

(जे) ब्रह्मामृतनो करे अहार विषवत जांणे ए संसार। (जेहने) अज्ञानी अमृत करि भजे ज्ञानी ते विषवत करि त्यजे ॥ २९ ॥

आवुं आत्मज्ञान पामीने पछी ते सदैव ब्रह्मसुधानेज पीधा करेछे, एनी साथेनी एकतामांज परमानंद अनुभवे छे, ने आ संसार ते झेर जेवो छे एम जाणी रहेनो ते त्याग करेछे. अज्ञानी जनो मिथ्या संसारने अमृत जेवो जाणीने रहेनो भोग सज्या करेछे पण ज्ञानीओ तो ते विषनो भरेलोछे एम जाणी रहने तजेछे.

ज्ञान अज्ञाननुं लक्षण जेह सांभलज्यो रघुपति तम तेह। ज्ञान भाव हृदयमां राख्य अज्ञानपणूं ते सघलूं नांख्य ॥ ३० ॥

अर्थ स्पष्ट छे.

दृष्टिपदारथ सत्य करि ग्रहे धन तन स्त्री प्रति पूरण (थइ) रहे। एणे अज्ञाने (उभो) संसार अज्ञाने बंधन निरधार ॥ ३१ ॥

आ बधा मिथ्या दृष्टि पदार्थोने सत्य मानीने पुरुष रहेमनुं ग्रहण करे, वळी द्रव्य, देह अने स्त्री ए विषयोमां संपूर्णरीते तल्लीन थई रहे एनुं नाम अज्ञान. ए अज्ञानथीज आ सर्व संसार नजरे दीसी आवेछे ने बंधन पण एथीज छे.

(जे) जाणे दृष्टिपदार्थ असत्य धनतन स्त्री सुतविषि नहि चित्त। उभय देह (एणे) ज्ञाने सुन्य थाय ज्ञाने भवबंधन ते जाय ॥ ३२ ॥

हवे ज्ञान एथी उलटुं छे. दृष्टि पदार्थ असत्य छे त्हेमने पुरुष असत्यज मानीने वर्त्ते, एमनो संग करे नहि, धन, तन, स्त्री ने संतति, एमनामां जराए वासना राखे नहि, कारणके ए पण कोइ सुखने आपवावाळुं नथी पण परम दुःखरूप छे. त्यारे ज्ञान थयुं कहेवाय. एथी स्थूल अने सूक्ष्म बंने देह शून्य थइ जायछे एटले कर्मनो दोष लागतो नथी, ने तेथी संसारनुं बंधन छूटी जायछे.

सत्य देह असत ज्यम थाय ते दृष्टांत सुणो रघुराय। सज्याऊपर पोढ्यो देह (अने) स्वप्नावस्था भोगवि तेह ॥ ३३ ॥

भोग दशे दिसना भजि* जेह जागा पछि ना दीसे तेह। (एम) स्वप्नदेह मिथ्या छे एम (आ) जागृत देह ने जाणो त्यम ॥ ३४ ॥

प्राकृत जीवो आ देहनेज सत्य मानी त्हेमां ममता बांधी बेठा छे एने हवे असत्य शी रीते बताववो, एनुं हे राम! हुं अहीं एक दृष्टान्त आपुंछुं ते सांभळो. देह तो सज्जा उपर पोढेलो होयछे, पण स्वप्नावस्थामां ते दशे दिशना भोग सजेछे, अर्थात् कहिं कहिं फरी वळेछे ने विषयभोग भोगवतो जणायछे, पण जागृत

* मूळः- भोगवे.

थतां एटले स्वप्नभोग पूरो थता ए देह क्यांए देखातो नथी अर्थात् मिथ्या ठरेछे. आ स्वप्नदेहनी पेठेज जागृत्त देह व्हेने आपणे स्थूळ देह कहीएछीए ते पण मिथ्या छे, एम जाणी लेवुं.

अविद्याए ऊभो संसार (अने) विद्याए होये निस्तार। विद्यातणूं स्वरुप ते सुणो जेह तणो महिमा छे घणो ॥ ३५ ॥

आम अज्ञान दृष्टिए संसार सत्य भासेछे ने ज्ञान दृष्टिए एनो लय थइ जायछे माटे ज्ञान कहेता जे विद्या व्हेनुं लक्षण सांभळो. एनो महिमा बहु म्होटो छे.

उत्तम तेह अधम परहरे ते दृष्टान्त वसिष्ट उच्चरे। सर्वसंग विवर्जित तेह देहात्म बुध्य छांडी नर जेह ॥ ३६ ॥

उत्तम पुरुष छे ते अधम कहेतां नीचनो संग तजी देछे. एवुं गुरु वसिष्ट दृष्टांन्त आपेछे. पदार्थोना संगथी जे छूटेलो छे एटल जे असंग पुरुष छे ते देहात्मबुद्धि एटले देहनेज आत्मा करी मानवानी बुद्धिनो त्याग करेछे, कारणके ए एक दुष्ट कल्पना छे. असत्य जे देह व्हेने सत्य आत्मा कहेवाय नहि.

देहऽभिमान तजे जे राम उत्तम पुरुष तां तेहनुं नाम। जिवनमुक्त ते छे योगेंद्र अहंकार वर्जित राजेंद्र† ॥३७॥

---

† मूळमां.—अहंकाररहित रामचंद्र.

देहनुं अभिमान छोडीदे ने त्हेने क्षणभंगूर ने असत्य मानि तेज पुरुषने उत्तम कहेवो. तेवो पुरुषज जिवनमुक्त ने योगींद्र पण छे कारण के हे रामेंद्र! ए अहंकार वर्जित छे. "हुं" एवी एने बुद्धिज स्फूरती नथी.

(ज्यम) श्वान मांस ग्रहि पुष्कस जाय (अने) संत देखि ते दूर पलाय। अहंबुध्यथी जे विगलो रहे वसिष्ट मुक्त ता तेहनी कहे ॥ ३८ ॥

कूतरुं मांसनो ककडो लइने रस्ते जतुं होयछे त्यारे साधु पुरुषो त्हेने जोइने दूर नासेछे. तेवीज रीते अहंवासनाथी सदैव दूर रहेनार पुरुष मुक्त छे एवुं गुरु वसिष्ठ कहेछे. वासना करतां पण अहंबुद्धिनो स्पर्श अति मलीन छे एटले निर्मल पुरुषो एने लागवा देता नथी. वळी त्हेनो स्पर्श एवो छे के ते एकवार लाग्यो तो फरी पाछी पूर्ववत् स्थिति थई रहेछे ने साधन मात्र निष्फळ जायछे. घणा दिवसनु एकठुं करेलुं द्रव्य जेम अविचारे करी एक क्षणमां गुमावी बेसायछे तेम अतिश्रमे संचित करेली सात्विक बुद्धिनो एवी मलीन वासनाथी नाश थायछे.

सुणिये साधु पुरुषनां चिन्ह एकाग्र सदाये जेनां मंन। शोक ताप*रहित दुःख तेह ब्रह्मभाव हृदे धरि जेह ॥ ३९ ॥

हवे साधु पुरुषनां लक्षण कहुंछुं ते हे श्रोताओ! सांभळो.

* मूळ— सताप.

एनुं मन सदाए एकाग्र रहेछे, परमात्मा साथे अनुसंधान पामीने रहेछे. विषयी पुरुषनुं मन जेम विषयमां अपूर्व रीते तल्लीन थई जायछे तेवीज रीते महात्माओ परमात्ममां तल्लीन थई रहेछे. क्यारे-ए एनु ए निश्चल मन चलित थई अन्य विषयमां राग पामतुं नथी, माटे एने शोक, परिताप अने दुःख थतां नथी; कारण के पामर जीवनी पेठे एना हृदयमां विषयभावना नहि पण ब्रह्मभावना भरेली होयछे, ए अहोनिश परब्रह्मनाज ध्यानमां रत होयछे.

शांति स्वभावनि जे अनुसरे तांहांथों अहंकार आफणिये मरे। ते कारण सूणो रघुवीर ब्रह्मभावना धरिये धीर ॥ ४० ॥

जे पुरुष शान्तिस्वभावथी वर्तेछे ह्हेनो अहंकार एनी मेळे मरी जायछे. शान्तिस्वभाव एनुं नाम के संसारमां अनेक सुख दुःखना संजोगो बनी आवे तोपण मनने जराए उद्वेग थाय नहि, जराए हर्ष शोक तो ह्हेमां आवे नहि, पण सदा सर्वदा सुखवृत्ति-थीज व्यवहारनो निर्वाह थाय. आवो स्वभाव हे राम ! ब्रह्मभावना विना प्राप्त थतो नथी, माटे धीर बनी, स्थिरता राखी परमात्मानुं ध्यान धरवुं, एथी संसारनो क्लेश, परिताप लागशे नहि.

ब्रह्मादिक अनि तृण पर्यंत सकल भूतवीषे समचित्त । सर्व्व निरंतर इक ब्रह्म जोय तत्त्वज्ञानी भणिये सोय ॥ ४१ ॥

जे पुरुष ब्रह्मादि लोकोथी लइने ठेठ तृण पर्यंत बधाए पदार्थो-मां समचित्त एटले समबुद्धि राखी रहे अने सर्वत्र ए ब्रह्मनेज

हमेशां जूए, बीजो कंई प्रपंच ल्हेनी द्दष्टिए न च्हडे त्हेने तत्त्वज्ञानी कहेवो. तत्त्व एटले आत्मा, ब्रह्म त्हेने यथार्थ जाणे ते तत्वज्ञानी.

स्वस्थचित्त शीतल जे सदा निज लाभे अंतरगत मुदा। अहं ममत्व रहित जे देह गगनपेरि निर्मल छे तेह ॥ ४२ ॥

जेनुं मन स्वस्थ— शान्त छे, पदार्थकल्पना के संकल्प विकल्प करतुं नथी ते पुरुष हमेशां अति शीतल, शान्त रहे छे; कारण के सात्त्विक बुद्धिथी आत्मानुं ओळखाण थाय छे. आम निज लाभ कहेतां पोतानुं स्वरूप ओळखायानो लाभ जेने थयो छे त्हेने अंतरमां परम आनंद थई रहे छे. ए आनंदनो कोई दिवस भंग थतो नथी. अहं ममता विनानो पुरुष आकाशना जेवो निर्मळ छे. आकाशने जेम धूळ घूमाडी च्होटती नथी ने मेघादिनो स्पर्श थतो नथी तेम आत्मज्ञानीने व्यवहारकर्मनो स्पर्श थतो नथी.

ब्रह्मभावना विण रघुराय देह (आत्म) बुध्य ते क्यमे न जाय। ब्रह्मभावशूं जो मन मले अन्य वासना सघली टले ॥ ४३ ॥

हे राम ! ब्रह्मभावना एटले आत्ममनन कर्यां विना देहात्मबुद्धिनो कोई पण उपाये नाश थतो नथी. सत्य जे ब्रह्म त्हेमां वृत्ति एकाग्र न थाय त्यां सुधी ते देहादिमां ममता राखीने वर्ते. सत्य ज्ञान न थाय त्यां सुधी असत्य वस्तुओमां राग रहे ने विषयवासना टाळी टळे नहि; पण मन जो ब्रह्माकार बने, ब्रह्मनुं चिंतवन करे, त्हे-

मांज मळी जाय तो मर्वाए वासनाओनो एकदम लय थई जाय.

सोहं ध्यानविण आत्माराम देहात्मबुद्धि कीजे बहु-
नाम । सोहं ध्यानशूं जो मन गले (तो) अन्य वास-
ना सघली टले ॥ ४३ ॥

सोहं एटले स अहम्, ब्रह्म ते हुंज. हुं परब्रह्म पुरुषोत्तम छुं एवी भावना दृढ थया विना जीव नाना प्रकारे देहबुद्धिनो विस्तार करे छे, एटले असत्य पदार्थोमांज रागद्वेषादि राखी बह्या करेछे. माटे मन छे ते सोहंध्यानमां एकाग्रता पामे एटले ब्रह्मभावने पामे तोज बीजी बधी वासनाओ टळी जाय आवो पाठान्तर छे.

ते सद्गुरु ते पंडित जांण जेह दृढावे ब्रह्म निर्वाण ।
ते योगी ज्ञानी माहंत एक ब्रह्म जेहनी सिद्धांत ॥४४॥

ब्रह्मभावनाने जे दृढ करे त्हेनेज सद्गुरु ने पंडित जाणवो. गुरु पासे गया, त्हेनुं शरण शोध्युं ने विषयवासना जाय नहि तो ते प्रयास नकामो समजवो. विषयमांथी वृत्ती खसे, ते ब्रह्म तरफ वळे ने ब्रह्मनीज भावना, ब्रह्मविचारज दृढ थाय एवुं ज्ञान बतावे ते सद्गुरु ने पंडित पण तेज. परब्रह्मनो सिद्धान्त यथार्थ जाणे ने पुरुषज योगी, ज्ञानी ने महंत कहेवाय.

ते वैष्णव ते जाणो संत केवल ब्रह्मविषि जेहनुं चित्त ।
ते जीवित शोभे संसार जे घट केवल ब्रह्मविचार
॥ ४५ ॥

बीजा कोई पदार्थमा वृत्ति जोड्या विना जे पुरुष एक केवळ ब्रह्ममांज एकाग्र चित्त थई रहे छ, ऱ्हेनुंज निरंतर ध्यान धरेछे, ऱ्हेने खरो वैष्णव ने संत कहेवो. वेष तो नकामो छे, मात्र बाह्य दर्शन छेः छाप तिलक ने तुळशीनी माळा ए वेषथी वैष्णवपणुं सिद्ध थतुं नथी, धोळा वस्त्रोनो त्याग करी भगवां धारण कर्यां, ने एक आश्रमनो आश्रय मूकी घर घरनो आश्रय लीधो के वन सेव्युं एथी संतपणुं सिद्ध नथी. वैष्णव ने संत तो ऱ्हेमनी अंतर्वृत्तिथी, ब्रह्म सेवथी ऱ्हेमना विचारथी, ने असंग बुद्धिथी तरतज जणाई जाय. केवळ एक ब्रह्मनोज विचार जेना हृदयमां स्फुर्या करे छे तेवा पुरुषनुं जीवित आ संसारे अहो ! धन्य छे.

अंतरगत शीतल जे जंन शीतलता तेहनि त्रिभुवंन।
अंतरगत आतप्तज थाय तेहनि जग दावानल प्राय
॥ ४६ ॥

सुख दुःखनो आधार मनुष्यनी अंतर वृत्ति उपर छे. जहेनी बुद्धि सात्त्विक छे, जहेनी चित्तवृत्ति शान्त छे ऱ्हेने त्रिभुवनमां बधे शान्ति शान्तिज छे, कोई वात, कोई पण समये एने कशो क्षोभ के उद्वेग थतो नथी. क्यांय पण ए परितापने देखतो नथी; परंतु जहेना अंतरमांज दाह उठी रह्योछे, जे बहुज आतप्त थई रह्योछे ऱ्हेने आ संसार छे ते दावानळ जेवो महा परितापने उपजावनारो थई पडेछे. आम वृत्ति भेदने लीधे एकने जे सुखरूप छे ते बीजाने परम दुःखनुं भरेलुं अनुभवमां आवेछे.

जगत सर्व ते ब्रह्मस्वरूप मूरख जनने पण अरिरूप× ।
पंडितने परमानंद होय जे सघले एकात्मा जोय ॥४७॥

जगत बधुं खरुं जोतां तो ब्रह्मस्वरूप छे. एक ब्रह्मनोज प्रकाश छे, माटे ब्रह्म जेम परम आनंदरूप छे तेम ज्ञानदृष्टिवाळाने जगत पण आनंदरूप भासेछे, परंतु जे पुरुष अज्ञानी छे, त्हेने ते काळ जेवुं लागेछे, पोताने पदे पदे दुःख आपनार एक म्होटा शत्रु जेवुं ते भासे छे. सर्वत्र एक आत्मा छे एवुं जोनारने, एकज आत्मानो बधेय अनुभव करनार जे पंडित ज्ञानी त्हेने सर्वत्र परमानंद थायछे. आम सत्य असत्य वस्तुना ज्ञाननो महिमा छे.

ज्वरसहित ज्यम होये देह क्षिरभोजन विष माने तेह । (एम) अज्ञानी छतु अछतू कहे (पण) ज्ञानी ते ज्यम छे त्यम लहे ॥ ४८ ॥

जे पुरुषने ज्वर आव्यो होयछे, ज्वरथी जे पीडातो होय छे, त्हेने मन दूध खाडनुं भोजन झेर जेवुं छे. वास्तविक ए भोजनमां कंई विष रह्युं नथी; कारणके सारी प्रकृतिवाळाने ते अमृत तुल्य लागेछे. आम अज्ञानी पुरुष पोताना अज्ञानने लईने जे छे नहि एवी भावना उपजावेछे, नथी त्हेने छे एटले असत्यने सत्य कहेछे, पण ज्ञानीजन वस्तुनुं यथार्थ स्वरूप समजीनेज रहेछे.

वर्णाश्रम कुळनूं नथि काम बुद्धि तणो टाळो छे राम ।

× मूळमां काळरूप छे.

मूरखने नाना बुध्य होय ज्ञानी सघले एकज जोय॥५१॥

ब्रह्मज्ञान थवामां वर्ण, आश्रम, कुळ, कशानुंए काम नथी. ब्राह्मण, द्विज होय तज आत्मज्ञानी थाय, वळी ते संन्यस्तदशामांज थाय एवुं कंई नथी. कुळ अकुळ त्यां जोवानुं नथी. ब्रह्मने ओळखवो ए एक बुद्धिनो टाळो छे, अर्थात् म्होटी वात बुद्धिनी छे. कोई पण वर्णनो, कोई पण आश्रमनो, नीच उंच कोई पण कुलनो माणस बुद्धि होय तो ब्रह्मज्ञान प्राप्त करी शके. आ बुद्धि ते विवेकबुद्धि, सात्त्विक बुद्धि, एनाथी पदार्थस्वरूप जाण्या पछी सत्य वस्तुनो अनुभव थायछे. जे अज्ञानी जीव छे ते सर्वत्र भेदबुद्धि पामे छे, एनी भेद भरी दृष्टि कशामांए एकना अनुभवती नथी परतु ज्ञानी जन सर्वत्र एक ब्रह्मनेज जूए छे.

मूरषपणुं सघलूं परहरो केवल ज्ञान हृदेमां धरो । वलिवालि कीजे ए अभ्यास करजोडी कहि नरहरिदास ॥ ५० ॥

माटे जडबुद्धिनो, अज्ञाननो अत्यन्त त्याग करो ने केवळ ज्ञान एटले ब्रह्मज्ञानज हृदयमां धारण करो. ब्रह्मभावनानोज वळी वळी एटले पुनः पुनः अभ्यास कर्या करो. आवा अभ्यासथी जे अहं वासनासंसारवृक्षने फेलावेछे त्हेनो नाश थशे, परम उपशम थई अशे. ब्रह्मभावनाना अभ्यास विना वासना कोई रीते शमशे नहि.

इति श्रीवसिष्टसारगीतायां वासनोपशमनाम पंचम प्रकरणम् ॥ ५ ॥

प्रकरण ६.

आत्ममनन.

पूर्वछायो.

कह्यो वासना उपशमे हवि कहुं आत्ममनन । ए अ-
नुभव हृदे आणवा वलि वलि किजे जतन ॥ १ ॥

असत्य वस्तुने सत्य मानी लेवानुं जे अज्ञान त्हेनो त्याग करवानुं अने सत्य वस्तु एक ब्रह्म आत्मा त्हेनुं ध्यान ने त्हेनो अभ्यास करवानुं पाछला प्रकरणना छेल्ला श्लोकमां वताव्युं. ए ध्यान ने अभ्यासने आत्ममनन कहेछे ते हवे वासनोपशम कह्या पछी हुं कहुंछुं एनो अनुभव सहज पमाय एवो नथी. घणो यत्न, घणो अभ्यास करीए त्यारे आत्मानो अनुभव आवे, माटे वारंवार यत्न कर्या करो, आत्ममनन कर्या करो.

आत्ममनन कीधा विना सामि * न (ए) वासना जाय । टाल्याव्युण सामि * वासना योगभ्रष्ट जन थाय ॥ २ ॥

कारणके आत्ममनन विना वासनानो संपूर्ण त्याग थतो नथी. थोडीवार, ज्यां सुधी आत्मज्ञाननी वात सामळीए त्यां सुधी पदार्थोनुं

* मूळमां सम्य॰

स्वरूप असत्य भासे ने वासना दबाई जाय, पण पाछी एनी एज संसारप्रवृत्तिओमां जोडातां आत्मानी वात भूली जवाय एवो मनुष्य स्वभाव छे, एवा मायानो विलक्षण मोह छे, माटे कोई पण कार्यमां कोईपण व्यवहारमां आत्मानुं अनुसंधान रहे माटे तेनुं सतत ध्यान राख्या करो. एथी वासना टळी जशे. वासना न टळी तो पुरुष योगभ्रष्ट थायछे: एने पूरेपूरो योग सिद्ध थतो नथी.

जोगभ्रष्ट जे जन थयो (तेहने) कर्मब्रह्म नहि भोग।
शनैः शनैः तजि वासना होये आतमयोग ॥ ३ ॥

हे राम ! एवी शंका न करवी के पुरुष योगभ्रष्ट थयो एटले एनां पूर्वनां सुकृतनो नाश थयो के एणे पूर्वे कोवेलो अभ्यास निष्फळ थयो. एवा योगभ्रष्ट पुरुषो कोईपण भोगनी लालसाए कर्मारंभ करता नथी, पण प्रवृत्तिमात्र ब्रह्मनेज अर्पण करीने तेओ रहे छे. एथी वासननो जे अंश पण रही गयो होयछे ते धीमे धीमे नाश पामेछे ने ए रीते ए आत्मयोग पामेछे.

ते माटे मुनिवर कहे कीजे आतममनन। सावधान थइ आदरो विलंब न कीजे जंन ॥ ४ ॥

एम छे माटे गुरु कहेछे के हे श्रोताओ! सदोदित आत्मचिंत्वन कर्या करवुं. ए वातमां विलंब के उपेक्षा न करवी. आज करीशुं, काल करीशुं एम करी मिथ्या कालक्षेप न करवो, परंतु सावधान थइने, एकचित्त थईने आत्ममनन आदरवुं. एकचित्त विना -आत्मा-

मां वृत्ति स्थिर थती नथी ने एक पूण्य विचार अनेक दूषित विचारोथी मंद पडी जाय छे माटे चित्तवृत्तिने क्याय पण जवा देवी नहि.

कहे वसिष्ट वली वली (अने) सुणी एक चित्त राम !
आत्ममनन जे को करे (तेहनी) टले कामना काम ॥५॥

गुरु रामचंद्रजीने वारंवार कहेछे के हे राम ! एक चित्त थई आ रेहस्यनी वात सांभळो. जे पुरुष आत्ममनन करेछे रहेना कामनो काम एटले रहेनी अति सूक्ष्म अंतर्वासना टळी जायछे.

श्रीरामोवाचः—

आत्ममनन क्यम कीजिये (मुजने) कहो सदगुरु ते मर्म । विसद करी मुनिवर कहो आत्ममननो धर्म ॥६॥

आम वासनानो अत्यंत त्याग करवा आत्ममनन करवानुं गुरुजीए कह्युं पण ते आत्ममनन ते शी रीते करवुं ? एम विचारी जीव गुंचाय नहि माटे परमकृपाळु श्रीरामचंद्रजी गुरुजीने प्रश्न करे छे; हे सद्गुरु! आत्ममनन करवानुं कहोछो तो खरा, ने वासना शमाववानुं एज एक सत्य साधन छे ए वात खरी, पण अमारे ते शीरीते करवुं? सूक्ष्ममां सूक्ष्म जे आत्मा एनामां वृत्ति शीरीते स्थिर करवी; ते मर्म अहो गुरुजी ! बतावो. आत्ममनन एटले शुं तेहनो हे मुनिवर, सारो विस्तार करीने वात समजावो. अम्हारी अल्पबुद्धि आवी संक्षेपमां थएली वातनुं ग्रहण करी शकती नथी.

श्री वसिष्ठो वाच ॥

चोपै.

राघव सुणजो कहुं दृष्टान्त (एम) जाणि वासना
केरो अंत । अहमात्मा परमात्मा राम आत्ममनन तां
एहनु नाम ॥ ७ ॥

हवे गुरुजी एनुं उत्तर आपे छे. हे राघव ! ए वात बतावुंछुं ते सोमळो. एथी वासनानो अंत आवी जशे, फरीथी ते उदय नहि पामेः–हुं जे आत्मा ते परमात्मा छुं एवी जे भावना ने रहेतु जे विचारे करी परिशीलन कर्या करवुं रहेनुं नाम आत्ममनन.

अन्य देह पेरे जे (देह) जोय देह सुखे दुःखे नव
मो (हो) य । देहतणो साक्षी छे जेह आत्मस्वरुप तां
भणिए तेह ॥ ८ ॥

आ देह छे ते अन्यदेह कहेतां पारको छे, म्हारो नथी, अर्थात् मिथ्या छे, एम जाणी जे पुरुष देहना सुख दुःखथी मोह पामे नहि, एटले देहना सुखथी हरख न पामे ने दुःखथी शोक न करे परंतु उपाधिरूप देहना कर्मनो मात्र साक्षीज थईने रहे, कर्त्तापणुं पोते छे नहि ते पुरुष आत्मस्वरूपने पाम्यो छे, एम जाणवुं.

अनंत निरंजन सुध अविनाश ज्ञानस्वरूप स्वयं प्रकाश
प्रकृति पुरुषथको पर जेह सोहं आत्मा भणिये ते

आत्मा अनंत, निरंजन, शुद्ध, अविनाशी, ज्ञानस्वरूप, ने स्वयज्योति छे; वळी प्रकृति पुरुषथी पण ते पर रहेलो छे. एवो आत्मा शुद्ध परब्रह्म छे.

(जे) देहेन्द्रिय प्रवर्तक राम अलगो थको करे (ते) सब काम। आत्मा सोहं ब्रह्म अखंड व्यापक पूरणपिंड ब्रह्मंड ॥१०॥

हे राम। एने आशरीने देहेन्द्रियनी प्रवृत्ति थायछे. आम आत्मा श्मनो प्रवर्त्तक थइ बधां कर्म करेछे पण ते न्यारो रहीने. ए निर्लेप होवाथी एने कर्मप्रवृत्तिओनो दोष लागतो नथी. आत्मा ए अखंड ब्रह्म छे, सर्वत्र संपूर्ण व्यापेलो छे, पिंड अने ब्रह्मांडे एकज आत्मा–ब्रह्म भरेलो छे.

ब्रह्मविलासज जांणो (आ) सर्ग (जे) मनबुध्य इंद्रियादिक वर्ग। असत्य ए सर्वे तुं जाण नाममात्र स्थिति राहित प्रमाण्य ॥ ११ ॥

एवा आत्मब्रह्मनो विलास तेज आ विश्व छे. मनबुद्धि इन्द्रियादि बधुंए एक ब्रह्मनोज विलास छे, पण ए सर्ग–ए मनबुद्धि आदिक वर्ग असत्य छे एवुं निश्चयपूर्वक जाणवुं; कारण के मात्र ए नामरूप छे, वस्तुगतिए ए स्थिति रहित छे, मात्र भ्रान्तिवश थयला अज्ञानी जीवने ते जोवा मात्र छे.

पिंड ब्रह्मांड (ते) ब्रह्मविलास ब्रह्मे उत्पति ब्रह्मे समा·

स । ब्रह्मरूपथुं ब्रह्ममा रमे वाळि वळि उपजे वळिवळि समे ॥ १२ ॥

पिंडथी लईने ठेठ ब्रह्मांड सुधी सघुंए ब्रह्म विलासज छे. ए ब्रह्ममांथी उपजी आवे छे ने शमी जायछे—लय पामे छे पण ब्रह्ममांज. ब्रह्मरूप थइ ते ब्रह्ममांज रमे छे. वारंवार अनेक ब्रह्मांडो उपजी आवे छे ने वारवार लय पामे छे.

ब्रह्मांड ब्रह्मथि अलगुं न होय कहे ब्रह्मवेत्ता इम सोय। विश्व सर्व ए ब्रह्मप्रकाश नहि नहि अन्यतणो आभास ॥ १३ ।

अर्थ स्पष्ट छे.

सम्यक (पेरे) ब्रह्म जाणे जेह अनामय जीवित कहिये तेह । आपति आवे चले न चित्त मानुभाव ते कहिये संत ॥ १४ ॥

जे पुरुष विवेके करीने ब्रह्मने ओळखे छे त्हेनुं जीवन अनामय एटले कोइ पण प्रकारना रोग के मळ विनानुं छे. एनुं चित्त संसारनी कोइ आपत्ति आवी पडवाथी चलित थतुं नथी. एवा पुरुषनेज महानुभाव ने संत कहेवो. ज्ञाननी वातो करे ने प्रसंग आव्ये प्राकृत जननी पेठे मोहवश थइ जाय ते पुरुष कंइ संत नथी.

जगत मित्र संपतमां करे सर्व भूतनें हित आचरे । गूण दोष हृदयाथी त्यजे आत्मा जांणी सवनेभजे ॥१५॥

सुखरूप स्थितिमां एवो संत पुरुष आखा जगतने मित्र करी छेछे; कारणके भूत मात्रनुं ए सदाये हितज साधे छे एटले एना प्रति कोइने वैरभाव आवतो नथी. व्यवहारमां मनुष्योना गुण दोषने ते जोतो नथी पण सर्वे एक आत्मारूप छे एम जाणीने त्हेमनो समागम करे छे, त्हेमनुं आराधन करे छे.

शत्रु मित्र नहीं जेहनें समदरसी कहिये तेहनें। भावा-भाव रहित जे होय आत्माराम ते भणिये सोय॥१६॥

आम जे पुरुषने जगतमां कोई मित्र नथी ने कोई शत्रुए नथी एवी भेदरहित बुद्धि उपजे छे त्हेने समदर्शी कहेवो. ए वळी भाव अने अभाव रहित होय छे, अर्थात् राग द्वेषथी मुक्त होयछे. अमुक प्रिय अने अमुक अप्रिय एवी ए पुरुष भावना करतो नथी माटेज ते खरो आत्मज्ञानी कहेवाय.

ज्हेनो महिमा छे अति घणो राघव स्वरूप तेहनु सूणो। आत्ममनन तो एमज करो देहभाव सघलो परहरो ॥१७॥

देहबुद्धि मात्रनो त्याग करी देवो ने ए रीते एटले उपर बताव्या प्रमाणे आत्ममनन करवुं. आत्माना महिमानो पार नथी कारणके ते अनंत छे. हे राघव ! हवे हुं एमनुं स्वरूप समजावुं छुं ते सावधान थइ सांभळो.

इहा रहित जे आत्माराम जेहनि नहि तृष्णाशुं काम। आत्मा ते जे सदा निराश विषि तृष्णानी करे न आश ॥ १८ ॥

हे राम ! आत्मा स्वभावे इच्छा रहित छेः एने कोई विषयनी तृ-ष्णा राख्यानुं कंइ काम नथी. आत्मा सदाये निराशज छे, ए विषय तृष्णानी क्यारे पण आशा करतो नथीः आत्मा ब्रह्मरूप होवाथी सदा सर्वदा पूर्णकाम छे एटले एने कोई प्रकारनो लाभ प्राप्त करवानो होतो नथी ने ए रीते ए निराश एटले तृष्णा रहित छे.

आकाशवच्च पूरण इक रूप माने नहि हुं भिक्षुक भूप।
स्वस्थचित्त निर्मल अति सदा निजलाभे अंतरगत मुदा ॥ १९ ॥

आकाशनी पेठे वळी आत्मा सदाये पूर्ण छे. कोइनी ने कशानी पण अपेक्षा वगरनो ए राजेंद्र कदापि एवुं मानतो नथी के हुं एक भिक्षुक छुं, के घेर घेर, स्थाने स्थाने, विषयसुखनी तृष्णा राखी याचना करवावाळो छुं. आवा आत्माने ओळखवावाळो पुरुष स्वस्थ चित्त रहे छे, एनुं मन कोई विषयमा ममतुं रहेतुं नथी, मायाना अनिवार्य पण मोहने वश थतुं नथी; अति निर्मल थइने ते हमेशां रहेछे. कोई जातना कर्मदोष के जडबुद्धिना मलने ते अडवा देतो नथी पण पोतानुं आत्मस्वरूप ओळखी अंतरमां परम आनंद अनुभवेछे.

स्पृहा न उपजे जेहनि कसी आत्मदशा राघव छे असी
शान्ति स्वभाव (ता) भणीये तेह सदा निरंतर स्थिर मन जेह ॥ २० ॥

हे राघव ! आत्मज्ञाननी स्थिति एवी छे के रहेमां पुरुषने कोई

आतनी स्पृहा, तृष्णा उपजी आवती नथी. एनुं मन हमेशां स्थिर, शान्त रहेछे, कोई जातनो संकल्प करतुं नथी; माटे एनामां खरो शान्ति स्वभावछे एम कहीए.

अरूप नाम कहिये तेहनूं रूपविषे चित्त नहि जेहनूं । शब्द स्पर्श रूप रस गंध अरूप एहनें न करे बंध ॥ २१ ॥

रूप एटले पदार्थो, विश्व एनामां जे पुरुषनुं चित्त लय पामतुं नथी ते पुरुषने अरूप कहेवो. अरूप थयला पुरुषने शब्द, स्पर्श, रूप, रस अने गंध ए पंचविषयो बंधन करी शकता नथी; कारणके एने कोइ प्रकारनी वासना नथी.

चीरायू कहिये अविनाश पुरुष पुरातन स्वयं प्रकाश । चंचल (स्व) भाव रहित जे मंन अचल पुरुष ते जाणो जंन ॥ २२ ॥

जे मनमांथी चंचलतानो धर्म जतो रह्यो छे एटले जे मन अचल बनी रह्युं छे ते तो आत्मा छे ने ए रीते ते अमर, अविनाशी, सनातन अने स्वयंप्रकाश छे.

स्वरुप आतमानूं ए कह्युं बुध्यमाने जे (हे) वूं में लह्यूं । आत्मरूप ते अकल अपार वलि वलि राघव कहुं निरधार ॥ २३ ॥

हे राम ! महर्षिओना प्रसादथी ओळखेलुं एवुं उपर प्रमाणे आत्मानुं स्वरूप में यथाशक्ति बताव्युं. हे राघव ! आत्मरूप वाचाए करी पूरे पूरु कही बतावातुं नथी ए हुं फरी फरीने तमने कहुं छुं; कारण के ते अकल ने अपार छे. माटे संक्षेपमां रहस्य जाणी लेवुं.

वलि आत्मानुं विशेषण जेह सांभलजे रघुपति इवि तेह चीदनाम ते कहीए ब्रह्म जे (ह) ने माया काल न कर्म ॥ २४ ॥

हवे हे रघुपति ! आत्मानुं विशेषण कही बतावुंछुं ते श्रवण करोः आत्मा ए चित् शक्ति छे ते माटे एने ब्रह्म कहेवामां आवे छे, अने माया, काळ अने कर्म ए त्रणेमांथी एने कशानो बाघ नथी; कारण आत्मा अविच्छिन्न छे.

आपे आप स्वयं परकाश सर्वे निरंतर सर्वावास । ते विन ठालो नहि को ठाम तेहतणां सर्वे रुप नाम॥२५॥

एने परप्रकाशनी जरुर नथी, कारण के आखा विश्वने प्रकाशवावाळो ते स्वयं प्रकाश छे. ए सर्व निरंतर एटले सनातन, शाश्वत छे ने सर्वत्र एनो वास छे. एक पण ठाम आत्मा विना ठालो नथी. ए एक आत्मानाज आ बधां रूप ने नाम एटले पदार्थो ने विश्व छे.

पंचभूत ते कहिये ब्रह्म मानुभाव ते जाणे मर्म । ब्रह्म त्रिलोकी ते जाणजो साचो निश्चे ए आणजो ॥ २६ ॥

आ पंचभूत स्थूलने जड कहेवायछे तोपण वस्तुतः तेए ब्रह्म कहेतां आत्मा छे;पण ए अनुभव आववो बहु कठण छे.ए मर्म, ए तत्त्व सहेम जाण्यामां आवतुं नथी, मात्र महात्माओज ते जाणे छे. त्रिलोकनो नाथ ए आत्म ब्रह्म छे एम जाणवुं अने ए सत्य सिद्धान्तने दृढाववो.

हवणां मा(हा) रे भागो भ्रम सम्यक पेरे जांण्यो ब्रह्म। अहंब्रह्म सर्वं ब्रह्म जाण्य (ए) श्रुतिवायक निश्चे हृदि आण्य ॥ २७ ॥

यथार्थ रीते ब्रह्मनुं ओळखाण थयाथी हवे म्हारी भ्रान्ति मात्रनो नाश थयो, ने हुं केवळ एक आत्मारूप छुं, एवो अनुभव थववो. हुं पण ब्रह्म छुं ने आ बधुं पण ब्रह्म छे एम जाणवुं ने ए प्रमाणे श्रुतिवाक्यनो अवश्य अनुभव करवो.

आत्मस्वरूपतणी जे स्थिति एकमनां सुणिये रघुपति। सर्वमांहिं व्यापक छे जेह सर्वातीत भणीये तेह ॥२८॥

हे रघुपति ! हवे आत्मस्वरूपनुं लक्षण फरी पाछो कही बतावुं छुं ते एक चित्ते सांमळो. आत्मा सर्वमां,बधीए वस्तुओमां व्यापक छे, कशामांए आत्मा नथी एम नथी; तो पण ए सर्वातीत एटछे सर्वथी अतीत, पर, न्यारो छे.

आकाशवत आतमा निःसंग आधार जाण्य ए सर्वलिंग। प्रत्यक्ष आतमा हुं परब्रह्म समजी लेज्यो मुलगं मर्म॥२९।

सर्वलिंग एटले नधाएं वस्तुमां रहेलो एक आत्मा आकाशना जेवो निःसंग छे.अनेक वस्तुओमां रह्या छतां एने ए पदार्थोना रूपान्तरथी कोई प्रकारनो विकार के हानि थती नथी; कारणके ते अव्यय अने पूर्ण छे. हुंज प्रत्यक्ष. आत्मा छुं ने हुंज परब्रह्म पण छुं एवो ज्ञानानुभव पामी, निश्चय करी रहस्यनी वात छे ते हे श्रोताओ! संपूर्ण रीते जाणी ल्यो के फरी कंई जाणवानी अपेक्षाज न रहे.

सत्यस्वरूप सदा छे जेह तेते हूं नें हूं ते तेह। हूं विण ठालो नहि को ठाम सर्वे निरंतर हूं अजराम ॥३०॥

आत्माज एक सत्य स्वरूप छे, एना सिवाय बीजु कोई वस्तुस्वरूप सत्य नथी ने ए सदा सर्वदा छे छे ने छेज. ए आत्मारूप हुं छुं ने हुं ते आत्मारूप छे ए रीते हुं वगर एके ठाम ठालो नथी. हुंज सर्वत्र व्यापेलो छुं, हुं सर्वे निरंतर ने अजन्म छुं. हे राम! ए प्रमाणे विवेक करवो, आत्मज्ञाननो अनुभव विस्तारवो.

त्रिविध पेरि में जोयूं कथी ब्रह्म विना के (हे) वा अन्य नथी। वसिष्ट भणे में अद्य ए (म) लह्यूं (जे) वेदान्त वेद उपनीषदि कह्यूं ॥ ३० ॥

हे राम! घणे प्रकारे में शोध करी जोयो पण ब्रह्म विना बीजी कोई वस्तु कहेवा मात्र पण नथी. आवुं वेद उपनिषदमां बतावेलुं ज्ञान गुरु वसिष्टे श्री रामचंद्रजीने बताव्युं ने ए तेमणे ग्रहण कर्युं.

जीवनाम (ते) आश्चर्यज जाण्य वस्तुगती सत्र ब्रह्म

प्रमाण्य । अनंत ब्रह्मसागर तो सोय जिवलक्षण त्यां लहरी होय ॥ ३२ ॥

हे राम ! "जीव" ए नामज आश्चर्यरूप छे. वस्तुगतिए सधुं-ए ब्रह्ममय छे; एटले जीव एवुं कंइ ब्रह्मथी भिन्न नथी. ज्ञानदृष्टिए जोतां अनंत ब्रह्म ए एक सागररूप छे ने जीवनामतो मात्र एमांथी उपजेली लहेर जेवुं छे. अर्थात् जीव ते शिव के ब्रह्म छे.

उपजि समिं वरते ब्रह्ममांय ब्रह्मथकी ते अलगुं न थाय। वस्तुस्वभाव एवो मांनजो समुद्र ले(हे)रि जेवूं जांणज्यो ॥ ३३ ॥

जीवत्व ब्रह्ममांथीज उपजी आवे छे, व्यवहार पण एने आश्रीनेज करे छे, ने पाछुं लय पण एमांज पामेछे; पण क्यारेए ते ब्रह्मथी अलगुं–भिन्न थतुं नथी. एटले वस्तुस्वभावे जोवा जइए तो जीव ने ब्रह्म एकज छे ने त्हेमनी एकतानो निश्चय समुद्र अने त्हेनी लहरीओना दृष्टान्तो करीने थायछे.

समुद्र ले(हे)रि ते एकज रूप (एम) जीव सदा ते ब्रह्मस्वरूप । नाममात्र ते कहिये जीव सर्वे निरंतर व्यापक शीव ॥ ३४ ॥

समुद्रमांथी उपजेली लहर ने समुद्र ए एकज रूप छे अर्थात् जळ छे,तेम जीव ते हमेशां ब्रह्म स्वरूपज छे.खरूं कहीए तो जीव ए संज्ञा मात्र छे, ने शिव एटले ब्रह्म ते सर्वे निरंतर ने व्यापकछे.

विश्वविचि ब्रह्मसागरतणी दृष्टि अदृष्टि कहि थोडी घ-णी। विचीनाम ते कल्पन मात्र सत्य कारण असत्य मृद्पात्र ॥ ३५ ॥

उदे अस्त माने जें कोंय मायामात्रथि जांणे सोय। वृद्धि क्षय आत्मानें नही समुद्रपेरे पूरणसही ॥ ३६ ॥

आत्मानो जन्म एटले उदय थाय छे ने त्हेनो अस्त एटले त्हेनुं मरण थायछे एवुं जे कोइ बोले ते मायावश छे एम जाणवुं. अज्ञानने लीधे ए एवी उक्ति करे छे. अस्तिथी ते नाश सुधीना जे षडोर्मि ते तो देहना छे,आत्माना नथी, माटे एने वृद्धि के क्षय कर्युं ए नथी. भरती ने ओट ए समुद्रनी लहर ने लीला छे तेम उपाधि-ओनुं रूपान्तर थवुं, विश्वोना विश्वनी उत्पत्ति, स्थिति ने लय थवां ए आत्मब्रह्मनी एक लहेर ने लीला छे. बाकी आत्मा तो समुद्रनी पेठे भरपूर भरेलो छे.

आत्मस्वरूप(ने) अज्ञाने राम पांमे उदे विश्व अशुं नाम। आत्मस्वरुप जांणो रघुराय विश्वनाम सहजे विलि जाय ॥ ३७ ॥

हे राम! आवा आत्मस्वरूपना अज्ञानथीज जगत एवुं नाम उभुं थायछे. हे रघुराय! आत्मस्वरूपज एक सत्य ने अविनाशी छे ने विश्वनो तो सहजे विलय थइ जायछे, कारणके ते असत्य छे.

चिदानंद अपरोक्ष स्वरूप सामराज्य भोगवि जे भूप।

ब्रह्मा आदे किट परीयंत देखो× परगट श्रीभगवंत ॥ ३८ ॥

आत्मा चिदानंद ने प्रत्यक्ष स्वरूप छे. परम आनंदरूप ए ज्यां जोईए त्यां प्रकट छे ने आ अनेक ब्रह्मांडोनुं ए राजेंद्र साम्राज्य भोगवेछे, एनेज वश बधांए विश्वो वर्तेछे. ब्रह्माथी मांडीने ते क्षुद्रमां क्षुद्र ए कीट सुधी जेमां दृष्टि करीए त्हेमां ए भगवान प्रकट देखायछे ते जूओ.

अंतरयांमी सवनो जेह नित्यमुक्त ब्रह्म भणीये तेह।
प्रत्यक्ष पेपो चैतनरूप देह देह प्रति ब्रह्मस्वरूप ॥३९॥

वळी प्राणी मात्रनो अंतरयामी ब्रह्म ते नित्यमुक्त पुरुष छे. चैतन्यरूपे ते बधायमां प्रकट प्रकाशे छे, भिन्न भिन्न देखाता बधाय देहोमां, उपाधिओमां एकज ब्रह्म स्वरूप रमी रहेलुं छे.

अकल निरंजन भणिये जेह बाह्याभ्यंतर व्यापक तेह।
जां (हां) जेवो तां तेवो राम नमुं नमुं निष्कलंक ति धामं ॥४०॥

घटघटनु व्यापी ए ब्रह्मस्वरूप अकळ छे, बुद्धिना कळयामां आवे एवुं नथी; वळी ए निरंजन एटले मळ रहित छे.दृश्य पदार्थोनी बहार ने भीतर बधेय ते व्यापेलुं एक रस भरेलुं छे. ज्यां त्यां सर्वत्र ए एक रूपज छे. आवा निष्कलंक ब्रह्मस्वरूपने, आत्मस्वरूपने हुं प्रणाम करूंछुं

× मूळ-पेखो.

सोहं हंस ए आत्मादेव हूं हूं ने नमुं अवश्यमेव । ज-
न हृदि राखो ए अभ्यास करजोडी कहि नरहरिदास॥२१॥

योगमां सोहं हंस कहेछे तेज ए आत्मा प्रभु छे,एटले हुं प्रणाम पण कोने करुं? जेने प्रणाम करवा जउंछुं ते तो हु छुं, एटले हु हुंनेज नमस्कार करुंछु!! माटे हे श्रोताओ आवी ! सर्वत्र ब्रह्म-दृष्टिनोज अभ्यास राखो.

इति श्रीवसिष्टसारगीतायां आत्ममनननिरूपणं नाम
षष्टं प्रकरणं ॥ ६ ॥

प्रकरण ७.

शुद्ध निरूपण.

पूर्वछायो. ॥

आत्ममनन निरुपण करी (हवि) शुद्ध निरूपण सार।
ए अनुभव हृदि राखतां लेपे* नहि संसार ॥ १ ॥
आत्मा शुध चैतन्य सदा (अने) भोगवि नाना भोग
चले स्वरूपथका नही (जो) जांणे आंतमजोग॥ २॥

* लेपे- वळगे-बधन पमाडे.

आत्मा नित्य शुद्ध चैतन्य छे, ए दृष्टारूपे, न्यारो रहीने नाना प्रकारना पदार्थभोग भोगवेछे. आत्मयोगने जाणवावाळा पुरुषो पोताना स्वरूपथी चलित थता नथी. कोइ पण कार्यमां, गमे तेवा व्यवहारमां तेओ पोताना शुद्ध स्वरूपनुं विस्मरण पामता नथी, पण एक रंगभूमि उपर पात्र आवी पोते लीधेलो वेष उदास वृत्तिए भजवी जाय तेम तेओ व्यवहारकर्म करेछे.

भोग योगि जे भोगवे तेहनि बंध न होय । पद्मपेरि रहि वेगला जिवनमुक्त ते सोय ॥ ३ ॥

आम योगदृष्टिए जे संसारना भोग भोगवेछे त्हेने कोइ जातनुं बंधन लागतुं नथी. जळमां जेम पद्म जळनो स्पर्श अनुभव्या विना न्यारुं ने न्यारुं रहेछे तेवी रीते आत्मयोगी संसारनां कर्म करतां, संसारना विविध भोग भोगवतां वेगळा ने वेगळा रहेछे; केमके तेओ तो जिवनमुक्त बनी रेहला होयछे.

वीचारे विष खाइए तो ते अमृत होय । अणविचार जे अनुभवे मरण पमाडे सोय ॥ ४ ॥

भोग भोगव्याछतां, कर्मप्रवृत्तिओ कर्या छतां, आत्म योगीने बंधन केम प्राप्त थतुं नथी त्हेनुं अहीं दृष्टांत आपेछे. विष जेवी वस्तुने पण जो विचारथी खाइए तो ते अमृत तुल्य बनी गुण आपेछे, परंतु अणविचार एटले विषने जेवुंछे तेवुंने तेवुं जो खावामां आवे तो तेथी अवश्य मृत्यु थाय छे. माटे विचार मुख्यछे. कर्मो ने भोगतो एना एज पण आत्मयोगीने त्हेमनुं बंधन न लागतां उलटो परमानंद मळेछे, ने अज्ञानी जीव ने परमदुःखनुं कारण थइ पडेछे.

प्रीछाने सहुं पाधरूं(अने)अणप्रिछाने ब्रह्मांड । ·
प्रीछाने कां(इ) ए नथी अणप्रीछाने मंड* ॥ ५ ॥

प्रीछाने एटले ब्रह्म जेणे पीछान्युं त्हेने-ज्ञानीने बधुंए सुतर छे, अनुकूळ छे, पण अणप्रीछाने कहेतां अज्ञानीने मन जूज वात पण एक महान् ब्रह्मांड जेवी वसमी लागे छे. ज्ञानीने कोई वातनुं कंई होतुं नथी, परंतु अज्ञानी जनोने संसारनो निर्वाह करवो ते एक जातनी मायाकूट लागे छे.

श्री रामोवाच॥

अद्दष्टि ते इष्टी बने द्दष्टि अद्दष्टि थाय । मुनिवर ते मु-
जने कहो ज्यम छे त्यम प्रीछाय ॥ ६ ॥

श्री रामचंद्रजी पूछे छे; हे मुनिवर! जे वस्तु जोवा अनुभववामां आवती नथी ते प्रत्यक्ष थाय अने जे आ दृश्य पदार्थों नजर आगळ तरी आवे छे ते अदृश्य थाय, मनमांथी खसी जाय एवो कोईक उपाय म्हने बतावो के जेथी वस्तुगति यथार्थ एटले जेवी छे तेवी पीछानवामां आवे.

प्रीछ न आवे जां(हां)लगी तां (हां) लगि संशय होय।
संशयिने ते सुख नही कल्पे जल्पे सोय ॥ ७ ॥

ज्यां सुधी ब्रह्मनुं–आत्मानुं ओळखाण पड्युं नथी त्यां सुधी मनुष्यने पोताना कल्याण विषये संशय उपज्या करेछे. जेने संशय

* मंड=मंडम् मार्युं-मायाकूट.

उपजे छे रहेने क्यारे पण सुख अनुभववामां आवतुं नथी, "संशयात्मा विनश्यति " एवुं कृष्ण परमात्माए अर्जुन प्रत्ये जे वचन कह्युं छे ते सत्य छे. संशयमा पडेलो माणस नाना प्रकारनी कल्पना ने चिंतन कर्यां करे छे.

बंध कल्पनानो टले (अने) भाजे सव संदेह । आत्मा आनंदपद रमे अनुभव कहो मुज तेह ॥ ८ ॥

माटे हे मुनि ! कल्पनाश उठवी बंध थई जाय एटले कल्पनानुं बंधन छूटी जाय, अने भ्रान्ति, संशय मात्रनो भंग थई जाय, अने परमानंदनो जीव अनुभव करे एवी कोई ज्ञानवार्ता कृपा करीनें कही बतावो.

॥ श्री वसिष्ठोवाच ॥

भणे वसिष्ट सुणो मत राम आत्मा चैतन्य पूरण काम। एह भाव अंतरगति धरो व्यवहार सुखे ए पेरे करो॥९॥

एवुं उत्तर आपतां वसिष्टजी कहे छे हे राम ! खरेखरा अनुभवनी वात कहुं छुं ते श्रवण करो. आत्मचैतन्य तो पूर्ण काम छेः एने कोई फळभोगनी स्पृहा के अपेक्षा नथी. ए सत्यने अंतरमां दृढावीने लोक व्यवहार करता आव्या होय तेम करो एथी कोइ जातनो बाध नथी.

देहधर्म संसारनुं काम उद्यम सकल करो इम राम । लोकबाह्यकृत सघलां करो हृदयथको उद्यम परहरो ॥ १० ॥

देहना निर्वाहनां अने संसारव्यवहारनां काम ए बधाए उद्यम ए प्रकारे एटले हुं आत्मारूप रहेने कशानीए तृष्णा नथी एम मानी कर्या करो, लोकने बतावबाना, जोवाना बहारना कार्य बधाए करो, पण कोइपण कर्मारंभनी वात हृदयने सामळवा देवी नहि. कोई जातनो उद्यम के प्रपंचप्रवृत्ति छेज नहि एम धारीने विहित मार्गे उद्यम करवो, पण तेहेने अंतरमां वसवा देवो नहि, हृदयथी एनो त्याग करीने बेसवु.

एणिपेरि* कर्म करे जन जेह निश्चय जांण अकर्ता तेह। लोकदृष्टि कर्ता ते सही (पण) वस्तुगती कर्ता ते नहीं ॥ ११ ॥

एवी रीते जे पुरुष कर्म आचरेछे ते हे राम! खरेखरो अकर्ता छे, केम जे, विवेकज्ञान प्राप्त थया पछी ए कर्मनु कर्तृत्व ने भोक्तृत्व माथे लेतो नथी. लोकदृष्टिए ते कर्मनो कर्ता छे एम जणाय पण वस्तुगतिए ते कर्ता नथी; केमके कर्मनी वासनाने ते तजी बेठेलो छे.

देहाभिमान मनथी परहरो (अने) लोकमांहि एमज वीचरो। अभीमान रहित नर जेह निश्चे निष्कर्म जाणो तेह ॥ १२ ॥

माटे देहाभिमानज मनथी कहाडी नाखवुं, कोईपण कर्मनुं हु निमित्त छु, अमुक कर्म तो हु कर्तु एवी बुद्धि कदापि धारण

* मूळ एणीपेर

करती नहि. एवी स्थितिने पामी पछी लोकव्यवहार करो. लोकव्यवहार तो अवश्य करवो जोइए, केमके ए विना वर्ण अने आश्रमनी व्यवस्था रहे नहि. पोताने कोईपण भोगनी वासना न होय तो पण लोकसंग्रहने अर्थे लोकोपकार सधाय ते माटे कर्म तो अवश्य करवां जोईए. देहाभिमान विनानो जे पुरुष छे त्हेने एवां कर्मनुं बंधन नथी, केमके खरूं जोतां ते निष्कर्म छेः फलसंधि विनानो छे.

कर्मबंध तेहनि नां करे लोकमांहि एमज वीचरे । हृदेथकी आशा सव खो (हो)य विषयविकार न व्यापे कोय. ॥ १३ ॥

एवी रीते लोकमां विचरता पुरुषने हे श्रोताओ ! कर्म बांधतां नथी, कारण आशा तृष्णानो हृदयथी अत्यन्त त्याग थइ गया पछी कोई जातनो विषयविकार थतो नथी, कोइ प्रकारनी भोगबुद्धि उपजती नथी, माटे फलतृष्णा राख्या विना कर्म करवानो पेतानो अधिकार जाणी जे कर्म करेछे त्हेने कंइपण दोषाश्रय होतो नथी.

रागद्वेष उभय परहरे राहित वासना ते कृत करे । लोकमांहि एमज वीचरो समाचार उद्यम सव करो ॥१४॥

एवो पुरुष कर्म करतां रागद्वेष धरतो नथी, पण त्हेमनो त्याग करी खरेखरो निर्वासन थइ ते कर्ममां जोडायछे, माटे त्हेने कर्मदोष के बंधन लागतुं नथी. हे श्रोताओ ! एवीज रीते लोकमा, संसारमा विचरवु, कशुंए तजवानुं नथी' कर्मप्रवाह कोईथी बंध थतो

नथी कर्म अवश्य थवानाज माटे निर्वासन थइ व्यवहार उद्यम बधुंए करो, बंधननुं भय राखी कर्म तजी बेसवानी बुद्धि न करशो.

पुरण दृष्टि अवलंबो तात विषयभोगनी करिश न वात।
हृदे स्थिर राखो शुभ वैराग्य संसारभोगनो* कीजे त्याग ॥ १५ ॥

हे भाई! सदाए पूर्ण दृष्टि राखीने रहेवुं. पूर्णदृष्टि एटले हुं सर्वकामपूर्ण छुं, परितृप्त छुं, म्हारे कोई पण विषयनी तृष्णा नथी एवा आत्मज्ञानने आशरीने रहेवुं, परतु क्यारे पण विषय-भोग भोगववानी बुद्धि धरवी नहि, शुद्ध वैराग्यने हृदयमां दृढ क-रीने मनथीज भोगविलासनो त्याग करी देवो. विषयनी यत्किंचित् अपेक्षा धरवी नहि.

स्वस्थ चित्त होये जेहनूं जिवनमुक्त नामज तेहनूं।
एम लोकमां विचरे जेह कर्मे बंधाये नहि तेह ॥१६॥

विषय तृष्णाविनानुं एटले जे पुरुषनुं मन स्वस्थ; आत्मरूप बनेलुं होयछे ते पुरुष खेरखरो जीवनमुक्त छे. ए पेरे एटले, स्व-स्थचित्ते जे लोकव्यवहार करेछे ते कर्मथी बंधातो नथी.

सुण राघव उत्तम उपदेश जेणे टलि संसारकलेश। ते कल कह्युं तमनें रघुवीर एक मना सुणज्यो ते धीर॥१७॥

हे राघव! परम ज्ञाननी वात हवे कहुंछुं ते श्रवण करो.—संसार

* मूळ.-विलासी.

नो क्लेश टळी जाय, जन्ममरण फरी फरीने अनुभववुं न पडे ए कला–साधन हुं त्हमने बतावुंछुं ते हे धीर ! एकमना थइने सांभळो.

एक आतमा अकल अरूप अंतरगत्य समेरे ते भूप।
बाहर नाना रुप ते जोय चिद्विलास मानीजे सोय
॥ १८ ॥

आत्मा अकल, अद्वैत ने अरूप छे. एना बाह्यदर्शनमो विचार न करता एनी अंतरगति एटले एना शुद्ध स्वरूपनो जे विचार करे छे ते एक राजेंद्र जेवो छे, एने वश बधुं जगत् वर्तेछे. आत्मा एक ने नित्य शुद्ध छे तो पण बाह्यदृष्टिए ते नानारूप एटले भिन्न भिन्न रूपधारी रहेलो जणायछे. आवी भिन्नता जे जोवामां आवेछे ते एक चिद् कहेतां चैतन्यनोज विलास छे, बीजुं कंई नथी.

हृदये राखो आत्मज्ञान करजो सघले दृष्टि समान।
बाहर जड मुकवत ते होय वृद्ध करे ते करजो सोय
॥ १९ ॥

त्यारे हृदयमां निरंतर आत्मज्ञानज भरी राखवुं, आत्मज्ञाननाज विचारो सदोदित करवा अने सर्वत्र समदृष्टि करवी. समदृष्टिवाळो पुरुष जाणे बहेरो, जड ने मुंगो होय तेम त्हेनी आसपास चालता प्रपंचमां ते जराए भाग लेतो नथी एवुं वृद्ध पुरुषोनुं कहेवुं छे, ने त्हमारे पण तेमज वर्त्तवुं. जे व्यवहारथी कार्य नथी त्हेमां चित्त घालवाथी बुद्धिभेद पमायछे ने रागद्वेष उपजी आवेछे.

अंतरथी करजो सव त्याग धरजो तीव्र ज्ञानविराग। वहि:संगि (होय) आसक्तीवान राजभोग भोगवि ग्रहि मान ॥ २० ॥

अंतरथीज विषयवासनानो त्याग करी नाखजो अने तीव्र ज्ञान वैराग्यने धारण करजो. बहारथी एटले लोकदृष्टिए जे पदार्थोनो संग ने आसक्ति रहेशे तेनी जरापण चिंता नथी. अंतरथी त्याग कर्या पछी आ बधा राज्यसुख निराते भोगवो पण एथी बंधन प्राप्त थशे नहि.

एम लोकमां विचरे जेह नर सर्वज्ञ भणीये तेह। जिवनमुक्त तां ते निर्धार वलि अवबोध कहूं सुण सार ॥ २१ ॥

एवी रीते जगतमां वर्त्तनार पुरुष सर्वज्ञ छे. जेणे ब्रह्म ओळख्यो तेने पछी कंई पण जाणवानुं बाकी न रह्युं ब्रह्मज्ञानमाज बधाए ज्ञाननी परिसमाप्ति थइ गइ. वळी ते पुरुष जीवनमुक्त छे, कारण के कर्म निष्कर्म जाणी लइ व्यवहार करता एने कोई पण प्रकारनु बंधन प्राप्त थतुं नथी. वळी ज्ञानानुभवनी वात कहुं ते हे रघुपति! श्रवण करो.

विशुद्ध ध्यान तां तेहनुं नाम (जे)सघले पेखे (एक) आतमाराम। सजाति विजाति स्वपर नहि भेद आत्मज्ञान ए जाणो वेद ॥ २२ ॥

पुरुष ज्यारे सर्वत्र एकज आत्मानो अनुभव पामे, एक आत्मा ब्रह्म विना बीजो कशो प्रपंच एनी दृष्टिए च्हडे नहि त्यारे ह्नेने विशुद्ध ज्ञान प्राप्त थयुं कहेवाय. विशुद्ध ज्ञान एटले विज्ञान, ज्ञानानुभव. आत्माज एक सत्य छे ने जगत मिथ्या छे एटलुं मात्र जाणुं एटले विशुद्ध ज्ञान प्राप्त थतुं नथी; कारण के अनुभव पाम्या विना जडतारूपी मळ जतो नथी, माटे सत्य वस्तुनो अनुभव थाय, आत्मा सर्वत्र देखाय–प्रगट देखाय त्यारे विशुद्ध ज्ञान प्राप्त थयुं कहेवाय. पछी जाति विजातिनो पोता, पारकानो भेद रहेतो नथी, कारण के ब्रह्ममांज सर्वमयता आवी रही छे. आत्मज्ञानएज खरुं ज्ञान छे.

निश्चय एह हृदयमां धरो द्वैतभाव सघलो परहरो। (जे) ज्ञानाग्निये कर्म वन दहे मानुभाव सुखि तेहनि कहे ॥ २३ ॥

हे श्रोताओ! आत्मज्ञान छे एज खरुं ज्ञान ए निश्चय–सिद्धान्तने हृदयमां संघरो अने द्वैतभाव–भेदबुद्धि मात्रनो त्याग करी दो. जे पुरुष पोताना ज्ञानरूपी अग्निए कर्मरूपी वन बाळी नाखे छे तेज खरुं सुख साधेछे, खरो सुखी एज छे एवुं महात्माओनुं कहेवु छे.

आत्मभाव हृदये धरि जेह सदा सुखी नर भणिये तेह। आत्मभाव हृदि जेहनि नही महादुःख भोगवि ते सही ॥ २४ ॥

वळी जेणे आत्मभावने हृदयमां संघर्योछे ते पुरुष महा सुखी छे एम जाणवुं, आत्मबुद्धि विनानो पुरुष महा दुःख भोगवेछे का-

रणके जे सर्वत्र एकात्मा छे एवो अनुभव पामतो नथी त्हेनी भेद बुद्धि टळती नथी ने भेदबुद्धि तो रागद्वेषनुं, बधा प्रपंचनुं कारण छे. रागद्वेष ने प्रपंच परमदुःख उपजावेछे.

दृढ बंधन * देहाभीमान सघले बांध्यो नर अज्ञान । कहीं द्वेष कहीं वलि राग कहीं मिश्र कहीं गुण× त्याग ॥ २५ ॥

देहाभिमाननो पाश बहु मजबूत छे अज्ञानी पुरुष ज्या त्या सर्वत्र एवा पाशथी बंधायछे. कोई स्थळे ए राग पामेछे, कहीं द्वेष अनुभवेछे, कहीं रागद्वेष उभयने वश थायछे ने ए रीते रागद्वेषथी पदार्थोने ते प्रिय गणी लेछे ने अप्रिय गणी तजेछे.

मन वाणी कर्म करि राम आपे (आप) बांध्युं ठामो ठाम । बंधन टळवानूं साधन सावधान थै श्रेह ज्यो जन ॥ २६ ॥

एम मन वाणी ने कर्म करीने हे राम ! अज्ञानी जीव ज्या जायछे त्या पोताने हाथे करीनेज बंधनमा पडेछे. ए बधन शी रीते टळे, शु साधन कर्युं होय तो सदाए विमुक्त थवाय, ते हे श्रोताओ! त्हमने कहुछु ते सावधान थइने सामळो.

ज्ञानमुर्त्ति चैतन्य हुं ब्रह्म निरालंब ने नित्य निष्कर्म । (ए) आत्मज्ञान पडग मन धरो देहाभिमान सकृत नव करो ॥ २७ ॥

---

* मूळ-पाश × पाठा-तर—ग्रहण

हुं आत्मा ते ज्ञानस्वरूप ने ब्रह्म छे, ए सदाए निराश्रय अने निष्कर्म छे, एवा आतमज्ञाननां छए अंग बराबर जाणी ल्यो ने एकवार पण देहाभिमान करशो नहियोगनां साधारण रीते आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, यम, नियम, ध्यान, धारणा ने समाधि ए अष्टअंग कहेवाय छे. केटलाक प्रथमनां आसन प्राणायमने छोडी दई छ अंग गणावेछे.

निजानंद सुप पांमे तेह देहाभिमान विवर्जित जेह ।
अनात्मपणूं परहर तं तात निहाल सघले ब्रह्म साक्षात॥२८॥

जे पुरुष देहाभिमान विनानो छे तेज निजानंद कहेतां पोताना आत्मस्वरूपने ओळखवाथी जे आनंद प्राप्त थायछे ते प्राप्त करेछे. माटे हे भाई! अनात्मपणुं एटले जडबुद्धिनो त्याग करी देवो ने सर्वत्र साक्षात एक ब्रह्मज विलसेछे एम निहाळवुं, एवो अनुभव पामवो.

जगतभाव सघलो परहरो आत्मभाव निरंतर धरो आ·
त्मनिष्ट अंतरगत राप देहबुध्य ते सघली नाख्य ॥२९॥

जगत्नी भावना मनमांथी तद्दन कहाडी नाखवी अने सर्व एक आत्ममय छे एवी भावना हमेशां राखी रहेवुं. बधो प्रपंच, बधुं विश्व ते एक आत्मानो प्रकाश छे ने एक आत्माज सत्य छे एम जाणी आत्मरूप बनी रहेवुं तेने आत्मनिष्टा कहेछे. एवी निष्टा संघरवी अने देहबुद्धि एटले पदार्थकल्पना, देह, पदार्थ सत्य छे ने ते विना बीजुं कंइ नथी एवी भावनानो अत्यन्त लय करी नाखवो.

आत्मज्ञान अनुभवी जेह चिदानंद ब्रह्म कहिये तेह ।

(जे) देहादिकथी मोहे नहीं आत्मज्ञान ते जाणो सही ॥ ३० ॥

ए प्रमाणे आत्मज्ञान पामी त्हेनो जे अनुभव करे त्हेने चिदानंद ब्रह्म कहिये. आत्मज्ञान जेने यथार्थ प्राप्त थयुं छे ते पुरुष देहादिक एटले देह, मन, इन्द्रिय आदि सर्व प्रपंचथी मोह पामतो नथी, ए एमनुं मिथ्या स्वरूप जाणीनेज रहेछे.

जाग्रत स्वप्न सुषोप्ति राम एथि रहित ते तुरिया धाम। जहां कल्पना (मात्र) नो लय होय तुरियापद ते कहिये सोय ॥ ३१ ॥

जागृत, स्वप्न अने सुषुप्ति ए त्रण अवस्थाओनो तो मनुष्य मात्र अनुभव करे छे. ए अवस्थाओथी रहित थवाय त्यारे परम सुखरूप जे तुरीया त्हेनो लाभ थाय. तुरीयावस्था एवी छे के त्हेमां पछी पदार्थकल्पनाज उठती नथी, कोई जातनो संकल्प विकल्प थतो नथी, मन स्थिर शान्त थई रहेछे.

तुरिया तेह तमारूं रूप (जे) शुद्ध सनातन ब्रह्म स्वरूप। सदा सर्वदा तन्मय होय चैतन्यस्वरूप विषे तम सोय ॥ ३२ ॥

हे राम! हे प्रभु! त्हमारुं तुरीयापद स्वरूप छे ने ते शुद्ध सनातन ने ब्रह्मरूप छे. त्हमारामाज साधु पुरुषो निरंतर तन्मय थईने रहेछे. वळी चैतन्य स्वरूपमां पण त्हमेज रहेला छो ने ए रीते घट घटना

छो, एटले रहमने कंइज कहेवानुं के उपदेशवानुं होयज नहि; छतां लोककल्याणने अर्थे मनुष्यलीला करोछो त्यारे विवेकविचार बोधी बतावुं छुं.

ग्राह्य ग्राहक भावनि टाल्य आत्मा नीरालंब निहाल्य ।
अखिल भावना कहाडी मेल्य जेवो छे तेवो थै पेल्य॥३३॥

आ बधा पदार्थो, सेववाना विषयो सत्यने सुखरूप छे माटे ते ग्राह्य छे ने सुखनो भोक्ता हुं रहेमनो ग्राहक छुं एवी भावना टाळी दे सुखप्राप्तिने अर्थे आत्माने कोई पण पदार्थनी अपेक्षा नथी; केम जे ते स्वत ज सुखरूप छे, परमानंदरूप छे, माटे एवा आत्माने निराश्रयी जाणी निहाळ्या करो, अर्थात् एनीज भावना राखो ने बीजी बधी प्रपचबुद्धि मनमाथी कहाडी नाखो, एटले शुद्ध स्वरूपे तु जेवो छे तेवोज थईने खेल्य एटले ससार व्यवहारना काम कर.

आत्मस्वरूप राहित रुप नाम आत्मस्वरुप ते पूरण-काम । कशी कल्पना नही जेहने ब्रह्मिभूत कहिये तेहने ॥३४॥

पदार्थना रूप अने नाम ते मिथ्या एटले आत्मस्वरूप विनानां छे; एटले एमांथी सुख पामवानी इच्छा राखीश नहि. अने आत्मस्वरूप तो पूर्णकाम छे' एने कोई पण काम पूर्ण करवानो बाकी नथी, कोई विषयनी एने तृष्णा नथी, माटे रहेने भजवुं के सुखप्राप्ति थाय. जे पुरुषना मनमा कोई वातनी कल्पना उठती नथी एटले जे स्थिर शान्त रहेछे रहेने ब्रह्मीभूत कहे छे.

मनन शितल शूणो रघुवीर अधिक बोध कहुं तुजने धीर । संकल्पमात्रनो त्यागज करो× विषयभाव सघलो परहरो ॥३५॥

आत्ममननथी शीतळ थयेला हे रामचंद्रजी! पाछी ज्ञानवार्ता करूं छुं ते सांभळो. प्रथम मनमांथी संकल्प नामे कहाडी नाखो अने संसारना विषयो भोगववानी जे तृष्णा रहे छे ग्हेनो परित्याग करी, विषयोनो विचार सरखो करशो नहि.

मन ते अमन करो रघुराय निर्वासानि मन सून्य समाय। संकल्पतणो सम्यक करि नाश आतमनेष्टा होय प्रकाश ॥ ३६ ॥

ए रीते मन छे ग्हेने, संकल्पधर्म रहित—विषयवासना विनानुं एटले अमन बनावी दो. मन अमन थये, निर्वासन थये शून्य, शान्त थई ब्रह्ममांज एटले ग्हेना कारणमां समाई जशे. संकल्पधर्मनो खरे खरो त्याग थवाथी आत्मनिष्टा—एकात्मबुद्धि प्रकाशी उठे छे.

मन थको संकल्पज (जेहनो) गयो अध्यात्मबोध उदि तेहनि थयो । ए अनुभव होये जेहने पदारथ दुष्कर नहि तेहने ॥३७॥

जेना मनमांथी संकल्प मात्र निकळी गयो छे ते पुरुषनामां अध्यात्म ज्ञाननो उदय थायछे. अध्यात्मज्ञाननो अनुभव मळवाथी

× मूळमां —संकल्प ते असकल्प

कोई पण पदार्थ विषम लागतो नथी. कोई पण वस्तु दुर्लभ लागती नथी अर्थात् आत्मानुभवीने सर्व सिद्धिओ आवीने प्राप्त थाय छे.

संकल्प रहित जेहनुं मन थयूं (तेणे) अण आशायि सकल सुख लहूं । श्यम संकल्प (सघळो)सहेजे जाय (हवे) तेह उपाय सुणो रघुराय ॥ ३८ ॥

वळी जेनुं मन संकल्प रहित थेउं छे ते कशानी पण तृष्णा के आशा राख्या विना परम सुख भोगवेछे. मनमांथी संकल्प निर्मूळ करवो ए अति कठिण छे छतां हुं एवो उपाय बतावुं छुं के तेथी सहजे त्हेनो नाश थइ जशे. माटे हे! राम ए उपाय सांभळो.

विवेक देह आत्मानो करो संकल्प विचारथकी परह - रो । बधिर मुक जड देहज अंध तेहशु तहारि कशो संबंध ॥ ३९ ॥

प्रथम देह अने आत्मानो विवेककरी अने पछी देह ते असत्य, मिथ्या छे एवा विचारे ए विषये थता संकल्प मनमांथी कहाडी नाखो. देह, ब्हेरो, मुगो, जड ने अंध छे, तो हे पामर जीव! एनी साथे तुं शुं संबंध बांधीने राजी थाय छे? ए क्षणभंगुर देह क्यारे पडी जशे ते कही शकातुं नथी, ने एमांथी सुख प्राप्त करवानी आशा खोटी छे. आ प्रमाणे ज्ञानानुभव करवो, देहभावनाने खोटी ठराववी.

संबंध देह आत्माने च्यथी जोयुं विविध पेरे में कथी ।

(तो) देहाशक्त थईने तात दुखसुख कां भोगवि सा-
क्षात ॥४०॥

हे भाई, म्हें घणो घणो शोध करी जोयो पण एज सत्य जड्युं के देह अने आत्माने कोई प्रकारनो संबंध नथी, माटे एनो तादाम्य संबंध मानी, देहमा आशक्त थईने साक्षात् सुखदु खनो अनुभव शा माटे करवो ? अर्थात् मिथ्या देहमा ममता बांधी सुखदु.खना भोक्ता थवुं ए अज्ञानज छे.

देहनुं ने आत्मानूं रूप ते सांभळ तूं रघुपति भूप ।
कहां आत्मा ने क्यां (ए) देह टले विचारे सव
संदेह ॥ ४१ ॥

देह अने आत्मानो खरो विवेक थाय माटे हे राजेंद्र ! हवे हुं स्हेमनां लक्षण बतावुंछुं ते सामळो. अरेरे ! अज्ञानी जीव मोह पामे छे, देह अने आत्माने एकरूप मानी लेछे, पण आत्मा क्यां अने आ देह क्यां ? ए उभयना स्वरूपनो विचार करवाथी संशय मा-त्रनो, भ्रान्ति मात्रनो नाश थायछे.

रुधिर मांसादिकनो देह असुख क्षेत्र क्षणभंगूर तेह । त-
त्वं आत्मा स्वयं प्रकाश चैतन्य ज्ञान मुक्त अविनाश॥४२॥

देह तो रुधिर, मांस मज्जादिनो बनेलो, दु खनुंज क्षेत्र ने क्षण-भंगुर छे. अने तत्त्व-आत्मा ए स्वयं प्रकाशछे, चिद्रुप, ज्ञानमय, नित्यमुक्त अने अविनाश छे.

अनात्मबुध्य इम जाणी टाल्य स्वस्वरूप निरंतर न्याल। देहाभिमाननो करता नाश होये परमानंद प्रकाश ॥४३॥

एवा ज्ञानविचारे अनात्मबुद्धि एटले देहभावना टाळी देवी अने स्वस्वरूप जे आत्मा रहेनाज तरफ अहोनिश दृष्टि राखवी. देहनुं अभिमान तजी देवाथी परमानंद प्रकाशेछे. खरी सुखनी स्थिति एज.

एह विवेक ग्रहो देवेश परमात्मा विषि करो प्रवेश। काष्ट लोष्ट मृदत्रणवत देह* तेसु तारे कशो स्नेह ॥४४॥

हे देवेश! एवो विवेक संघरवो अने परमात्मामां प्रवेश करवो, एटले ब्रह्मरूप थवुं. आ क्षणभंगुर देह काष्ट, लोष्ट, मृतिका अने तृण जेवो छे, जड, विकारी ने परम दुःखरूप छे तो हे जीव! एनी साथे तुं शुं स्नेह बांधे छे? स्नेह ममता राखवाने देह कोई रीते पात्र नथी.

देहासक्त मुके जे राम तत्वज्ञानि नर तेहनुं नाम। देहभावनो (रहे) जां लगि लेश पुरुष भोगवि त्यां लगि कलेश ॥ ४५ ॥

एवा देहनी आसक्ति ने पुरुष मूकी देछे रहेने तत्त्वज्ञानी जाणवो. देहबुद्धिनो—जडतानो त्याग करता करतां एनो लेश पण ज्यां सुधी रहेछे—अंश मात्र पण जडता रहेछे त्या सुधी पुरुष नाना

---

* पाठान्तरः—काष्ठवत तृणवत मृदवत देह

प्रकारनो कलेश भोगवेछे, त्हेने विषम तृष्णादि स्फूरी आवी परम यातना भोगववी पडेछे.

महदाश्चर्य जुओ तमि राम विचित्र चित्र मायानूं काम ।
(जे) दृष्टिपदारथ सत करि जोय तेहनि ब्रह्म विस-
मरण होय ॥ ४६ ॥

वळी हे राम ! आ म्होटा आश्चर्यनी वातछे ते तो जूओ: मायानुं कार्य चित्र विचित्र छे, विलक्षण छेः दृष्टि पदार्थोने सत्य मानी लेवाथी पुरुषने ब्रह्मनुं, पोताना आत्मानुं पण विस्मरण थइ जायछे, एवो मायानो मोह छे के ते पदार्थोने कारणा बनावी मूके छे ने त्हेना मोहमां जीव फसाय छे, ने विपरीत बुद्धि धरी बेसे छे, पोतापणुं विसरी जाय छे.

मायायें मोहा नर जेह देहादिक विषि तेहनि स्नेह ।
आसक्ति रूप विषे जेहने आ मस्मरण नोंहे तेहने ॥४७॥

एवा विलक्षण मायाकर्मथी जे मनुष्यो मोह पामेछे, भ्रान्तिवश थइ जाय छे ते देहादिक पदार्थोनो स्नेह बांधी रहेछे, त्हेमांज आसक्त ने तन्मय थइ जायछे. जे मनुष्यो रूपमांज प्रीति राखेछे त्हेमने आत्मस्मरण रहेतुं नथी–एटले जड वस्तुओना रूपस्पर्शथी तेओ पण जड बनी जायछे. अहो आश्चर्य !

परब्रह्म विस्मरणे राम अहं ममत (क्रोध)ने उपजे काम ।
अविद्यानुं लक्षण तां एह असत्य मानवुं सत करि
जेह ॥ ४८ ॥

आत्मा जे परब्रह्म रूप छे ह्हेना विस्मरणथी, अहं, ममत्व, क्रोध अने कामवासना उपजी आवेछे. असत्य वस्तुने सत्य मानी लेवी एज अविद्यानुं एटले अज्ञाननुं लक्षण छे. कारणके ज्ञानी ह्हेने मिथ्या समजी तजी दे छे, ने कोई रीते ह्हेनो मोह धरतो नथी–

सत्यस्वरूपनुं नोहे ज्ञान प्रथकबुध्यदेहाभीमान ।
प्रकृत्भाव सघलो परहरो अहर्निश आत्माचिंतन करो ॥ ४९ ॥

सत्यस्वरूप जे आत्मा ह्हेनुं ज्ञान होतुं नथी त्यां सुधी पृथक् बुद्धि एटले नानात्व अने देहाभिमान उपजे छे, माटे प्रकृतिभाव एटले पदार्थ कल्पना, विश्वभावना जे जडता छे ते बधी मनमांथी कहाडी नाखो अने रातदिवस सत्य, अद्वैत एक आत्मानुंज चिंतवन मनन करो.

ब्रह्मविद्यानुं लक्षण जेह रघुपती सांभलज्यो तेह । सर्वे
निरंतर ब्रह्म जे जोय जिवनमुक्त भणिये ते सोय ॥५०॥

हे रघुपति! ब्रह्म विद्यानुं एवुं लक्षण छे के ते प्राप्त थया पछी अखिल विश्व नित्ये ब्रह्मरूपज भासे छे अने एवी दृष्टिवाळो पुरुष जीवनमुक्त छे.

हवे सर्व (था) प्रकारे राम नानाबुध्यनो टालो ठांम।
ब्रह्मभाव जेहनि चित होय जिवनमुक्त योगेश्वर सोय
॥५१॥

हे राम ! बधीए वातोनो संग्रह करी संक्षेपमां कहुं छुं के ना॰

नाबुद्धि एटले पृथक् भावना, पदार्थ पदार्थने जूदौ जूदो मानवानी भेद भरी बुद्धि, एनो ठाम टाळी देवो एटले एवी बुद्धिने हृदयमां क्यारे पण स्थान आपवुं नहि. जे पुरुषने मन निरंतर ब्रह्मभावना छे तेज जीवनमुक्त छे.

अहंममत्व मनथी परहरो ब्रह्मभाव निरंतर धरो । वलि वलि कीजे ए अभ्यास कर जोडी कहि नरहरिदास॥५२॥

हवे आखा प्रकरणनो उपसंहार करी नरहरिदास कहेछे हे श्रोताओ ! मनमां जे अहं ममत्व, हुं ने म्हारूं मराई वेतुं छे रहेनो त्याग करो ने एक ब्रह्मज सत्य छे, सर्वत्र छे, ध्येय छे, एम जाणी रहे-मुंज सदोदित ध्यान करो. ए ध्यान तेज आत्मयोग छे. वळी वारं-वार ए ध्याननो अभ्यास राखो; कारणके अभ्यासथी भावना दृढ थायछे ने निश्चय बुद्धि पमायछे.

इति श्रीवसिष्ठसारगीतायां शुद्धतत्त्वनिरूपण नाम सप्तम प्रकरणं ॥ ७ ॥

प्रकरण ८.

आत्मार्चन

पूर्वछायो.

शुद्धतत्त्व निरुपण कर्‍युं हवि कहुं (ते) आत्मार्चन ।
आत्माना अर्चन विना नोहे कृतकृत जंन ॥ १ ॥

ए प्रमाणे शुद्ध तत्त्व ने ब्रह्म तेहेनुं निरूपण करी, तेहेनुं सत्य स्वरूप समजावी हवे आत्मार्चन करवानी वात कहुंछु, आत्माना अर्चन विना, परामक्ति पाम्या विना मनुष्य कृतकृत्य थता नथी, एटले पूर्णकाम बनता नथी.

आत्मानुं अर्चन करे प्रगटे आतमज्ञान । ज्ञाने ज्ञेयज जाणिये ज्ञानि गले अभिमान ॥ २ ॥

आत्मनिष्ठाथी आत्मज्ञाननो उदय थायछे ने पदार्थभावनानी देहाभिमाननी जडता दूर थायछे. आत्मज्ञानथी ज्ञेय वस्तु जे ब्रह्म ते ओळखवामां आवेछे. ब्रह्मनुं ओळखाण बुद्धिआदि साधनथी थतुं नथी, कारणके बुद्धिथी ते पर छे. एनो निश्चय आत्म साधनथीज थाय छे.आत्मज्ञान थवाथी उपर कह्युं तेम अभिमान ने हृदय गळी जायछे.

ज्ञानि मुक्ति ते पामिये (अने) ज्ञाने बंधन जाय भक्ति ज्ञाने ऊपजे बीजो नथी उपाय ॥ ३ ॥

आत्मज्ञान थयुं एटले मोक्ष अनुभवायछे ने संसारनुं, जन्मम-रणनुं बंधन छूटी पडेछे, अने जेहेने आपणे पराभक्ति कहीए छीए ते पण ज्ञानथीज उदय पामेछे, ब्रह्मनी साथे एकरूपता पामवाने पण आत्मज्ञानज साधन छे. आम मुक्ति मेळववा, संसारनां बंधन छोड-वाने अने भक्तिप्राप्ति माटे ज्ञानज एक साधन छे, बीजो कोई पण उपाय नथी.

आत्मानुं, अर्चन करो कहि मुनि वारंवार । राघव एणे अनुभवे होय आत्मा साक्षात्कार ॥ ४ ॥

गुरु वसिष्ट वारंवार कहेछे के हे रामचंद्रजी! एक आत्मानुंम अर्चन करवुं, अर्चन एटले पूजा, ध्यान; ए अनुभवथी पछी आत्मानो साक्षात्कार थशे, आत्मा प्रकट मासशे.

आत्मरूप ते कहो किहुं कथम किजि आत्मार्चन ।
ते अनुभव मुनिवर कहो (ज्यम) आनंद पांमि मंन
॥ ५ ॥

श्रीरामोवाच ॥

हवे श्रीरामचंद्रजी पूछे छेः हे गुरु! आत्मरूप केवुं होय, आत्मरूप कोने कहेवु, ने तेहेने ओळखीने आ जे अर्पन करवानुं आप मताबोछो ते शीरीते करवुं? आ संसारनुं निवारण थाय ने मनने आनंदलाम मळे एवो कंई अनुभव हे मुनिवर कृपा करीने मतावो.

श्रीवसिष्टउवाच ॥

चोपै.

सुणजो राघव कहुं ते धर्म आत्मार्चन निर्ध्धं निष्कर्म ।
ज्ञानविचार हृदयमां धरो आत्माथी देह अलगो करो॥६॥

गुरुजी तेहेनो उत्तर आपे छेः हे राघव! श्रवण करो. हुं ते धर्म लक्षण बनावु छुं. आत्मार्चन एटले नैष्कर्म्य. निष्काम बुद्धिए कर्म करवाथीज आत्मार्चन थायछे. ज्ञानविचार करीने प्रथम तो आत्माथी देह भिन्न छे एम जाणी लेवुं.

(ज्यारे) पुरुष वासना देहनि तजे त्यारे चित चिद रुपने भजे । थाय वासनाए (करी) उंच नीच जाय वासनाए दश दीस ॥ ७॥

ए रीते देहने आत्माथी भिन्न जाणी पछी पुरुष सुक्ष्म देहना विचार छोडी दे त्यारे मनना संकल्प धर्मनो त्याग थवाथी ते चिद्रूप बनी जायछे. पुरुष वासनाथी नीच बने छे ने त्हेनो त्याग करवाथी ऊंच बनेछे. त्हेनी दशे दिशानी विश्वव्याप्त प्रवृत्तिओ पण वासनाने लईने थाय छे.

स्थूलदेह राघव जड जांण्य सुक्षम ते चैतन्य प्रमांण्य । स्थुलत्याग ते त्यागज नही सूक्ष्मत्याग ते त्यागज सही ॥ ८ ॥

आ जे स्थूल देह ते तो जड छे ने सूक्ष्म देह ते सचेत छे, माटे देहनो त्याग ते स्थूळ त्याग छे, वास्तविक ते त्याग न कहेवाय. खरो त्याग तो सूक्ष्म देहनो करवानो छे, कारण के खरी प्रवृत्तिओ ए देहनी छे; स्थूल देहथी कर्म तजी बेसे पण मनमांथी त्हेनी वासना न मटे त्या सुधी ए त्याग काममां न आवे.

सर्वरीत्य* सुक्षम परहरो राघव ए अनुभव हृदि धरो । सुक्षम ने त्यागे कहुं राम निर्श्चे चित पांमे विश्राम ॥९॥

माटे हरेक उपाये सूक्ष्मनो त्याग करवानुं करो अने हे राघव !

* मूळ प्रर्यंषा.—

पछी जूओ के ए त्यागथी केवो सुखानुभव थायछे. हे राम ! सूक्ष्मना त्यागथी चित्तवृत्तिओ निःसंशय विश्रान्ति पामेछे, मन निवृत्त थई जायछे.

विश्राम चित्त पांमे जिणिवार (त्यारे) भासे ब्रह्मज साक्षात्कार। अशेष विश्व त्यारे तृणकृत ब्रह्माकार ज्यारे चितवृत ॥ १० ॥

चित्त विश्राम पांमेछे एटले तरतज ब्रह्मनो साक्षात्कार थायछे, आत्म ब्रह्म प्रकटज देखायछे, ए रीते चित्तवृत्तिओ ब्रह्माकार थयाथी विश्व बधुं अशेष थई जायछे, विश्व एवुं कंई नजरे आवतुं नथी, एनी भावनाज गळी जायछे ने ते तृणवत थई रहेछे; कारण के मन जे विश्वनुं कारण रहेनो ब्रह्ममां लय थयाथी विश्वनो पण विलय थई जायछे.

स्वयं ब्रह्म तां भाणिये तेह देहभाव विवर्जित जेह। शीतल चित्त सदा मन ठांम अद्वैत एक ते आत्माराम ॥ ११ ॥

देहनी भावनाथी विमुक्त थयलो पुरुष पोतेज आत्मा छे; कारण के एनी चित्तवृत्तिओ शमी गयाथी एनुं मन निरंतर ठेकाणेनुं ठेकाणे एटले ब्रह्ममांज रहेछे. एवी स्थिति थतां एक अद्वैत एवो आत्माज प्रकाशी रहेछे.

देहभाव सघलो परहरे ब्रह्मविषे निश्चल चित धरे

(तो) भवनां बंधन हवडां टले (जो) संग तजि मन ब्रह्ममां भले ॥ १२ ॥

पुरुष जो देहभावनानो अत्यन्त त्याग करी दईने निश्चळ थयलुं चित्त एईने ब्रह्ममां धरे एटले ब्रह्म भणी वाळे, रहेमांज तद्रूप करे तो संसारनां बंधननो नाश थवाने एक क्षण पण वार लागे नहि, हमणा-ने हमणाज ते टळी जाय पण मात्र एटलुं के पदार्थोनो, जड वस्तुनो संग तजी दई ने मन ब्रह्ममां मळी जवुं जोईए, ब्रह्मरूपज बनी जवुं जोईए.

शांत सुखी नर ते जांणजो ज्ञानवान तेहनि मानजो। ज्ञानीने मस्तक मणि नहीं पण लक्षणथी लखिए सही ॥ १३ ॥

एवी रीते जे पुरुषे पदार्थोनो संग तजीने मन ब्रह्माकार बनाव्युं छे रहेनेज परम शांत ने सुखी जाणवो. खरो ज्ञानी पण एज छे. ज्ञानी पुरुषने ओळखवाने माटे कंई रहेने मस्तक मणि बांधेलो होतो नथी, एतो एनां लक्षणथीज ओळखी लेवायछे.

विश्व (समस्त) एक आत्मारुप जोय ऊंच नीच देखे नहि कोय। नानाबुध्य नोहे जेहने तत्त्वज्ञानि कहिये तेहने ॥ १४ ॥

आखुं विश्व एक आत्मानुंज स्वरूप छे एवो जेहनी दृष्टि अनुभव करे ने जेनी नजरे कोई ऊंच के नीच जणाय नहि, अने जेनामां

नानाबुद्धि एटले भेदभावना जरा पण रहेती न होय एवा पुरुषने तत्वज्ञानी कहेवो.

प्रपंचे थकी मन पाछूं करो आत्मस्वरूप विषे लई धरो। प्रगट आतमा पेखे जेह ज्ञानी नर ता भणिये तेह ॥१५॥

जे पुरुष आ दृश्य प्रपंच जाणी पोताना मनने जरापण जवादे नहि, ग्ली पछीने पाछुं वाळी आत्मस्वरूपमाज रहेने शमावी दे, अने सर्वत्र आत्माने प्रकटपणे जूए ते पुरुष ज्ञानी कहेवाय.

ज्ञानी तेतो प्रगटज ब्रह्म (जेणे) ज्ञानाग्निमां होम्यां कर्म। ज्ञानी ज्ञानदृष्टी ते जोय प्रत्यक्ष आतमा पेखे सोय ॥ १६ ॥

ज्ञानी पुरुषथी ब्रह्म क्यांय छुपाई रहेतो नथी, ए एने सर्वत्र प्रकट रूपेज जणाय छे कारणके एणे कर्म मात्र ज्ञानरूपी अग्निमा होमी दीधेलां होयछे एटले ए निष्काम बुद्धिए वर्तेछे ने तेथी, आत्मदर्शन पामेछे. ज्ञानी पुरुष आ चर्मचक्षुथी जोता नथी पण ते ज्ञानदृष्टिए ए विश्वरूप जूए छे एटले रहेने आत्मानो सर्वत्र साक्षात्कार थायछे.

जेनां नाम अनंत अपार परात्पर ते विश्वाधार। जेहनुं स्वरूप कहुं हुंज तात अनिर्वचनी जे ब्रह्म शाक्षात् ॥ १७ ॥

आत्मानां नाम अनंत अपार छे, ए परथी पण पर, सूक्ष्मथी पण

सूक्ष्म छे, ने आखा विश्वने ते धारण करी रह्यो छे. आत्मा खरूं जोतां अनिर्वचनीय ने साक्षात् ब्रह्म छे, तो पण त्हेनुं स्वरूप हुं यथामति कही बतावुंछुं.

देहेंद्रिनो प्रवर्तक जेह अंतर्जामी आत्मा तेह । शब्द स्पर्श रस आदे ग्रहे निगम आतमा तेहनि कहे ॥१८॥

आ देह अने इन्द्रियोनो प्रवर्तक एटले जेने आश्रये ते पोतपोतानां कर्म करेछे, ते अंतर्यामी आत्माज छे. वळी शब्द, स्पर्श, रूप, रस अने गंध एने ग्रहण करवावाळुं जे चैतन्य ते पण आत्माज छे एवुं वेदमां कहेछे.

ते परमेश्वर ते परब्रह्म तेणे करि होये सर्वकर्म । साचो निश्चे हृदिए आण्य चैतन ते परमेश्वर जाण्य ॥१९॥

आत्मा एज परमेश्वर ने ब्रह्म पण तेज छे. एने आश्रयेज आ बधी कर्मवृत्तिओ चालेछे, आखा संसारनो निर्वाह थायछे. आ सत्य सिद्धान्त हृदयमां स्थिर करी राखवो अने चैतन्य तेज पुरुषोत्तम छे एवो निश्चय करी लेवो.

पृथ्वि (अप) तेज वायु आकाश प्रपंच जेणे किधो प्रकाश । अनेक भाव रचना जिणि करी (ते) परम पुरुष नारायण हरी ॥ २० ॥

पृथ्वी, पाणी, तेज, वायु अने आकाश ए पंच महाभूतो ने आ बधो प्रपंच एटले आ दृष्टि पदार्थो, आखुं विश्व, आत्माज उप-

जाण्युं छे. एणेज आ एकमांथी अनेक पदार्थोनी रचना करी छे, परम पुरुष, नारायण अने प्रभु जे कहीए ते ए आत्माज छे.

ब्रह्मांड अनंत निरम्यां जिणि एव ते जांणो देवाधी-देव। ते आत्मा परमात्मा राम ते व्यण ठालो नहि को ठाम ॥ २१ ॥

अनंत ब्रह्मांड आत्मा ए एक क्षणमा निर्मी कहाड्या छे. हे राम ! हे श्रोताओ ! देवनो पण ए देव छे ने आत्मा एज परमात्मा छे; एना विना एक पण स्थान खाली नथी,सर्वत्र ए भरपूर भरेलो छे.

अति समीप तेहनि जाणिये राघव ते अनुभव आणिये । जगतसंबंधी तत्वो जेह पंच पंच तां भणीये तेह॥२२॥

ए आत्माने क्याय शोधवा जवुं पडे एम नथी, ए आपणी अति समीप छे. हे राम ! ए ज्ञानानुभव अवश्य करवा जेवो छे, जगत बधुं पंचतत्त्वोनुं बनेलुंछे ने ए तत्त्वो ते परिणामे आत्मारूप छे. आम सर्वत्र ने सर्व आत्माज छे.

नेति नेति जुगत करि करो, (अव) शेप ऊगरे ते हृदि धरो । (जे) निरंजन निर्गुण नीराकार चीद्-रूप ब्रह्म अकल अपार ॥ २३ ॥

आटलुं कह्या छतां पण एनुं स्वरूप कळ्यामा आवे एवुं नथी माटे विवेकथी जे जे कल्पनामा आवे, दृष्टिए चहडे ते बधुं आत्मा नथी. एम निषेध करता करता जे अवशेप रहे, ज्हेनुं वर्णन पछी

करी न शकाय, के जेनी कल्पना पण न स्फूरे ते आत्मा छे एम जाणी पछी त्हेने हृदयमां संघरी राखो. आत्मा निरंजन, निर्गुण, निराकार, चिद्रूप, अकळ अने अपार एवो ब्रह्म छे.

ते उपरां कहेवा अन्य नथी वेद पुराणे जोयुं कथी । जे निश्चल नीरंजन (परम) धाम सोहं हंस ते आत्माराम ॥ २४ ॥

आत्मा कह्यो एटले बधुंए कहेवाइ रह्युं.एनाथी पर एवी कोइ पण वस्तु नथी. वेद अने पुराण वगेरे उथामी जोया पण आत्माथी पर कंइ होय एवुं जडतुं नथी. हे राम ! निश्चळ, निरंजन स्वरूप एवो आत्मा तेज सोहं हंस कहेतां ब्रह्म छे.

ए चिंतन अंतरगति राख अवरभाव ते सघलो नांख्य । ए अर्चा ने एहज ध्यान आत्मा परमात्मा ए ज्ञान ॥२५॥

एवा आत्मानुं मनन अंतरमां कर्या करो ने बीजी बधी भावनाने तजी दो, टाळी दो, आत्मानुं मनन एज अर्चा ने ध्यान पण छे, अने आत्मा ते परमात्मा छे एम जाणी लेवुं एने "ज्ञान" कहे छे.

(एह) ज्ञान तुलाए नावे कोय वालि वालि राघव कहुं छुं सोय । अनेक साधन बोल्यां जेह ज्ञान पामवा जाणो तेह ॥ २६ ॥

हे राम ! हुं पुनः पुनः कहुंछुं के ए ज्ञाननी तुल्यं बीजुं कशुं

नथी. बीजां बधां साधन कर्म बताव्यां ते मात्र ज्ञाननी प्राप्तिने अर्थे छे, ज्ञान मळ्या पछी ए बधां नकामां जाणवां; कारणके कर्म अने साधन मात्रनी ज्ञानमां परिसमाप्ति छे.

ज्ञान थकी ज्ञे भिन्नज नहीं एक ज्ञान ज्ञे जाणो सही। ज्ञे ते आत्मा ज्ञे ते ब्रह्म आत्मा ब्रह्मतणो इक धर्म ॥ २७ ॥

ज्ञानथी ज्ञेय कंइ भिन्न नथी; ज्ञान अने ज्ञेय एकज छे एम निश्चयपूर्वक जाणवुं. ज्ञेय एज आत्मा ने ज्ञेय तेज ब्रह्म पण छे. आत्मा अने ब्रह्मनुं एवुं तादात्म्यस्वरूप छे.

ब्रह्म तेह चैतन्य प्रमाण्य चैतन्य तेह चराचर जांण्य। द्वैत भेद इम जाणी टाल्य सोहं ब्रह्म निरंतर भाल्य*॥२८॥

अर्थात् ब्रह्म ते चैतन्य एटले आत्मा छे ने चैतन्य स्थावर जंगम सर्वमां व्यापेलुं छे, एवो विवेक करी, द्वैत बुद्धि टाळी देवी अने आत्मारूपी ब्रह्म रहेनु निरंतर ध्यान धरवुं.

ब्रह्मा (विष्णु) शिव इंद्रादिक देव (ते) सर्वे सोहं अवश्यमेव। यत्किंचीत चराचर रूप रहेनो आत्मा हूं चिद्रूप ॥ २९ ॥

ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, इन्द्र, आदि बधाए देव आत्मरूप छे,

---

* मूळ निहाळ.

एम नि.संशय जाणवुं. वळी जे कंई चर, अचर, जंगम स्थावर रूप छे ह्हेमनो चिदंश आत्मा हुं छुं, एवो अनुभव आणवो.

उत्पत्ति स्थिती लय आदिक कर्म ते सर्वे जांणो मम धर्म । सर्वस कर्ता सोहं जांण्य एह भाव हृदेमां आण्य ॥ ३० ॥

उत्पत्ति, स्थिति अने लय आदि जे कंई छे ते बधांम्हारांज अर्थात् आत्माना कर्या थायछे. बधायनो कर्ता सोहं हुं ब्रह्म छुं एवो निश्चय करवो, एवोज ज्ञानविचार हृदयमां उपजाववो.

विश्व समस्ते हूं अज एक अंतरंग ए राख्य विवेक । परमात्मा अव्यय पद जेह ते ते हूं नें हूं ते तेह ॥३१॥

अजन्म अने एक अद्वैत एवो हुं आत्मा आ अखिल विश्वरूप छुं एवो विवेक हृदयमां राखवो, एनुं विस्मरण पामवुं नहि.अव्यय स्वरूप परमात्मा ते पण हुं छे ने हुं ए परमात्मा छुं.

भूत भविष्य ने वर्तमान ते सर्वे मा (हा) रां अविधान । मुजथो अन्य पदारथ नही एह भाव हृदि राखो सही ॥ ३२ ॥

भूत भविष्य अने वर्तमान ए त्रिकाल पण म्हारा उपजावेला छे, म्हारा वगर बीजो कोई पदार्थज नथी. एकात्मा अद्वैत भावना हृदयमां संघरी राखवी, ह्हेने कदापि खसवा देवी नहि.

ब्रह्म एक अद्वित चैतन्य तेह विश्व नथी को भिन्न।
सर्वात्मा ब्रह्म सर्वावास स्वयं ज्योति स्वयं प्रकाश ॥३३॥

ब्रह्म ते एक अने अद्वैत चैतन्य छे. एनाथी आ अनेक विश्वोमांनुं एकपण विश्व भिन्न नथी. ब्रह्मज सर्वनो आत्मा छे अने ए सर्वावास अर्थात् सर्वत्र रहेलो छे. वळी ए स्वयंज्योति अने स्वयंप्रकाश छे, कोइ पण वाते एने कशानीए अपेक्षा नथी.

अखंडीत अव्यय अनंत अकल अरूप अनादि अचिंत।
गगनतणी पेरि निर्मल जेह सुखि अचल तां भणिजे
तेह ॥ ३४ ॥

ब्रह्म वळी अखंडित, अव्यय, अनंत, अकल, अरूप, अनादि अचिंत्य ने आकाशना जेवो निर्मळ अने पृथ्वीना जेवो अचल छे.अहीं पृथ्वीनी उपमा आपवी यथार्थ नथी, कारणके एने आपणे अचल होय एम जोया छतां वास्तविक ते सूर्यनी आसपास परिक्रमण करेछे ने कंपादिनो त्हेनामां संभव छे. ब्रह्म तो क्यारे पण चळतुं नथी.

शेप रहीत विशेप अशेप परात्पर ते ब्रह्म अलेप। सर्व.
ब्रह्म करि जाणो तात जतन करी आदर ए वात ॥३५॥

हूं नहि अन्य नही को राम जे छे तेहनुं लेजे नाम।
सदा सर्वदा एक छि ब्रह्म साचो राख्य हृदे ए धर्म॥३६॥

हे राम 'हुं' अने 'बीजुं कोइ' एवो व्यक्तिभेद मिथ्या छे, माटे

जे एक सत्य वस्तु छे रहेतुं स्मरण करवुं. सदासर्वदा एकज ब्रह्म छे ए सत्य विचार हृदयमां दृढ करी राखवो.

निरंतर ब्रह्म तेह निहाल हूं तूं भाव हृदेथी टाल । आनंद पुरण सर्वत्रे जेह अनुद्वेगि उपासे तेह ॥ ३७ ॥

हे राघव ! हमेशा एक ब्रह्मनेज निहाळ्या करवो अने हुं, तुं, एवी पृथग् भावना हृदयमांथी टाळी देवी. आनंदपूर्ण अने सर्वव्यापक एवा ब्रह्मनी जे कोइ उपासना करे ते अनुद्वेगी थायछे एटले र्हेने कोइ प्रकारनो उद्वेग, परिताप थतो नथी, केवके सदाए ते पण आनंदमांज वर्तेछे.

उद्वेग मुको आ आत्माराम सेव सदा ते परम सुधाम जे पद सेवे सिध योगिंद्र तेपद विषे रहो राजेंद्र ॥३८॥

हे राम ! संसारजनित दुःखनो उद्वेग करवो मूकी दइ परम आनंद, सुखरूप जे आत्मा, ब्रह्म र्हेनीज निरंतर सेवना—उपासना करवी. ब्रह्मपदने म्होटा म्होटा सिद्ध पुरुषो अने योगीन्द्रो पण सेव्या करेछे. माटे हे राजेंद्र ! त्हमारे पण ते पदमांज तन्मय थइ रहेवुं.

सर्व देह साधारण धर्म जे छे ग्राह्य ग्राहक कर्म । सामान्य धर्म ए थिर परहरे विशेषधर्म योगी मन धरे ॥३९॥

देह बंधायछे, जन्मेछे, वधेछे, संपूर्ण परिणामने पामेछे, पछी धीमे धीमे क्षय पामतो जायछे ने छेवटे नाश पामेछे; आ छ धर्म सर्व देह

पात्रना सामान्य धर्म छे, त्हेमनो अने ग्राह्य ग्राहक कर्मनो परिपुरुषो त्याग करेछे अने मात्र विशेष धर्म जे आत्मा त्हेनेज पळगी रहेछे, त्हेनुंज ध्यान धरेछे.

हृदये राखो ब्रह्मज्ञान सर्वभूतमां दृष्टि समान । सावधान थई जोगी जन एणीपेर आत्मा अर्चन ॥ ४० ॥

माटे हृदयमां ब्रह्मज्ञान राखीने रहेवुं अने भूतमात्रमां समदृष्टि राखवी. कोइने प्रिय अप्रिय गणवो नहि. योगी पुरुषो सावधानपणे एवी रीतेज आत्मार्चन करेछे.

राघव ए अनुभव हृद आंण्य जांणनहारो सघले जांण्य । अंतर राखो एअभ्यास कर जोडि कहि नरहरिदास ॥४१॥

हे राघव ! एवोज ज्ञानानुभव हृदयमां आणजो अने सर्वज्ञ जे ब्रह्म ते सर्वत्र छे त्हेने ओळखी लेवो. आवुं गुरुजी कहेछे माटे सदाए एनो अनुभव करता रहेवुं, आत्मार्चन कर्या करवुं.

इति श्रीवसिष्ट सारगीतायां आत्मार्चननाम अष्टम् प्रकरणं ॥ ८ ॥

प्रकरण ९.

जीवात्मा.

पूर्वछायो. ॥

अर्चन कह्युं आत्मातणूं (हवे) जीवात्मानूं चेंन । जीवभाव जेणे टले बोलिश ते साधंन ॥ १ ॥

ए रीते आत्मानुं अर्चन करवानुं बतावी हवे जिवात्मानां लक्षण बतावुंछुं. आत्मानो निश्चय थाय, असत्य पदार्थोमांथी प्रीति उठी जाय तोपण अविद्याने लीधे वच्चे जे जीवभाव उभो थयेलोछे ते एकाएक टळतो नथी, ने ते टळे नहि त्यांसुधी खरेखरो आत्मानुभव पण पमातो नथी; माटे जिवभावनोज लय थइ जाय एवां साधन हवे बतावशि.

जीवभाव छे* जां लगे तांलगि जांण अजांण। जीवभाव जे परहरे जांण्यू तेह प्रमाण्य ॥ २ ॥

हुं जीव छुं एवी भावना ज्यां-लगण उभीछे त्यांसुधी अज्ञानज भरी मूकेलुंछे एम जाणवुं. ज्ञान मेळव्युं ते पण अज्ञान जेवुंजछे, एटले तेहेनो अनुभव थतो नथी. माटे जे पुरुष जिवभावनोज त्याग करे तेहेणे खरुं ज्ञान मेळव्युं कहेवाय.

---

* मूळ.—होय

डापण भोलापण तजो* सावधान था धीर। जीवदशा जेणे टले अनुभव ग्रह रघुवीर ॥ ३ ॥

हे राम! व्यवहारनुं डहापण अने भोलापण एटले अज्ञान, मुर्खता ए तजी देवां अने सावधान ने धीर थवुं. एथी जीवदशा टळी जाय छे माटे एनोज अनुभव लयो.

राजिवलोचन सांभलो (अने) सांभल आत्माराम। जीवपणानें टालतां पांमी जे निजधाम× ॥ ४ ॥

श्री रामोवाच ॥

जीवपणूं ते कहो कियू जीवपणूं क्यम जाय। जीवपणूं कोणे ग्रहूं कारण कहो मुनिराय ॥ ५ ॥

श्रीरामचंद्रजी हवे गुरुने प्रश्न पूछे छे, हे मुनिराज आप जीवभाव टाळवानुं कहो छो पण एमां कंइ समजण पडती नथी. माटे जीवभाव ते शुं, ए जीवभावनो शी रीते त्याग थाय अने जीवभावनो धारणकर्ता कोण छे ए त्रणे वातो कृपाकरीने समजावो.

श्री वसिष्टोवाच ॥

प्रथमे जीवतणुं रुप कहूं कहि वसिष्ट जेहवुं हुं लहूं। सदा सर्वदा इक ब्रह्म जाण्य भावमात्र ते जीव प्रमाण्य ॥ ६ ॥

* मूळ —परहरो.
× निजधाम.—आत्मस्वरूप.

गुरु कहेछे, हेराम ! म्हें प्रथमज यथामति जीवनुं स्वरूप तो कही बताव्युं छे. सदा सर्वदा सत्यवस्तु तो एक परब्रह्म छे ने जीव एतो एक भावना मात्र छे, मिथ्या छे, एक जातनी कल्पनाज छे.

देहेंद्रिधूं अंतःकरण उत्पति स्थिति लय वर्णावर्ण।
मोह एटले पामे जेह जीवभाव तां जाणो तेह ॥ ७ ॥

देह, इंद्रिय, अंतःकरण, उत्पत्ति, स्थिति, लय, वर्ण, अवर्ण, एमनो जे मोह धरेछे त्हेनुं नाम जीव.

हूं हूं मारूं मारूं करे देहादिक आसक्ति धरे।(ए)
कृत्रिम मलि बंधाणो राम निश्चे ते जांणो जिवनाम ॥ ८ ॥

हुं म्होटो, म्हारा जेवो बीजो कोइ नथी एवुं देहाभिमान करे, वळी आ म्हारुं छे, ते म्हारुं छे, एम पदार्थोनी ममता फेलावे, वळी देहादिक एटले मिथ्या वस्तुओमां प्रीति राखे ने ए रीते कृत्रिम कहेतां मिथ्या वस्तुओना संगथी बंधाइ जाय त्हेनुं नाम जीव छे एम निश्चयपूर्वक जाणवुं

एणे भाव ते कहावें जीव (पण) वस्तुगत राघव छे शीव। जीवपणूं जेणे करि जाय तेह उपाय सुणो रघुराय ॥ ९ ॥

हे राम ! खरुं जोतां जे ब्रह्मरूप छे ते आत्मा एवी रीते,हुं, म्हा-

रुं एवी अहंममता अने मिथ्यादेहमां आसक्ति मांधीनेज जीवभावने पामेछे. ए जीवभाव ते शी रीते टाळी देवाय ने आत्मस्वरूपनो अनुभव पमाय ते वात हवे हुं कहुंछुं ते सामळो.

सर्वभूत इक ब्रह्म प्रकाश अंखड व्यापक ज्यम आकाश । एह भाव जो हृदि स्थिर होय (तो) जिवत्व लय सद्य पांमे सोय ॥ १० ॥

भूतमात्रमां एक ब्रह्मनोज प्रकाश छे, ने ब्रह्म आकाशना जेवो अखंड अने व्यापक छे, एवी भावना हृदयमा दृढ थाय तो जीवभाव तरतज टळी जायछे.

तेल विना दीपक शमि जाय महातेज वीषे लिन थाय। (एम) ब्रह्मभावि जीवत्वज टळे वस्तु वस्तु मांहे जइ भळे ॥ ११ ॥

तेल खूटे एटले दीवो एनी मेळे शमी जाय, होलवाइ जाय अने तेज ते महातेज एटले तत्त्वमां जइ मळी जाय. एम भावना–कल्पनानो त्याग थाय ने ब्रह्मभावना दृढ थाय तो जीवत्व टळी जाय ने वस्तु ते वस्तुमां जइने मळी जाय एटले आत्मा ते परमात्मारूप बने.

जेणि जिवत अंगी करुं राम तुज आगल रुड तेहनुं। नाम। दृष्टान्ते करि कहुंछूं जेह एकमनां सांभळजो तेह ॥ १२ ॥

आम जीवभाव एटले शुं, ह्हेने शीरीते टाळी देवाय ते कह्युं. हवे जीवत्व कोणे धारण कर्युंछे ते ह्हमने कहुंछुं, दृष्टान्त आपीने ते वात समजावुंछुं ते हे प्रभु ! एक मने श्रवण करो.

(ज्यम) कोयेक विप्र निच संगे करी(अने)नीच वृत्ति तेणे आचरी+ । (त्व) महत्त्वपणूं ज्यारे परहरूं (अने) शुद्रपणूं तिणि अंगी करूं ॥ १३ ॥

कोइ ब्राह्मण होय ने ह्हेने नीच पुरुषनो संग थाय तो ते नीचवृत्ति धारी बेसेछे,ए प्रमाणे पोतानी मूळनी महत्तानो त्याग थतां ह्हेनामां शूद्रत्व आवेछे ने ह्हेनो ते अंगीकार करेछे; पछी एवुं भान नथी रहेतुं के हुं जाते ब्राह्मण छुं, पण ते पोताने शूद्र मानीनेज वर्ते छे.

(एम) अविद्याने जइ इश्वर (ते) मल्यो असत्य प्रपंच महीं जइ भल्यो । तेणे (निज) ज्ञान गयूं वीसरी अहं ममत नाना बुध्य धरी ॥ १४ ॥

एवी रीते इश्वरने अविद्यानो योग थवाथी ते असत्य प्रपंचमां पडेछे. एथी पोतापणानुं ज्ञान ते विसरी जायछे अने अहं ममता धारी भेदबुद्धिथी वर्तेछे.

ब्रह्मपणूं ज्यारि अंगी करे त्यारे निच संगत परहरे । एम आत्मा समरे (निज) ज्ञान त्यारे नोहि प्रपंचनुं भान+ ॥ १५ ॥

× पाठन्तर–आदरी
\+ पाठान्तर ध्यान

परंतु नीचनी संगतमां रहेलो ब्राह्मण ज्यारे एम जाणे के हुं तो नीच नहि पण ब्राह्मण छुं, ने एम जाणी ते नीचनी संगति छोडी पाछो पोतानो वर्णाचार पाळे तेम जीवने पोताना स्वरूपनुं भान थाय त्यारे रहेतुं प्रपंचमां—संसारमां ध्यान रहेतुं नथी.

आत्मज्ञान (ने) विस्मरणे राम इश्वर ते पाम्यो जिव नाम । सांभळजो सहुको सिद्धान्त वळि जिवत्व थयानी वात * ॥ १६ ॥

एम पोताना स्वरूपनुं विस्मरण थवाथी इश्वरज जीवनाम पाम्योछे, शिव तेज जीव कहेवायो छे. हे श्रोताओ! सउ कोइ सांभळो जीवत्व शी रीते उभुं थयु ते सिद्धान्त हुं त्हमने कही संमळावुंछुं.

आत्मा देहनी स्मरणे करी (अने) आत्म + स्वरूप गयो वीसरी । अछतुं जिवित पछि ऊभुं करूं अहं ममत्व हैडामां धरूं ॥ १७ ॥

आत्मा देहवासनाथी पोतानुं स्वरूप भूली जायछे ने ए रीते अछतुं एटले वस्तुगतिए छेज नहि एवुं जीवत्व ते उभु करेछे, उपजावेछे ने हुं जीव छुं, एम धारी हुं ने म्हारुं एवी भावना ते दृढ बेसे छे, हृदयमा मर्या करेछे.

(ज्यम) निज छाया देखीने बाळ (ताहां) यक्ष-

* मूळ—वृतान्त.
+ सत्स्वरूप.

पणं माने तत्काल । इम मिथ्या भुत सत करि जोय आपणपानी विस्मृति होय ॥ १८ ॥

स्वरूपनुं विस्मरण केवीरीते थायछे ते समजावेछे: न्हानुं बाळक पोतानो पडछायो देखी ए भूत छे एम तरतज मानी बेसेछे ने तेथी भय पामेछे, तेम मिथ्या पदार्थोने सत्य मानी लेवाथी आपणपानुं एटले पोताना आत्मस्वरूपनुं विस्मरण थायछे.

(ज्यम) बालक मृतिकानो इभ ग्रही (तांहां) गजत्वनें सत्य माने सही । गजत्वनो अध्यासज धरे (अने) हस्ति जांणि चेष्टा ते करे ॥ १९ ॥

बाळक पोताना हाथमां माटीनो हाथी लइ त्हेने खरेखरो हाथीज मानी लेछे पण ते एम नथी जाणतो के ए एक रमकडुं छे, एम गजत्वनो अध्यास धरवाथी बाळक पछी ए हाथीज छे एम जाणी त्हेनी साथे नाना प्रकारनी चेष्टा करेछे.

मुढं आत्मा देहादिक ग्रहे (अने) दृष्टिपदारथ सत करि कहे । असत्यनें सत मांने जेह जीव जांणजो राघव तेह ॥ २० ॥

एम अज्ञानी जीव पदार्थोनुं ग्रहण करेछे अने पोतानी नजरे पडता बधाए पदार्थो सत्यछे एम ते कहे छे. आवी रीते असत्य पदार्थो ने सत्य मानेछे त्हेनुं नागन नाम.

जीवभाव जेणे करि जाय सांभलजो ते कहुं ऊपाय ।
चित्रसर्पने ज्ञानें रांम सर्पनाम नहि तेणे ठांम ॥२१॥

हवे एवी रीते उपजेलो जीवभाव शीरीते टळे रहेनो उपाय बतावुंछुं ते हे श्रोताओ ! श्रवण करो. चित्रमां सर्प कहाडेलो होय ते चित्रसर्प एटले जूठो छे, हाथथीज रंग पूरी कहाडेलोछे एम जाणवाथी रहेमां पछी सर्पबुद्धि रहेती नथी.

चित्रामण जाण्ये रघुराय सर्पजनित भय सघलो जाय ।
(एम) ब्रह्म जांण्ये जीवत ते टले कल्पित विश्वज जाये विले ॥ २२ ॥

अने ! हे राम ए दश्यसर्प तो एक चित्रामण छे एम जाण्याथी सर्प मानी लीधाथी जे भय उपज्यो होयछे ते बधो जतो रहेछे. एवी रीते सत्य जे ब्रह्म रहेने जाण्याथी जीवत्वनो जीवभावनो लय थइ जायछे, ने मिथ्या कल्पेलुं विश्वमात्र नाश पामेछे, दृष्टिएथी खसी जायछे.

सुख दुख शोक हरष नां धरे सदा निरंतर समबुध्य धरे । ब्रह्म जांण्यानूं एह प्रमांण जीवपणूं ज्यारे टल्युं जांण्य ॥ २३ ॥

पुरुषने कोइ प्रकारहुं सुखदुःख लागे नहि, हर्षशोकनो अनुभव थाय नाहि, पण ते हमेशां सर्वमां समबुद्धि राखी वर्ते, मनुष्य, पशु, पंखी, कीटादि सघायमां एकज आत्मा रमेछे माटे एमां कोइ

जेम नीच नथी एवी बुद्धि राखी व्यवहार करे त्यारे तेहेने ब्रह्मज्ञान थयुं कहेवाय, अने तेहेनुं जीवत्व पण टळी गयुं एम जाणवुं.

(ज्यम) मालानें अज्ञानें राम भ्रंम थको (ज्यम) कहि सर्पनुं नाम । माला जांण्ये कंप न थाय सर्पभ्रंम ते दूर पळाय ॥ २४ ॥

कोई स्थाने कोई माळा मरथी होय, पण ते माळा छे एवो निश्चय न थयाथी पुरुष भ्रान्तिवश थई तेहेने सर्प कहे छे अने सर्पना भयथी कंपी उठे छे, पण ए खरेखरी माळाज छे एवुं थोडी वारे जणाई जाय त्यारे ए मिथ्या भयकंप जतो रहेछे अने सर्पनी भ्रान्ति शमी जायछे.

(एम) आत्मा अज्ञाने संसार (अने) आत्मज्ञानि होये निस्तार । आत्माज्ञाने विश्वहि* ब्रह्म को काले भासे नहि भ्रम ॥ २५ ॥

आत्मस्वरूपना अज्ञानथी संसारनो भास थाय छे अने आत्मज्ञान थायछे ते क्षणे तेहेनो लय थइ जाय छे; कारणके आत्मस्वरूप ओळखायाथी बधुं विश्व ब्रह्मरूपज मासेछे ने पछी कोइ दिवस भ्रान्ति उपजती नथी.

जो मन ज्ञान विवेकनि मले (तो) संसार सहेजे सघलो टले । भिन्न न भासे तेहनि कोय (जे) केवल ब्रह्म निरंतर जोय ॥ २६ ॥

---

* मुळः–सर्व.

मन ए संसारनुं कारण छे ए आपणे पाछळ घणी वखत कही गया. ए असत्य पदार्थोनी कल्पना करी करीने बधुं विश्व उभुं करी देछे, पण सत्य असत्य वस्तुनो ज्ञानविवेक थाय, पदार्थो मिथ्या छे एवो निश्चय थाय अर्थात् मनने ज्ञानविवेकनो योग थाय तो संसारनी कल्पना एक क्षण मात्रमां नाश पामी जाय; पछी रहेने कोइपण वस्तु पोतायी, ब्रह्मथी जुदी छे एवो भास थाय नहि, बधुंए एकरूप समजाय एटले एक केवळ ब्रह्मनेज ते हमेशां सर्वत्र जोया करे.

आदि अंत मध्य सुव्रण एक कुंडल कंकण घाट अनेक । (ते) उपजि समि वर्ते रघुराय कनकपणूं पण क्यमे न जाय ॥ २७ ॥

आदि,मध्य अने अंत ए त्रणे स्थितिओमां सुवर्ण एकनुं एकज: सुवर्णना कुंडळ, कंकण इत्यादि अनेक घाट थायछे. घाट घडाय, रहे ने पाछा गाळी नाखवामां आवे एम एमनी स्थितिओ फरे, पण जे सुवर्णना ते बनेला होयछे रहेनुं सुवर्णत्व कोइ रीते घाटथी भिन्न थतुं नथी, अर्थात् सुवर्ण ने घाट एवी जे जुदी जुदी वस्तुओनी कल्पना करवी ते मिथ्या छे.

एम विश्व (ते) आत्माथकुं होय आत्माथी अलगूं नथि कोय । आदि अंत मध्य आत्मा जाण्य नाममात्र ते विश्व प्रमाण्य ॥ २८ ॥

एम एकज आत्माथी विश्व प्रकट थायछे माटे ते आत्माथी कदापि अलगुं एटले जुदुं कहेवाय नहि. विश्वनी उत्पत्ति, स्थिति अने

लय ए नणे अवस्थाओमां विश्व ते आत्मारूपज रहेछे ने रहेनुं विश्व एवुं जे नाम पडचुंछे ते मात्र कहेवानुंज एटले मिथ्या छे.

(ज्यम) एक शरीर अवेव अनंत देहथि भिन्न ने कहे को संत । भाण्ड बहू मृतिका इक होय मृतिकामां लय पामे सोय ॥ २९ ॥

एकज शरीरना अवयव जूदा जूदा होयछे पण ते कंइ शरीरथी भिन्न छे एवुं ज्ञानी जनो कदी कहेता नथी. एकज माटीना जूदी जूदी जातना घणा वासण बने ने रहेमनो नाश थतां पाछां ते माटीज बनी जाय. एकमांथी अनेकनी उत्पत्ति थायछे ने ते अनेक पाछां एकमां जइ समायछे, माटे एकने मूकी अनेकनी कल्पना सत्य मानवी ते अज्ञान छे.

(एम) अद्वैतथकी द्वैतज विस्तर्यूं (अने) स्थावर जंगम नामज धरूं । दृष्टादृष्ट थोडा कहिं घणा (एक) रूप नाम सघलां ब्रह्मतणां ॥ ३० ॥

उपरना दृष्टान्तमां समजाव्युं तेम एक अद्वैत ब्रह्ममांथी द्वैतमात्र उपज्योछे, फेलायोछे, ने पदार्थोनां स्थावर जंगम एवा नाम पड्यांछे. रूपमात्र, कोइ स्थाने थोडाघणां जोवामां आवे, कोइ स्थाने न आवे, पण ते बधां एक ब्रह्ममांथीज उपजेलाछे.

आदर्श विशे मुख जोतां राम आनन भासे ठामोठाम । अनेकमां मुख भासे एक जन जाणो मा* वदन अनेक ॥ ३१ ॥

---

* मूळ –रखे

हे राम ! सामासामी बधे दर्पण ज्यां होय ने स्हेमां स्हों जोइए तो बधेय जूदां जूदां मुख देखायछे. ए बधां मुख पण एकनां एकज होयछे, माटे हे श्रोताओ ! कदी एवी कल्पना न करवी के ते जूदां जूदां छे.

(एम) एक आतमा सर्वावास समस्त बुध्यनो करे प्रकाश। जां जोये तां आत्माराम आत्मा व्यण ठालो नहि ठाम ॥ ३२ ॥

ए रीते एकज आत्मा सर्वत्र वसेलोछे ने विविध रूपे अनेकतानो भास करावेछे, परंतु ज्ञानदृष्टिए जोइए तो ज्यां दृष्टि पडे त्यां बधेय एकनो एकज आत्मा रमेछे, विलसेछे, आत्माविना एक पण ठाम खाली नथी.

आत्मा निर्गुण जांणो सही (अने) गूणे ते बंधाये नहीं। ते दृष्टान्त कहूं तुज तात साभल आत्माकेरी वात ॥३३॥

आत्मा निर्गुण छे एम जाणवुं, निर्गुण छे माटे रज, सत्व अने तम ए त्रिगुणथी ते कदापि बंधातो नथी. हे भाई ! एनुं एक स्हमने दृष्टान्त आपुंछुं ते आत्मज्ञाननी वात सांभळो.

(जेम) स्वतः शुद्ध निर्मल आकाश सर्वे निरंतर सर्वावास। (धुल) धूम मेघ आवे राहि जाय शुद्ध व्योम मलीन न थाय ॥ ३४ ॥

आकाश छे ते स्वतः शुद्ध ने निर्मळ छे. ए निर्बाध सर्वत्र व्यापेलुंछे. धूळ, धूमादी वादळ चहडी आवे ने खसी जाय, वेराई जाय पण निर्मल आकाश कदापि मलीन थतुं नथी. धूमाडीने धूळना गोटेगोट उंचे चहडता जोई के वादळ चहडी आवतां जोई आकाशने मेलु थयलुं माने तो ते रहेतुं अज्ञान छे; कारण के आवरण मिथ्या छे.

(एम) विश्वसु आत्मा व्यापक राम निर्मल निश्चल पूर्णधाम । सरजे पाले ते (विश्व) संहरे प्रकृतिना गुण स्पर्श न करे ॥ ३५ ॥

एम बधा विश्वने आत्मा व्यापीने रह्योछे, ते निर्मल, निश्चल ने पूर्णधाम छे. ए विश्वने सर्जेछे, पाळेछे ने तेहेनो संहार पण करेछे तेम छता ए निर्गुण रूपने प्रकृतिना गुण स्पर्श करी शकता नथी.

अग्नि संग यथा लो(ह) राम । तद्रुप होय टले लो (ह) नाम । यावत अग्नि संगत करे तावत अग्निरुप ते धरे ॥ ३६ ॥

लोखंडनो गोळो अग्निमांथणी वखत राखीए तो ते अग्निरूप थइ जायछे. ने तेहेनुं लोखंड नाम ते वखत पूरतुं रहेतुं नथी; कारणके तेहेनामां अग्निना धर्म पूर्णपणे आवेला होयछे, एने ज्यांसुधी अग्निनो संग रहे त्यांसुधी तेहेनु अग्निरूप पण कायम रहे.

(एम) इन्द्रिय आदिक टोलूं (सव) जेह-आत्मासंग आत्मारूप* तेह । चैतन्य संगे जड चिद होय अग्नि लोह दृष्टान्ते जोय ॥ ३७ ॥

ए रीते इन्द्रियादि सूक्ष्मदेहनो जे समूह छे ते आत्मानो संग करे तो आत्मारूपज बनी जायछे. अग्नि अने लोहनुं दृष्टान्त आपी समजाव्युं तेम जड ने चैतन्यनो संग थाय तो ते चैतन्य थायछे.

अदृष्ट आतमा प्रगट जणाय ते दृष्टांत सुणो रघुराय । यद्यपि राहु अदृष्ट छि तात् (पण) को काले भासे साक्षात ॥ ३८ ॥

आत्मा, आत्मा कहोछो पण ते क्यांय प्रकट जणातो नथी एम प्रश्न थवो स्वाभाविक छे, माटे ए प्रकट क्यारे जणाय तेहेनुं एक दृष्टान्त आपुंछुं. राहु जोके साधारणरीते कोइना जोवामां आवतो नथी, अदृष्ट छे तेम छतां कोइक प्रसंगे साक्षात देखायछे.

(ज्यारे) ग्रहण अर्क इंदू तणुं होय प्रगट भासि त्यारे ते सोय । (एम) दृष्टादृष्ट छिं आत्माराम (पण) प्रकट अनूभवि भासे ठाम ॥ ३९ ॥

ए प्रसंग कयो ते कहुं: चंद्र अने सूर्यनुं ग्रहण थायछे त्यारे राहु प्रत्यक्ष देखायछे ए अनुभवी लेवुं. एम आत्मा अदृष्ट छे छतां अनुभवथी,ठेकाणे आवेछे एटले तेहेनुं साक्षात दर्शन थायछे.

* मूळ-होय.

अनुभव वीण करे बहु कर्म ते ना पामे नर परब्रह्म। आत्मज्ञानि, आत्मा जाणिये ए अनुभव अंतर आणिये ॥ ४० ॥

माटे आत्मानुभव कर्या विना जे पुरुष एकलां अनेक कर्मज कर्यां करेछे ते कोई दिवस ब्रह्मने पामतो नथी एटले मुक्त थतो नथी. आत्माने, ब्रह्मने ओळखवानु बीजुं एक पण साधन नथी; आत्माथीज आत्मा ओळखायछे ए सिद्धान्त ग्रहण करवो. गीतामां पण कह्युंछे के, ॥ आत्मानं आत्मना पश्येत् ॥ आत्माने आत्माथी ज ओळखवो, जोवो.

आत्मा जडनी संगति (जो) करे (तो) आत्मपणूं सम्यग् वीसरे । अनात्मपणूं आवे तिणि वार चैतन्य गये रहे जड आकार ॥ ४१ ॥

जड चैतन्यना संगथी चैतन्य बनेछे तेम आत्मा जडनी संगत करे तो ते जड बनी जायछे ने पोतानुं शुद्ध स्वरूप पूर्णपणे विसरी जायछे. ए रीते अनात्मत्व एटले जडता आव्याथी चैतन्य आत्मा ते जडरूप थइ रहेछे.

आत्मसंग जिव आत्मा होय जडसंगे जड कहावे सोय। जल अग्नि दृष्टान्ते भूप अध्यासे होये तद्रूप ॥ ४२ ॥

एम जीव पण जो आत्मानो संग करे तो ते आत्मारूप थायछे ने देह इन्द्रियादि जड वस्तुओनो संग करे तो जड बनेछे. ए उपर

जल अग्निनुं दृष्टान्त छे. एक वस्तु बीजी वस्तुना अध्यासथीज तद्रूप थइ जायछे.

अग्निसंग जल अग्नि (वत) होय जलसंगे (अग्नि) अग्निपणुं खोय । (एम) चैतन्यसंग जड चेतन थाय जडसंगे चेतन जड थाय*॥ ४३ ॥

जळने अग्निनो संग थाय तो ते अग्नि बनेछे एटले ते अग्निमां शमी जायछे, ने अग्निने जो जळनो संग थाय तो रहेनुं अग्निपणुं जतुं रहेछे एटले ते होलवाइ जायछे. एज प्रमाणे चैतन्यना संगथी जड चैतन्य थायछे ने जडना संगथी चैतन्य ते जड बनेछे.

चिद्रुपनो अंशी जिव जेह जडसंगे जड कहावे तेह । चिद्रुपने ध्याने चिद थाय जडस्वभाव (ते) वधोए× जाय ॥४४॥

खरुं जोतां श्रीकृष्ण परमात्मा कहेछे तेम ॥ ममैवांशो जीव जीव लोके भूत: सनातन:॥ चिद्रूपनोज अंश जीव छे एटले ते शुद्ध चैतन्य स्वरूप छे पण देहादि जडना संगथी ते पण जड कहेवायछे. एम जडताने पामेलो जीव चिद्रूपनुं ध्यान करे तो ते चिद्रूप थाय ने रहेनामां जे जड स्वभाव एटले अज्ञान रह्युंछे ते बधानो नाश थाय.

ते दृष्टांत सुणो रघुवीर जेणे (करी) जाये लिंग श-

---

* मूळ-कहेवाय.

× मूळ-सघळो.

रीर । (ज्यम) म्हा जलमां अग्नि मुकि राम टले तत्क्षण अग्नि नाम ॥४५॥

हे राम ! लिंगशरीर एटले मन इन्द्रियादि तत्त्वोनो थनेलो सूक्ष्म देह त्हेनो नाश थाय एनुं एक दृष्टान्त कहुंछुं. घणा जळमां अग्निने नाख्याथी तरतज त्हेनुं अग्नित्व नाश पामेछे तेम सूक्ष्म देहनो नाश थवाने त्हेने आत्मानो संग अवश्य थवो जोइए छे.

ब्रह्मप्रकाश जिणे करि थाय (हवे) कीजे तेहतणो ऊपाय । ऊपाये परब्रह्म पामिये ऊपाये भवदुख वामिये ॥ ४६ ॥

हे राम ! ए रीते एटले सूक्ष्मदेहने आत्मानो योग करी त्हेनो नाश करवो ने ब्रह्मनो साक्षात्कार थाय एवुं साधन करवुं. ए उपायथी परब्रह्मनी प्राप्ति थशे अने संसारना दुःखनो छेडो आवी जशे.

इक्षु विषे साकर* छे ज्यंम (पण) यत्न विना पामीजे क्यंम । तैल तीलमध्ये छे सही (पण) यत्न विना पामीजे नहीं ॥ ४७ ॥

पण ए वातमां यत्ननी घहु म्होटी अपेक्षा छे. शेलडीमां रस तो रहेलोछेज पण महेनत करी त्हेने छोली, ककडा करी, चाव्याविना के कोलुमां पील्या विना त्हेना रसनी प्राप्ति थती नथी; तलमां तेल अवश्य छे पण यत्न कर्या विना ते बहार निकळतुं नथी, त्हेने घाणीमां घाली प्रथम पीलवा जोइए.

* मूळ-शर्करा.

काष्ट विषे वन्ही छे तात (ते) यत्ने पांमीजे* साक्षात।
लोह दशदविषि छे रघुवीर (ते) यत्ने करि काढीजे
धीर ॥ ४८ ॥

हे माइ ! लाकडामा अग्नि रहेलोछे पण यत्न करीए एटले घर्षण उत्पन्न करीए तो खरेखर र्हेनो आपणने लाम थाय पत्थरमां वळी लोह रहेलुछे र्हेने कहाडवाने माटे पण यत्न करवानी जरूर छे.

(ज्यम) आज्य धेनु विषे छे सार (ते) यत्ने पांमीजे निरधार (एम) देहविषे आत्मा छे देव (ते) यत्नि पामिजे अवश्यमेव ॥ ४९ ॥

गायमा घी रह्युंछे पण यत्न करीए तो ते अवश्य मळे, एज रीते देहमा आत्मा ब्रह्म छे ते निःसंदेह यत्ने करीने, ज्ञानानुभवे पणायछे.

आत्मा पामवानुं साधन जेह साभलजो जन कहुंछुं तेह।
श्रवण मनन करतां निदध्यास साक्षात होय ते ब्रह्मप्रकाश ॥ ५० ॥

हे श्रोताओ ! र्हवे आत्मज्ञाननुं साधन कहुछुं ते सांमळो. सत् शास्त्रोनुं, गुरु उपदेश करे र्हेनुं श्रवण, मनन अने निदिध्यास करवाथी ब्रह्म एटले आत्मानो प्रकाश प्रगट थायछे, एटले आत्माना साक्षात् दर्शन थायछे.

* पाठान्तर-जाणीजे

ज्यम स्फाटिक निर्मल निरद्वंद गगन तेहमा दीसे (राम) चंद्र। (एम) आत्माए आत्मा देखिये निर्मल चित्त प्रगट पेखिये ॥ ५१ ॥

हे राम ! जरा पण मल वगरनो एटले निर्मळ काच होय तो त्हेमां आकाशनुं प्रतिबिंब बरावर पडेछे, तेम बुद्धि निर्मळ होय तो आत्मा प्रगट देखायछे, आत्माथीज आत्माना दर्शन थायछे.

यतकिंचीत पदारथ राम आत्माविण ठालो नहि ठाम। चीदरूप परमेश्वर जेह प्रगट प्रकाश बधे आ तेह ॥५२॥

हे राम ! बधाए पदार्थोमां आत्मा भरेलोछे. आत्मा विना एक पण ठाम खाली नथी. जे चिद्रूप एटले चैतन्य-आत्मारूप परमेश्वर छे त्हेनोज आ सर्वत्र प्रगट प्रकाश छे.

रत्नकुंभवत आत्मा जांण्य बाह्य मध्य प्रकाश प्रमाण्य। (जिम) रत्न कुंभनी मध्ये जोत्य बाह्य दीपवत होय उ-*द्योत ॥ ५३ ॥

आत्मा रत्नकुंभ जेवो छे एटले एनी अंदर ने बहार सर्वत्र प्रकाशज छे. रत्नकुंभनी अंदर दीवो मूक्यो होय तोपण बहार पण दीवो होय एवो प्रकाश पडेछे.

(एम) आत्मस्वरुप बहिरंतर राम मन इंद्रीय प्रका-

---

* मूळ-सपले.

शक धाम । सर्व प्रकाशक आतमा एक रघुपति राखो एह विवेक ॥ ५४ ॥

हे राम ! आत्मस्वरूप बहिरंतर—सर्वत्र प्रकाशमान छे ने ते मन इन्द्रियने प्रकाश आपवावाळुं छे, एने आशरीनेज तेओ प्रवर्ते छे. हे रघुपति ! एक आत्मा सर्वनो प्रकाशक छे ए ज्ञानविचारने दृढ करी राखवो.

अर्कबिंबवत दर्पण जेह तेजवंत तां भणिये तेह । निर्मलमां आनन पेखीए मलिनमांहि मुख नव्य देखिये ॥ ५५ ॥

दर्पणमां सूर्यनुं प्रतिबिंब पडेछे त्यारे ते तेजमय देखायछे. वळी दर्पण निर्मळ होय तो त्हेमा मुख बराबर देखायछे पण मलीनमा ते यथार्थ जणातुं नथी.

(एम) ज्ञानसहित बुध्य छे* जेहनी निर्मल चित्तवृत्ती (कहीये) तेहनी। स्वछथी होये आत्मप्रकाश (जे) सर्व निरंतर सर्वावास ॥ ५६ ॥

तेवी रीते जे पुरुषनी बुद्धि ज्ञानविचारवाळी छे त्हेनी चित्तवृत्ति निर्मळ होयछे ने एम स्वस्थ ने धीर थयला पुरुषने निरंतर ने सर्वत्र आत्मप्रकाशनो अनुभव थायछे.

---

* मूळः—होय.

स्वप्रकाश स्वयमात्मा जेह सदासर्वदा सघले तेह । ते विन ठालो नहि को ठाम ए अज्ञाने विश्वनुं नाम ॥ ५७ ॥

आत्मा स्वयंभू ने स्वयंप्रकाश छे, एनी उत्पत्ति बीजा कशामाथी नथी, बीजा कोईनो प्रकाश एने जोइतो नथी; वळी ते नित्य ने सर्वत्र व्यापी छे. एना विना एक पण ठाम खाली नथी. आवा आत्माने नहि ओळखवाथीज विश्वनो भास थायछे.

विश्वलक्षण राघव जाणज्यो रज्जु भुजंगवत प्रमाणजो । रज्जुतणे अज्ञाने तात सर्प सत्य तेहनि साक्षात ॥५८॥

हे श्रोताओ ! विश्वनुं स्वरूप जाणी ल्यो. रज्जुना अज्ञानथी जेम भुजंग कहेता सर्पबुद्धि थायछे, ए साक्षात रज्जु नहि पण सर्पज छे एम मनायछे, तेम आत्माना अज्ञानथी विश्वबुद्धि थायछे. प्रकाशनो अनुभव थतां रज्जु ओळखायछे तेज क्षणे मिथ्या सर्पबुद्धि जता रहेछे तेम ज्ञानविचारथी आत्मा ओळखायछे एटले विश्वस्वरूप खोटुं ठरेछे.

नाममात्र ते विश्वज जांण्य आत्मा सघले एक प्रमाण्य। आत्मस्वरूप यथारथ जेह साते श्लोके कहुं तुज तेह ॥ ५९ ॥

विश्व तो कहेवा मात्र एटले नामनुं-मिथ्या छे, ने खरूं जोतां तो एक आत्माज सर्वत्र प्रकाशी रह्योछे. ए आत्मानुं स्वरूप केवु छे ते नीचेना सात श्लोकमा कही बतावुंछुं.

आदी अंत राहित जे राम सत्य स्वरुप तां तेहनुं नाम । चीदरूप ते चैतन सोय जेणे (करी) सर्व प्रवृती * होय ॥ ६० ॥

हे राम ! आत्मा आदि अंत विनानो छे. एटले ते कदी उत्पन्न थतो नथी ने नाश पण पामतो नथी एम अजन्म ने अमर छे, माटे सत्य स्वरूप ते एक आत्माज छे. आत्मा चिद्रूप चैतन्य छे. एक ब्रह्मनुं स्वरूप छे ने एने आश्रये आ बधी मन इन्द्रिओनी प्रवृत्तिओ चाले छे.

निर्विकल्प तां कहिये (सोय) तेह भेदाभेद निवर्जित जेह । आकाशवत्त व्यापक निःसंग जेहनि नहि कशुं रुप गुण रंग ॥ ६१ ॥

आत्माने भेदाभेद नथी एटले ए निर्विकल्प, संकल्पधर्म विनानो छे माटे मन इन्द्रिओनां कर्मथी ए बंधातो नथी. वळी ते आकाशना जेवो सर्व व्यापक ने असंग कहेतां निर्लेप छे. वळी आत्माने रूप गुण के रंग होतां नथी.

समस्त जीवतणी जे आद्य ज्यांहां नहि परपंच उपाध्य । परमात्मा कहिये जेहने त्रिविध शक्ति वश छे तेहने ॥ ६२ ॥

बधाए जीवोनुं ते आदि कारण छे ने एने कोइ प्रकारनो प्रपं-

* मूक-वृत्ति.

च के उपाधि छे नहि. आत्मा एज वळी परमात्मा पण छे ने त्रि-विध शक्ति एने वश छे अर्थात् विश्वनी उत्पत्ति, स्थिति ने लय करवावाळो आत्मा छे.

आत्मा अती विशुद्ध छिं राम निर्मल निश्चल पूरणधाम।
चैतन्यस्वरूप स्वयं परकाश अंतर्यामी सर्वावास ॥६३॥

हे राम ! आत्मा अति विशुद्ध छे एटले ते निर्मळ, निश्चळ ने पूर्णधाम कहेतां संपूर्ण स्वरूप छे. आत्मा वळी चैतन्यस्वरूप स्वयंप्रकाश, अंतर्यामी ने सर्वत्र रहेलोछे.

शाश्वत नित्य निरंतर एक हृदि राखो ए ज्ञानविवेक।
विभु व्यापक तेहनि तूं जाण्य विचार ए अंतरगति आण्य ॥ ६४ ॥

ए शाश्वत कहेतां सनातन, नित्य अने सदाये एकज छे, अद्वैत छे एवो ज्ञानविवेक हे राम! हृदयमा राखी रहेवुं, अने आत्मा ते सर्व शक्तिमान ने सर्व व्यापक छे ए निश्चयने दृढ करी मनमां ठसाववो.

निर्विकार कहिये तेहने मनबुधि चित न अहं जेहने।
स्वयंज्योति ने स्वयंप्रकाश सघले तेहतणो आभास ॥ ६५ ॥

आत्मा निर्विकार छे एटले एने मन बुद्धि आदि छे नहि. ए स्वयंज्योति ने स्वयंप्रकाश छे ने सर्वत्र एनोज आभास छे एटले-आ बधुं विश्व ते एक आत्मानोज आभास छे.

अर्कनि पेरे कहिये जेह सर्व प्रकाशक अलगो तेह । सघले सत्ता छे जे तणी सी सी मोटिम कहुं मुख भणी ॥ ६६ ॥

आत्मा ते सूर्यना जेवो छे. ए बधाने प्रकाश आपे छे पण ते सर्वथी न्यारो रहेछे, एने कांइ वस्तुनो स्पर्श नथी. आत्मानी सत्ता सर्वत्र छे. हे श्रोताओ ! हुं एनी म्होटम ते शी कही बतावु ? अर्थात् एनो महिमा अपार छे.

अनुभवरुप× आत्मा रघुराय अनुभवविन ते ग्रहो न जाय । कालो साकर केमे कहे अनुभव तुष्टीए ग्राहि रहे ॥ ६७ ॥

हे राम ! आत्मा अनुभवरूप छे, ज्ञानस्वरूप छे माटे अनुभव विना एनुं ग्रहण थतुं नथी, ते ओळखातो नथी. एक बाळकने एम पूछीए के माइ, साकर केवी छे तो ए एनुं शुं वर्णन करे ! ए एनो स्वाद अनुभवीनेज संतोष पामशे पण कंइ रहेनुं वर्णन आपी शकशे नहि.

अनुभवि एहवुं बोले तात सर्वत्र व्यापक ब्रह्म साक्षात । स्वभुत जेहनि आश्री रह्यूं (ते) निराधार पद निगमे कह्यूं ॥ ६८ ॥

हे माइ ! जे ज्ञाता पुरूष छे, अनुभवी छे ते एवु कहेछे के

× मूळ–मात्र.

ब्रह्म—आत्मा सर्वत्र प्रगटपणे व्यापीने रह्योछे, ने भूत मात्रनो धारण कर्त्ता ए छे. एनोज सर्वेने आश्रय छे पण एने कोइनो आश्रय नथी, माटे वेदमां त्हेने निराधार पद कहेछे.

देवतणो तां देवज जेह परमप्रकाश भणिजे तेह। चैतन्यतणूं चेतन जे राम आतमस्वरुप तां तेहनुं नाम ॥ ६८ ॥

वळी देवनो पण ते देव छे अर्थात् सर्व. देवोनी कल्पना एक आत्मामां आवी जायछे ने ते परमप्रकाश रूप छे. हे राम! प्राणी मात्रमां जे चैतन्य छे त्हेनुं पण चैतन्य आत्मा छे एटले त्हेनुं ए आदि कारण छे, आत्म स्वरूप एवुं छे.

अनल सदा ज्यम उष्ण स्वरूप आत्मा त्यम चैतन्य स्वरूप। वालि वस्तूनी सांभल वात अनुभवि ते भासे साक्षात् ॥ ७० ॥

अग्निमां जेम हमेशां उष्णतानो धर्म रहेलोछे, सदाए ते उष्ण स्वरूपज छे तेम आत्मा चैतन्यस्वरूप छे. वळी ए एक केवल वस्तु एवी छे के एक अनुभवथीज त्हेनो साक्षात्कार थायछे, नहि तो त्हेनुं अकल स्वरूप कशाथीए कळयामां आवतुं नथी.

अंतःकरण चतुष्टय जेह तेयथको छे भिन्नज तेह। चीदरूप परमात्मा जोय सर्वतणो सुप्रकाशक सोय ॥ ७१ ॥

मन, बुद्धि, चित्त अने अहंकार ए अंत करण चतुष्टय एनाथी पण आत्मा भिन्न छे, अर्थात् ए चिद्रूप परमात्मा छे ने अत.करण चतुष्टय तेमज सर्वनो प्रकाशक तेज छे.

बाह्याभ्यंतर व्यापक ब्रह्म समजी लेजो एहज मर्म । कलातीत ते अकल अरूप निर्मल निश्चल ब्रह्मस्वरूप ॥ ७२ ॥

ए आत्मा ब्रह्म बहार अने भींतर सर्वत्र व्यापेलोछे, एक रस सर्वत्र भरेलोछे. हे रामा एनुं मर्म रहस्य जाणीयो आत्मा कलातीत एटले अकल ने अरूप छे, निर्मळ, निश्चल अने ब्रह्मस्वरूप छे.

अचलाश्रय परमात्मातणो वलि मोटिम तेहनि कहुं सुणो । प्रगट आत्मा चैतन्य एह राघव एमां नहि संदेह ॥ ७३ ॥

एवा ए आत्मा परमात्मानो विश्वने, प्राणीमात्रने अचळ–सतत आश्रय छे, एनो महिमा कंइक कही बतावुंछु ते हे श्रोताओ ! श्रवण करो. हे राम ! ए आत्मा चैतन्य सर्वत्र प्रगट छे एमा जराए संशय नथी.

अति निर्मल ते आत्मा जाण्य ज्ञानधनरूप एह प्रमाण्य । बालक यौवन वृद्ध न होय राघव आत्मा जाणो सोय ॥ ७४ ॥

वळी आत्मा अति निर्मळ, ने ज्ञानस्वरूप छे. हे राम ! देह चा-

ल्य, युवा अने वृद्धा एवुं जे अवस्थान्तर भोगवेछे तेवुं जे भोगवतो नथी तेज आत्मा छे एम जाणवुं. आत्मा कदापि बालक, जुवान के वृद्ध थतो नथी, पण ए अवस्थाओ देहनी छे.

अच्युत ते तम जाणोसही (जे) सर्व नाशथी नाशे नहीं । सर्व उपाध्य विवर्जित जेह परमात्मा जन जाणो तेह ॥ ७५ ॥

आत्मा अच्युत–अक्षर छे; अनेक ब्रह्मांडोनो, सर्वनो नाश थ-इ जाय तोपण एनो कदापि नाश थतो नथी. उपा विमात्रथी ए रहित छे अने हे श्रोताओ! आत्मा एज परमात्मा छे एवो निश्चय करो.

देशकाल रहित गुणद्वंद जेहनि नहि क्षणु कोशुं सं-बंध । असंग पुरुष एवो ए रांम प्रगटज पेखो पूरण-धाम ॥ ७६ ॥

आत्मा देश काल रहित एटले अविच्छिन्न ने गुणद्वंद रहित एटले निर्गुण छे. अमुक काले के अमुक देशमां ते होय एम नथी, सर्वत्र ने सदाए ते छेज. निर्गुण छे एटले त्रिगुणात्मक प्रकृतिनुं एने नामे बंधन नथी. हे राम ! आत्मा एवो असंग पुरुष छे. एवा पूर्ण स्वरूपने सर्वत्र प्रगट जुओ–अनुभवो.

उयम ब्रह्मांडे वरते वाय क्यांहे कदा* न ते बंधाय । जेवो छे तेवो परमाण्य तेहनि नहि वृद्धि क्षय हाण ॥ ७७ ॥

---

*

वायु आखा ब्रह्मांडमा वायछे पण ते कोइ जग्याए ने कोइ वखने बंधातो के रोकातो नथी. एने जेवा ने तेवा स्वरूपे ओळखी लेवो. एनामा कदापि कंइ वृद्धि थती नथी, तेम एनो कदापि क्षय पण थतो नथी.

(एम) सर्व भूतमां वर्ते सोय (पण) आत्माने बंधन ना होय । (जे) सर्वकर्त्तु भगवान समर्थबांधे क्यम तेहने अनर्थ ॥ ७८ ॥

आत्मानुं पण एमज जाणवुं ए पदार्थ मात्रमा व्यापेलोछे पण तेहेने कोइ जातनुं बंधन ,नथी, ए समर्थ–सर्वकर्तु परमात्मा छे, एने अनर्थ कहेता जगतनो मिथ्या प्रपच शी रीते बाधी शके? प्रपंचमात्र आत्माने वश छे.

आत्मा सदा सर्वदा मुक्त वेदवाक्य कहुं ए युक्त । सोहं हंस तुं सघले जाण्य असंग पुरुष ता एह प्रमाण्य ॥ ७९ ॥

आत्मा नित्यमुक्त छे एम जाणवुं. वेदमां पण एमज कहेलुं छे. त्रिकाले एने बंधन नथी एटले एने मोक्षनीए अपेक्षा नथी माटेज ते नित्यमुक्त छे ए सोहहस सर्वत्र व्यापेलोछे ने ते असंग पुरुष छे. प्रकृतिनो एने सग लागतो नथी.

चिदाकाश आत्माछे एह राघव एमां नाहि संदेह। सकल भोगत्रीपे ए राम सकल भुषणमां एहज धाम ॥ ८० ॥

हे राघव ! निःसंदेह आत्मा ते चिदाकाश छे. बधाए भोगमा आत्मभोग रहेलोज छे. कोइ पण प्रकारना सुखनो अनुभव करो, पण विषयानंद ते ब्रह्मानंदनो एक अंश मात्र छे. वळी बधाए भूषणोमां आत्मस्वरूप ए म्होटुं भूषण छे.

गगनमंडले जेनो वास वह्नि इंदु अर्क (दिसे) प्रकाश । प्रथवि सकलमां एहनि जांण्य विवर कोश पाताल प्रमाण ॥ ८१ ॥

बधा गगन मंडलमां व्यापीने ए रहेलोछे; अग्नि चंद्र, सूर्य ए बधाने प्रकाश आपवावाळो ए छे; ने बधीए पृथ्वी, उंडी उंडी गुफाओ, अने पातालमां सर्वत्र ए छे, ए बधां एनुंजरूप छे.

जे चिद मोटे स्थानकि कह्यो ते चिद कीट उदर विषि रह्यो । वेदवाक्य निर्खे छे एह नागमशकमां सम छे तेह ॥ ८२ ॥

म्होटी म्होटी वस्तुओमा जे आत्मचैतन्य रहेलुछे ते ने तेज चैतन्य कीटादि क्षुद्र जंतुओमा पण रहेलुंछे. वळी, सर्प, उंदर एवा परस्पर वैर राखनारा प्राणीओमा पण आत्मा समान छे एवो वेदवाक्यनो निश्चय छे.

बंध मोक्ष वस्तूगत नथी जोयूं वेद पुराणे कथी । सदा सर्वदा शाश्वत ब्रह्म (तो)राघव केहनि बांधे कर्म ॥८३॥

वेद पुराणमां शोध करीने जोयुं पण वस्तुगतिए बंध के मोक्ष

छेज नहि, हमेशा एक, अद्वैत, अविच्छिन्न ब्रह्म–आत्मा प्रकाशेछे, त्या हे राघव ! कर्म ते कोने बाधी शके ? बंध ने मोक्ष ए अज्ञानी जीवनी एक कल्पना मात्र छे. बंधन मान्यु तो मोक्षनी अपेक्षा रहे-वानी, बाकी नित्यमुक्त आत्मा बंधातोज नथी तो एने मोक्ष शो ?

सघले आत्मा एकज जाण्य द्वैत नास्ति नास्ती पर-माण्य । चिदानंद ब्रह्म अकल अपार सघले ते शोभे निर्धार ॥ ८४ ॥

सर्वत्र एकज आत्मा प्रकाशमान छे अने द्वैत छेज नहि, एवो नि-श्चय करी लेवो सच्चिदानंद ब्रह्मस्वरूप आत्मा अकल ने अपार छे ने ते सर्वत्र शोभी रह्योछे, सर्वत्र एनो प्रकाश विश्वने, विश्वना पदार्थोने शोभा आपी रह्योछे.

(ज्ञान) विज्ञानब्रह्म तेहने प्रमाण्य लोकसमस्ते ब्र-ह्मज जांण । परंपरा भुत जंतू जेह केवल ब्रह्मज जाणे तेह ॥ ८५ ॥

आत्मा ते विज्ञान ब्रह्म छे ने आ बधा भूवन पण ब्रह्मज छे. पदा-र्थो ने जंतुओनी जाति परंपरा पण खरू जोता एक अद्वैत ब्रह्म छे.

हुं तूं मित्र अरि ब्रह्माकार स्वजन बंधु ते ब्रह्म निरधार। वलि वलि तुजने कहुंछुं तात सर्व ब्रह्म जाणो साक्षात ॥ ८६ ॥

हुं, तुं, मित्र, शत्रु ए बधां ज्ञानदृष्टिए ब्रह्मरूप छे; वळी स्वजन, बंधु ते पण ब्रह्म छे एवो विवेक करवो. हे भाइ! फरी फरीने तमने कहुंछुं के बधुंए साक्षात ब्रह्मस्वरूप छे. आ बधो प्रपंच पृथक् पृथक् देखायछे तेनुं कारण अज्ञान छे, पण ज्ञानदृष्टिए एक आत्मारूप छे.

ज्ञानविचारे जोज्यो जंन निश्चि कल्पना ते (जीवने) बंधन । टले कल्पना मुक्ती होय रखे मन संदे राखो कोय ॥ ८७ ॥

हे श्रोताओ ! ज्ञानविचार करी जोशो तो मालम पडशे के जीवनी कल्पनाज बंधन छे, जीव एम कहेछे के अरेरे ! हुं दुःखी छुं, दरिद्रि छुं, पामर छुं, संसारना प्रपंचथी बंधनमां पडेलो छुं. खरूं जोतां आनुं नामज बंधन छे. एवी कल्पना टळीजाय तेज क्षणे मोक्ष थइ जायछे. अज्ञानने लीधे करेली असत्य कल्पना छूटी गइ एटले बंधन पण एनी मेळे मिथ्या थयुं एम जाणवुं. आ वातमां कोईए कंइ संदेह राखवो नहि.

हुं तूं तजी जोये इक ब्रह्म टले कल्पनानो तां भ्रम । सकल सिद्धान्त तणूं ए सार राघव संग्रह कर निर्धार ॥ ८८ ॥

ए कल्पना भेदबुद्धि टळ्या विना छूटती नथी: हुं, तुं एवो भेद तजी दइने सर्वत्र एक ब्रह्मज प्रकाशी रह्योछे एवो अनुभव पाम्याथी भ्रमस्त कल्पना, भ्रान्ति नती रहेछे; कारण के केवळ ब-

हाने दुःख दरिद्रतानो आरोप करवो ए मिथ्या छे एवुं पछी समनाइ' जायछे. बधाए सिद्धान्तोनो सार आज छे माटे हे राघव ! एनो अ- वश्य संग्रह करवो.

ईहा ते जाणो चिदरूप मात्रा जांणो ब्रह्मस्वरूप । विश्व तेह केवल चिद जांण्य चित्त तेह चिदरूप प्रमांण्य ॥ ८९ ॥

हूं चिद तूं चिद (लोक) छे चिद सर्व चिद जांणी वामो जन गर्व । सिद्धान्त हृदि राघव ए राख्य अव- रभाव ते सघलो नांख्य ॥ ९० ॥

हुं तुं अने बधुं विश्व चिद्रूप छे, ब्रह्म स्वरूप छे, एम जाणीने हे श्रोताओ ! जे आ मिथ्या अभिमान आवीनें भरायुंछे ते तजीदो. सर्व चिद्रूपज छे ए सत्य सिद्धान्त हे राम ! हृदयमां संघरी राखवो अने बीजी बधी भावना छोडी देवी.

जे छे सदा सर्वदा राम यतकिंचित भासे रुपनाम । ते सर्व आत्मा इक जाण्य साचो निश्चय ए हृदि आंण्य ॥ ९१ ॥

हे राम ! जे बधा दृष्टिपदार्थो नजरे च्हडी आवेछे ते मात्र जो- वा ने कहेवा मात्र छे; कारण ए रूप नाम खोटां छे. वस्तुगतिए ए नित्य ने सनातन छे, एमनो क्यारे पण नाश थतो नथी के कोइ का- ळे एमनामां विकार संभवतो नथी, कारण रूप अने नाम जतां बाकी

बधुं चिद्रूप छे, एक आत्मारूपज बधुं विश्व छे. आज खरो निश्चय
–सिद्धान्त छे एम जाणी तेहनुं ग्रहण करवुं.

आत्माविण जे अन्य कहेवाय ते सर्वे मिथ्या रघुराय।
सर्वभाव आत्माना एह राघव एमां नहि संदेह ॥ ९२ ॥

आत्मा विनानी बीजी बधी वस्तुओ, भावनाओ हे राम ! मिथ्या
छे कारणके ए बधा एक आत्मानाज रूप छे ए वात निःसंदेह छे.

ग्राह्य ग्राहक (ते) जाणो एम स्वप्नमनोरथ माया जेम।
हृदये राखो ए अभ्यास कर जोडी कहि नरहरिदास
॥ ९३ ॥

ग्राह्य कहेतां दृष्टिपदार्थो, विषयो ने त्हेमनो ग्राहक, भोक्ता-
हुं ए भावनाज खोटी छे: स्वप्नवश थएला पुरुष जे जे मनोरथ करे-
छे ते बधा मिथ्या होयछे तेवीज रीते आ अज्ञान दशानी ए भावना
पण खोटी छे. आज परम सत्य छे एम जाणी त्हेनो सदोदित अ-
भ्यास राखवो एम ग्रंथकर्त्ता विनवेछे.

इति श्रीवसिष्टसारगीतायां आत्मनिरूपण नाम नवम
प्रकरणम् ॥ ९ ॥

प्रकरण १०.

ब्रह्मनिरूपण.

पूर्वछायो ॥

वैराग्य तिव्र ते वर्णव्यो (अने) जगमिथ्या कह्युं सार। जिवनमुक्त लक्षण कह्यां मन लय कह्युं निरधार ॥१॥

कह्यो ऊपशम वासना (तणो) अनि कह्युं आत्ममनन। शुद्ध तत्त्व निरुपण कर्युं कह्युं ते आत्मार्थेन ॥ २ ॥

जिवत्वनुं कारण कह्युं अनि (कह्यो) ते लय उपाय। स्वरुप जिवेश्वर तणुं कह्युंहरिगुरुसंत पसाय ॥३॥

हवि समि केवल ब्रह्मनें बोलिस ते निर्धार । ए अनुभव हृदि राखज्यो मूको अवर विचार ॥ ४ ॥

केवल ब्रह्म जाण्याविना (ए) माया असत* न जाय मनथी माया तो टले (जो) परब्रह्मशुं चित्त जाय ॥ ५ ॥

माया असत्य–मिथ्या छे तोपण केवल ब्रह्मनुं ओळखाण थया

* मूलः—मिथ्या.

विना एनुं मिथ्यात्व यथार्थ समजातुं नथी, ने तेथी ते छोडाती पण नथी. विषय मात्र खोटा छे, दुःखरूप छे, माया खोटी छे, जीवने वारंवार फनावी फसावीने त्हेनी अधोगतिने करवावाळी छे. एम विवेक करी त्हेने एकवार छोडीए पण पाछो त्हेनो मोह आवीने चोटेछे; कारण के मनथी एनो त्याग यथार्थ होतो नथी. पण सत्य वस्तु ए केवळ ब्रह्म त्हेनो निश्चय करी असत्य एवी मायानो मनथीज समूळगो त्याग कराय त्यारे पछी परब्रह्ममां वृत्ति वळेछे, ने ते असत्य रूपने संघरती नथी.

राघव ब्रह्म चितवन करो (एम) कहि मुनि वारंवार।
प्रपंच प्रकृती परहरो ग्रहि हृदि ब्रह्मविचार ॥ ६ ॥

माटे गुरुश्री फरी फरीने उपदेश करेछे के हे राम ! परब्रह्मनुंज चिंतन करवु, ने हृदयमां ब्रह्मविचार भरीने आ बधोजे प्रकृतिनो प्रपंच कहेतां असत्य संसार उपज्योछे, विस्तर्योछे, त्हेनो त्याग करी दो.

श्रीरामोवाच ॥

प्रपंच प्रकृती (ते) क्यम टले ब्रह्म चिंतन* क्यम थाय।
ते अनुभव सदगुरु कहो वळि वळि लागूं पाय ॥७॥

श्रीरामचंद्रजी प्रश्न करेछे हे सद्गुरू ! प्रकृति प्रपंच कहेतां संसारनो त्याग शी रीते थाय, ए मिथ्या भावना शाथी टळी जाय अने परमात्मानुं चिंतन केवी रीते थाय ए अनुभव बतावो; कारणके

* मूळमां—चैतन्य

वस्तुस्थिति जाण्या छतां पण रहेनो अनुभव आववो अति कठिण छे. हुं आपने वारंवार प्रार्थना करीने कहुंछुं के .एवी कोइ युक्ति बतावो के खरो ज्ञानानुभव थाय.

चोपै.

श्रीवसिष्टोवाच ॥

भणे वसिष्ट सुणो रघुराय प्रकृतिनो लय एणे + थाय। ब्रह्म ज्ञाननें अनुभवि राम टलि ते सकल मनोरथ‡ काम ॥ ८ ॥

हवे सद्गुरु कहेछे: प्रकृतिनो लय करवानुं, संसार भावनानो अत्यंत त्याग करी देवानु मात्र एकज साधन छे; ब्रह्मज्ञान प्राप्त करीने पछी रहेनो अनुभव लेवाय, एटले सत्य वस्तु एक केवळ ब्रह्म छे.ने ते सर्वत्र ने सर्वरूप छे. एम अनुभवाय त्यारे संसारना जूठा विषयोनी तृष्णा, अभिलाषा टळी जायछे त्यार सिवाय मनना मनोरथ ने आशाओ जती नथी: फरी फरीने मन ए असत्य विषयोनीज भावना कर्या करेछे.

ज(हां) लगि दर्शन दृश्य संबंध तां लगि राघव जाणो द्वंद । विषयेंद्रीय समध सुख जेह परम सूख तां नोहे तेह ॥ ९ ॥

एक रूपता यथार्थ समजावी जोइए छे, एटले दृष्टा, दृश्य ने

+ मूर.—एणीपेरे. ‡ मूळः— कामना.

दर्शन, ए त्रिपुटीनो भंग थवो जोइए छे, जे पदार्थ दृष्टिए पडेछे ते दृश्य ब्रह्मरूप छे, ने ह्हेमनो द्रष्टा पण ब्रह्मरूप छे, ने ह्हेमनुं जे दर्शन ते *पण ब्रह्मरूपज छे एवो ज्ञानानुभव थतो नथी त्यां सुधी हे* राम ! द्वंद कहेतां प्रपंच द्वैत वासना एवी ने एवी रहेछे; पण एकवार एवो पाको निश्चयज करीदेवो के विषयोने सजवावाळी इन्द्रियो ह्हेमनुं सुख ते परम सुख नथी पण मात्र क्षणिक ने मिथ्या छे, परिणामे वळी दुःखरूप छे.

परम सुख तो पांमे जंन सम्यक पिरि मारे जो मंन ।
विषय त्यजे ब्रह्मचिंतन करे एणि ज्ञानि राघव मन मरे ॥ १० ॥

मन जे अनेक विषयोमां रमतुं रहेछे ह्हेनो बराबर निग्रह थाय, ए र्खाळे बंधाइ जाय, मरी जाय, स्थिर शान्त, ब्रह्मरूप बनी जाय, त्यारेज परम सुखनो अनुभव थायछे, एम छे; अने हे राम ! मन कंइ सहज मरतुं नथी, एने मारवाने विषय मात्रनो परित्याग करी हमेशां ब्रह्मनुंज चिंतन करवुं जोइए छे. विषयोमाथी वृत्ति खसेडी परमात्मा प्रति वाळवाथी धीमे धीमे मननी वासना छूटती जायछे. एम वासनानो संपूर्ण त्याग थाय त्यारे जाणवुं के मन मरी गयुं ने परमानंदनी प्राप्ति थइ.

मननो नाश परमपद तेह सम्यग् ब्रह्मचिंतन तां एह ।
अहंब्रह्म सर्व ब्रह्म जोय परम पद ते कहीये सोय ॥११॥

मन मरी गयुं, मननो पूरेपूरो नाशज थइ गयो ह्हेनी साथेज

परमपदनी प्राप्ति थइ गइ एम जाणवु. खरुं ब्रह्मचिंतन पण त्यारेज थायछे; कारण के मन विषयोमा भमतुं रहे त्यासुधी त्हेनुं ध्यान थतुं नथी. परमपद ते शुं ? हुं पण ब्रह्म छुं ने सउ कहेतां विश्व ते पण ब्रह्म छे अर्थात् ब्रह्म एज सर्वत्र ने सर्वरूप छे एवी निश्चल बुद्धि थता जे स्थिति प्राप्त थाय त्हेनेज परमपद कहेछे.

विषयेंद्रीय समध सुख जेह दृढ बंधन जन जांणो तेह । इंद्रिय सुख ते सुख नव होय दृढ बंधन जन जाणो सोय ॥ १२ ॥

वस्तुविवेक दृढ थवाने फरी फरीने कहेछे के विषयेंद्रियनुं जे सुख छे ते हे श्रोताओ! एक दृढबंधन छे; एज जीवने जन्म मृत्युनी परंपरा भोगवावेछे. खरुं जोता ते सुख नथी कारण के परिणामे ए परम दु.खरूप थइ पडेछे' विषयनो भोग भोगवता सुख लाग पण तेटलो वखत गयो एटले पछी दु.ख क्लेशज थायछे. भोग मात्रमा रोगनुं, दु खनुं भय छे.

विषयसूख मनथी जे तजे (अने) केवल ब्रह्म निरंतर भजे । जिवनमुक्त तेहनि निरधार जे घट केवल ब्रह्मविचार ॥ १३ ॥

माटे विषयोमाथी मळतुं सुख पामवानी तृष्णा जे पुरुष मनथी तजी देछे ने केवल ब्रह्मनुंज रात दिवस ध्यान, चिंतन कर्या करे छे त्हेनेज खरेखरो जिवनमुक्त जाणवो. केमके एना हृदयमां ब्रह्मविचार सिवाय बीजी कोइ भावना होती नथी.

ब्रह्मविचार जि पेरे होय सांभलजो जन कहूं छूं सोय।
ए अनुभव हृदिमांहां धरो अवर मात्र सगलो परहरो
॥ १४ ॥

अर्थ स्पष्ट छे.

सत्य असत्य अनें मध्य जेह शुद्ध परम पद भणिये तेह।
ते पद अविलंबी जे रहे ते नर कांइ तजे नव्य ग्रहे॥१५॥

ब्रह्म ते सदसत् छे; वळी आदि अंत रहित ते सदा सर्वदा मध्यमान एटले वर्तमान छे. एज खरु परमपद छे. जे पुरुष एनो आश्रय लइने रहे्छे एने कंइए ग्रहण करवानुं के तजवानुं रहेतुं नथी, अर्थात् कर्म थया छतां एने कोइ रीतनु बंधन वळगतुं नथी.

बाह्याभ्यंतर तेहनि जोय तेहनि भिन्न न भासे कोय।
विश्व तेहमां विश्वे तेह राघव एमां नहि संदेह ॥१६॥

वस्तुनी, विश्वनी बहार अने भितर, सर्वत्र, ज्यां जोइए त्यां एक ब्रह्मज प्रकाशेछे एवी दृष्टिवाळा पुरुषने कोइ पण वस्तु पोतानाथी–आत्माथी जूदी जणाती नथी. बधुं विश्व एक ब्रह्ममां रही वर्तेछे ने ब्रह्म ते सर्वत्र एटले बधा विश्वमा छे एज एक सत्य सिद्धान्त छे. हे राम ! एमा जरा पण संदेह आणवानो जग्या नथी.

जडाजड मध्ये छे जे कोय परमार्थ तत्त्व कहीये सोय।
अनंत अपार गगनवत राम निर्मल निश्चल पूरणधाम
॥ १७ ॥

जड अने अजड एटले चर अने अचर बधायमां समान रीते जे कोइ रहेलोछे तेज परमार्थ कहेतां ब्रह्म छे ते हे राम ! आकाशना जेवो अनंत अने अपार, निर्मळ, निश्चळ अने पूर्णस्वरूप छे.

परम प्रकाश अकल उद्योत स्वयंप्रकाश सनातन जोत।
सदा सर्वदा आश्रय तेह राघव निश्चय कहुं छुं एह ॥१८॥

ए अकळ ने परम प्रकाश रूप छे. ए प्रकाश बीजा कोइनो एने मळेलो छे एम नथी, कारण के ते स्वयंप्रकाश छे, एक सनातन ज्योति छे, हे राम ! जीवने म्होटामां म्होटुं ने नित्ये ए ब्रह्मनुंज शरण छे ने एज आश्रय बधाओए लेवो घटेछे ते हुं त्हमने निश्चयपूर्वक कहुंछुं.

विषयेंद्रियने संगे (करी) तात होय निश्चि बंधन साक्षात । दृष्टादृश्येनि संगत त्यजे तो केवल स्वानंद सुख भजे ॥ १९ ॥

हे राम ! विषयेंद्रियनो ज्यां सुधी जीवने संग रहे त्यां सुधी अवश्य ते बंधन पामवानो, पण ए दृष्टा दृश्यनी भावना छोडीदे ने सर्वमय ब्रह्मने यथार्थ ओळखे त्यारेज त्हेने कैवल्य पदनुं सुख प्राप्त थाय; एटले अत्यन्त दु.खी ते दुःखविमुक्त थाय ने हमेशां परमानंद अनुभवे.

दृष्य भावनें मूको जंन अहर्निश कर आत्माचिंतन।
(जे) व्यापक शुद्ध परम पद राम आश्र निरंतर ते निजधाम ॥ २० ॥

हे श्रोताओ ! दृश्य पदार्थोनी मानना करवीज मूकीदो अने रात दिवस एक आत्मानुंज–ब्रह्मनुज चिंतन करो. हे राम ! आत्मा सर्व व्यापक, शुद्ध ने परमपद छे. ए निजधाम कहेता आत्मस्वरूपनोज सर्वने हमेशा आश्रय छे. बधा जगतने एज धारण करेछे.

द्रष्टा दृश्य दर्शन तां जेह त्रिविध वासना भणिये तेह । द्वंद तजो निर्द्वंद चित धरो राघव ए अनुभव तां खरो ॥ २१ ॥

द्रष्टा, दृश्य अने दर्शन ए त्रण प्रकारनी वासना छे, एवी त्रिविध वासनानो त्याग करी, हुं द्रष्टा, दृश्य पदार्थोथी भिन्न छुं, एवी भेद, प्रपंचबुद्धि कहाडी नाखो अने निर्द्वंद एटले अभेद बुद्धिने धारण करो. हे राम ! खरो अनुभव आज छे.

हूं तूं प्हेलो ते तां सत्य जेणे करि होय सर्व प्रवृत्य । सकल भूतनो करे प्रकाश आत्मायं अव्यय उपास ॥२२॥

हुं, तुं ए बधाथना प्हेलो एटले सर्वनुं आदि कारण आत्मा एक सत्य छे. एनाथीज आ बधी कर्म प्रवृत्तिओ चालेछे; कारणके आत्मा ते अखिल विश्वनो प्रवर्तक छे. भूत मात्रने प्रकाश करवा वाळो, उपजावनारो ए आत्मा अव्यय छे. त्हेनीज सदाये उपासना करवी.

सत्य असत्य जडा जड द्वंद (ते) उभय मध्य छे परमानंद । प्रकाशक तणो प्रकाशक जेह आत्मस्वरूप तम जाणो तेह ॥ २३ ॥

सुरमंडल विषि जेहनि जोत्य (अने) जे रवि विश्व करे उद्योत । ते आत्मा परमात्मा राम सदा उपासो ते परधाम ॥ २४ ॥

यथा सूर्यमंडलमां एक आत्मानीज ज्योति छे. आत्मायीज सूर्य अने विश्व प्रकाश पामे छे. ए आत्मा तेज परमात्मा छे माटे यथायथी पर एटले सर्वातीत ए स्वरूपनीज हमेशां उपासना करवी, आत्ममय बनवुं.

आत्मसूख जिणिपेरे होय रघुपति समश्या कहुं हवि सोय। समजी लेजो जन ते ज्ञान जे अनुभवि योगी विद्वान* ॥ २५ ॥

हवे हे राम ! आत्मसुख शी रीते प्राप्त थाय ते समश्या, मर्म, युक्ति बतावुंछुं. ए एक समश्या, कोयडोज छे, कारण के ज्यां सुधी वात समजाय नहि त्यां सुधी ए बहु कठिण लागे ने छूटे त्यारे सहजमां छूटी जाय, माटे ते बराबर समजी लेवी. म्होटा म्होटा योगीओ अने पंडितो पण एज ज्ञानानुभव कर्या करेछे.

निद्रा आदे भाव जि होय जागृत अंते जांणो सोय । तेह भाव राघव हृदि आंण्य जेह भाव ते पद निर्वाण ॥ २६ ॥

निद्रा एटले सुषुप्ति पामतां पहेलां एटले अज्ञानमां लय पाम्यानी

---

* मूळ-ज्ञानवान.

पूर्वे अने जागृतनी अन्ते एटले कर्म प्रवृत्तिओथी निवृत्ति थतां जे भावना उपजेछे, तेज खरी आत्म–भावना छे, एज खरुं मोक्षपद छे माटे हे राम! अंतरमां सदाए एवी भावना राखवी.

एह भावनें अनुसरि जेह अक्षय सुख भोगवि जन तेह। एह भाव हृदये धर तात एह भाव ते ब्रह्म साक्षात ॥ २७ ॥

एवी आतमभावनाने जे पुरुष अनुसरेछे एटले जे एमां जराए विक्षेप न पडवा देतां वर्तेछे ते अक्षय एटले नित्यसुख भोगवेछे. एने दुःखनी भावना कदापि थती नथी. ए आतमभावना एज साक्षात् ब्रह्म छे, एम जाणी हे भाइ! एने हृदयमां संघरी राखवी.

एह भावनूं कहुं तुज रूप एकमनां सुण रघुपति भूप। संकल्प सकल ते पामे शान्त ब्रह्मभाव तां ए सिद्धांत ॥२८॥

हे राजेंद्र! ए भावनानुं केवुं रूप, लक्षण छे ते हुं कहुंछुं ते एकाग्रचित्त थइ सांभळोः ए भावनाथी बधाए संकल्प शान्त थइ जायछे ने ए रीते मन निवृत थइ जवाथी खरो ब्रह्मभाव उपजेछे आ सिद्धान्त छे.

संकल्प विनानुं (होय) मन जेहनूं नाम ब्रह्म केवल तेहनुं। शिलातणी पेरे स्थिर (थइ) रहे निश्चलचित्त त्यजे नव ग्रहे ॥ २९ ॥

जे पुरुषना मनना संकल्पधर्मनो अत्यन्त त्याग थइ गयोछे' ते केवळ ब्रह्मरूपज छे; कारण के ते पत्थरनी पेठे निश्चळ थइ जाएछे,, ने निश्चळ, शान्त थयेलुं चित्त कोइ पदार्थ, विषयने पछी सघरतुंए नथी ने कशानो त्याग पण करवानो त्हेने होतो नथी.

जाग्रत निंद्रा हिण स्थिति जेह सत्यस्वरुप परमात्मा तेह । संकल्प तणे त्यागे सुंण राम परमात्मा ब्रह्म तेहनुं नाम ॥ ३० ॥

हमणा कही गया तेम जागृत अने निंद्राथी पर जे भावना तेज खरी आत्मभावना ने ब्रह्मभावना छे. पुरुषे, मने संकल्पनो त्याग कर्यो एटले ते परमात्मा ने ब्रह्मरूप बन्यो एम समजवुं.

वज्रपेरि चितने द्दढ करो शिलावत्त निश्चल बुधि धरो । महाबाहु तुं सुण रघुवीर निश्चल मनने कहिये धीर ॥३१॥

विषयोनु चित्वन कर्या करे ते चित्त; एने वज्रना जेवुं द्दढ करी देवु अने पत्थरना जेवी निश्चळबुद्धि धारण करवी. हे महाबाहु, रघुवीर ! साभळो, निश्चळ मन तेज धीर, शान्त कहेवायछे.

मन ते अमन करो तम राम सेवो नीज चिदानंद धाम । सदा सर्वदा तनमय होय राघव मनवृत्ती सव पोय ॥ ३२ ॥

हे राम ! ए रीते मनने अमन करवुं, मारी नाखवुं, चिद्रूप बनाववुं ते पछीं परमानंद रूप पोताना आत्मस्वरूपनु सेवन करवुं, एनुज

ध्यान धरवुं. हे राम ! आम जे पुरुष हमेशां तन्मय बनीने रहेछे
रहेना मननी वृत्तिओ मात्र खोवाई जायछे, निवृत्त थइ जायछे,
लय पामी जायछे.

मन ते होय अमन जिणिवार (त्यारे) भासि सर्व ते साक्षात्कार । सत्यानंद चिद्रुप तूं जेह आकाशवत्त परमेश्वर तेह ॥ ३३ ॥

मन अमन थयुं तेज क्षणे सर्व प्रकट ब्रह्मरूपज भासेछे, विश्वना सत्य स्वरूपनो साक्षात्कार थायछे. खरा सुखने, परम आनंदने आपवावाळुं जे चिद्रूप ते आकाशना जेवुं निर्मळ छे ने परमात्मा रूप छे.

निर्गुण सगुण केवल ब्रह्म जाण्य सघले आत्मा एक प्रमाण्य । ज्यम मृदभांड (ते) मृत्तीका सही (एम) विश्वब्रह्मथी अलगूं नहीं ॥ ३४ ॥

निर्गुण अने सगुण ए बधुंए केवळ ब्रह्म छे, अने सर्वत्र एक आत्मा प्रकाशेछे एवो निश्चय करवो. माटीनां वासण ते वस्तुगतिए माटीज छे तेम विश्व ते ब्रह्मनुं सगुण रूप छे ने ते निर्गुण ब्रह्मथी क्यारे पण जूदुं नथी.

सदा समुद्रे ज्यम इक तोय पारावार रहित जल सोय । लहरी लोढ फेनज बुदबुदा म्हा जलमांहे होये सदा ॥ ३५ ॥

समुद्रनुं अथाग जळ एकज छे. ए महाजळमां सदाये, लहरीओ, मोजां, फीण अने परपोटा उपजी आवेछे.

जलथि उपजि ते जलमां समे जलरुपथां जलमांहां रमे । समुद्र असंख्य लहेरि अपार समुद्रविषे जलनो विस्तार ॥ ३६ ॥

ए जळमांथीज उपजी आवेछे ने पाछां जळमांज समाइ जाय छे एम जलरूप ते बधां जळनी अंदर रहीनेज विलास कर्या करेछे. समुद्रमां अनेक लहरीओ उपजेछे, पण ए बधा जळनो विस्तार, समावेश एक समुद्रमां छे.

एम चिदार्णव एक अखंड बाह्य मध्य व्यापक ब्रह्मंड । आत्मा स्वयं अकल अविनाश सघले तेह तणो परकाश ॥ ३ ॥

तेम चिदार्णव एक ने अखंड छे, ब्रह्मांडनी बहार-अने अंदर ए व्यापीने रहेलोछे अर्थात् समुद्रलहरीना दृष्टान्ते ब्रह्म ब्रह्मांड एक रूपज छे. आत्मा स्वयंज्योति, अकल ने अविनाशी छे ने सर्वत्र एनोज प्रकाश छे.

दिश सघली वन सघले राम (ते) आकाशे व्यापक सब ठाम । जां जोये तां एकाकाश आत्मा सघले एम प्रकाश ॥ ३८ ॥

दशे दिशामां, वनमां, पहाड पर्वतोमां, उंडी उंडी गुहाओमां

सर्वत्र आकाश व्यापीने रहेलुंछे. ज्यां जोइए त्यां आकाश छेज, तेम विश्वमां, ब्रह्मांडमां आत्मा पण सर्वत्र छे. एनो प्रकाश क्यांय नथी एम नहि.

(ज्यम) समुद्रथके लहरी बहु होय लहरी ते केवल जल सोय। लहरिनाम मात्रे ते जाण्य सदा सर्वदा जल परमाण्य ॥ ३९ ॥

अर्थ स्पष्ट छे. लहरी मिथ्या ने जळमात्रज सत्य छे तेम विश्व अने ब्रह्मनां स्वरूपनो विवेक करवो.

(एम) जगत सर्वमां वस्तु निहाल भेद (बुद्धि) सजाति विजाती टाल्य। सुख दुःख दाता पर को नहीं चिदात्मा सघले एकज सही ॥ ४० ॥

बधाए विश्वमां एक वस्तु, आत्मानेज जोवो, ने सजाति ने विजाति एवा वस्तु वस्तु परत्वे जे भेद छे ते टाळी देवा. जीवने सुख के दुःख आपवावाळो बीजो कोइ नहि पण ते पोतेज छे, पोतानो मित्र ने शत्रु ते पोतेज छे, कारण के सर्वमां एक चिदात्मा रहेलोछे ते कोइने सुख के दुःख आपतो नथी, कोइने प्रिय अप्रिय गणतो नथी; जेवी जीव भावना करे तेवुंज ते दुःख के सुख अनुभवे.

चिदात्मा तणू स्वरुप तां जेह सुण राघव निश्चें कहुं तेह। निरावेव व्यापक (सर्व) वरजीत ब्रह्म व्योम तुल्ये अद्वैत ॥ ४१ ॥

हे राम ! चिदात्मानुं केवुं स्वरूप छे ते हवे सांभळो. आत्मा निरावेव एटले अवयव विनानो-अरूप छे, व्यापक ने वळी संग रहित छे. व्योम अने आत्मा समान छे, ने ते अद्वैत छे.

ब्रह्म व्योम मांहे नहि भेद राघव एह वचन तो वेद। (पण) ब्रह्म व्योम महि अंतर जेह सांभल रघुपति कहुं तुज तेह ॥ ४२ ॥

आम आत्मा अने व्योम समान छे, पण आत्मामां एक अधिक लक्षण छे ते हवे कहेछे.

जड आकाशनि जाणो तात (अने) ब्रह्म तेह चैतन साक्षात। चैतन्य सर्वे चैतन करे एह अधिकता ब्रह्मज धरे ॥ ४३ ॥

आकाश वास्तविक जड छे ने आत्मा ते साक्षात् चैतन्य छे. ए चैतन्य एवुं छे के जे जे वस्तुने एनो स्पर्श थाय ते बधीने ए चैतन्यरूप बनावी देछे. आत्मानी आज एक अधिकता छे.

सर्वभूतमां जे ब्रह्म वसू स्वरूप तेहतणूं छे अशू। तरंग रहित स्थिर अति गंभीर सदानंद जाणो रघुवीर ॥ ४४ ॥

बधाए पदार्थोमां जे आत्मा रहेलोछे, रहेनुं स्वरूप केवुं छे ते कहुंछुं. हे राम ! ए नित्य आनंदरूप आत्मा तरंग कहेतां संकल्प धर्म विनानो, स्थिर ने अति गंभीर छे.

सुधातणो अर्णव तां तेह परमानंद भणीजे जेह। मधुर अती केवल* रस सोय ते त्रिण ठाम न ठालो कोय ॥ ४५ ॥

ए अमृतनोज अर्णव एटले समुद्र छे, परमानंद पण एनेज जांणवो. ए केवलरस घणो मीठो छे; एने पीतां कोइने अमावो थतो नथी. ते सर्वत्र सरखो भरेलो छे; एना विना एक पण जग्या खाली नथी.

सकल सिद्धांत तणूं जे सार परम रहस्य म्हां निधि भंडार। पितामहे जे कह्युं मुजने सुण राघव ते कहुं तुजने ॥ ४६ ॥

बधाए धर्म सिद्धांतोना साररूप एक आत्मा छे, ते परम रहस्यनो एक महानिधि कहेतां भंडाररूप छे. एने जाण्यो एटले कंइ जाणवानुं बाकी न रह्युं. एम ज्ञान मात्रनी एमां परिसमाप्ति थायछे. हे राघव! पितामहे एटले खास ब्रह्माए म्हने आ वात कहेली ने तेम आज हुं त्हमने अहीं कहुंछुं.

समस्त विश्व केवल ब्रह्म जाण सघले आत्मा एक प्रमाण। सर्वभूतमां आत्मा एक हृदये राखो एक विवेक ॥ ४७ ॥

भेदबुद्धि कहाडी नाखीने बधुंए विश्व एक केवल ब्रह्मज छे, एवो निश्चय करवो; सर्वत्र एकज आत्मा प्रकाशेछे, एवो अनुभव क-

* मूल-आनंद.

रवो; ने भूत मात्रमां रहेलो आत्मा जूदो जूदो नहि पण एक छे एम जाणी आत्मवृत्ति शीखवी, ने ए ज्ञानविवेकनेज हृदयमा संघरी राखवो.

अहं अन्यनें जग ते अन्य (ए) मनमां भाव न आणिश भिन्न । अषंड नें पंडिश मां तात सघले केवल ब्रह्म साक्षात ॥ ४८ ॥

हुं ए जूदो छु ने जगत पण जूदुं छे एवी भेदभावना कदापि मनमां आववा देवी नहि. हे राम! अखंड जे आत्मा, ब्रह्म तेहनुं एवी द्वैतबुद्धि करी कोइ दिवस खंडन करवुं नहि. सर्वत्र, हुंमां, जगतमां एकज आत्मा प्रगटपणे वर्तेछे.

अषंड ब्रह्म स्वरूप तां जेह सघले केवल व्यापक (जाणो) तेह । ते विण अणु (एक) ठालो नहि ठाम जांण्य निरंतर आत्मा राम ॥ ४९ ॥

अखंड ब्रह्मनुं स्वरूप एवुं छे के ते एकज सर्वत्र व्यापी रहेलो छे, एना विना एक अणु रहे एटलो पन जग्या खाली नथी. हे राम! आत्मा सदाए निरतर कहेता निर्बाध, अविच्छिन्न छे एम जाणवुं, सर्व देशे सर्व काले ए भरपूर भरेलोछे एवो निश्चय करवो.

संसार सकलने ब्रह्ममय जोय परमेश्वर तां [illegible] सोय । जेने भिन्न न भासे रूप ते नर [illegible] स्वरूप ॥ ५० ॥

वधुं जगत ब्रह्ममयछे, ब्रह्मज सर्वत्र मरेलो छे एवुं जे पुरुष जु-
एं छे, जाणे छे, एनेज परमेश्वर कहेवो. जे पुरुषने रूप कहेतां विश्व
ब्रह्मथी भिन्न एटले जूदुं देखातुं नथी त्हेने ब्रह्मस्वरूप जाणवो.

समस्त भूतने ब्रह्म करि कहे ब्रह्मभाव हृदि मांहां ग्रहे।
ब्रह्मभावि निश्चय ब्रह्म थाय ते दृष्टांत सुणो रघुराय
॥ ५१ ॥

बधाए भूतो–पदार्थो ब्रह्मरूप छे एम कही जे पुरुष एक ब्रह्म-
नोज विचार हृदयमां संघरी राखेछे ते अवश्य त्हेनी ब्रह्मभावनाथी
ब्रह्मरूप बने छे. एनुं एक दृष्टान्त कहुंछुं ते हे राम! श्रवण करो.

अमृत पान करे जन जेह निश्चे अंमृत थाये तेह।
ब्रह्मभाव राखो जन हृदे मानुभाव मुनिवर इम वदे
॥ ५२ ॥

जे पुरुष अमृतनुं पान करे ते अवश्य अमृत थायछे, तेवीज
रीते जे ब्रह्म विचार करेछे ते ब्रह्मरूप बनेछे; कारण के ध्याता त्हे-
ना ध्यानथी ध्येयरूप बन्या विना रहेतो नथी; माटे महात्मा श्री
सद्गुरु कहेछे के हे श्रोताओ! एक ब्रह्म भावनानेज हृदयमां संघरी
राखो.

भव्य पुरुष कहिये तेहनें ब्रह्मभाव सघलें जेहनें। जे-
हनि निश्चे ब्रह्मनो राम ते नर कहिये पूरणकाम
॥ ५३ ॥

जे पुरुषने सर्वत्र ब्रह्म छे एवी भावना उपजेली छे त्हेने भव्य एटले मोक्षनो अधिकारी जाणवो. हे राम ! जेने ब्रह्मनो निश्चय थइ गयोछे ते पुरुष वळी पूर्ण काम छे, अर्थात् ते कोइ पण जातनी तृष्णा रहित छे

ब्रह्मज्ञान हृदे नव धरे अवरमार्ग दृढव्रत ते करे । भ-स्म होमव्रत् जाणो तेह प्रपंच सदाय दृढावे जेह ॥५४॥

जे पुरुष ब्रह्मज्ञाननी वात सामळतो–संघरतो नथी, पण मात्र प्रपंचनेज दृढ कर्या करेछे एटले संसारना विषयोनुंज निरंतर ध्यान कर्या करेछे त्हेनो अग्निमां होमेली वस्तुनी पेठे नाश थयो जाणवो; कारण के संसारनी भावना हमेशां दृढ कर्याथी जीवनुं बंधन छूटवाने बदले सखत थायछे.

वलि वलि सत्य कहुं रघुवीर ब्रह्मज्ञान राखो हृदि धीर । अवरभाव ते मनथी नाख्य केवल ब्रह्मशु चित राख्य ॥ ५५ ॥

. अर्थ स्पष्ट छे. बीजी बधी भावना मूकी दइने एक ब्रह्मनुंज चिंत्वन, ध्यान करवुं एज श्रेयस्कर छे.

आत्मतत्त्व जाणो रघुराय द्वैतभाव ते सघलो जाय । अभ्यास एह अंतरगत राख्य प्रपंच अवर ते सघलो नांख्य ॥ ५६ ॥

अर्थ स्पष्ट छे. सत्य वस्तु एक आत्मा त्हेने ओळखी लइ भेद बुद्दिनो अत्यंत लय करी नाखवो.

सर्वब्रह्म सोहं ब्रह्म जांण्य राघव ए हृदि निश्चय आण्य।
एणे निश्चें रहि नर जेह केवल ब्रह्म भणीजे तेह ॥५७॥

अर्थ स्पष्ट छे. विश्व ब्रह्म तेम आ आत्मा ब्रह्म छे, ह्हेनाथी कंइ भिन्न नथी.

आदि अंत ते शुद्ध जल कहूं रजे करी मध्य मलिनज थयूं। कतकफल स्पर्शे जिणिवार ते जल शुद्ध बने तिणि वार ॥ ५८ ॥

जल स्वभावे शुद्धज छे. ए उत्पन्न थायछे त्यारे ने लय पामेछे त्यारे निर्मलरूपे होयछे पण ते जमीन उपर होय त्यारे एटले ह्हेनी मध्य अवस्थामा ते रजने लीधे मलीन कहेवायछे, परंतु खरुं जोतां ते मलीन नथी. कतकनी भूकी एवा मलीन कहेवाता जलमां नाखीए तेज वखते निर्मल बनी जाय छे, एनो बधो मल जूदो पडेछे.

(एम) जांण्ये तत्त्व उपाधी (ते) टले आत्मा परमात्मांमां मले। अवर द्वंद सघलो परहरो तत्त्वज्ञान हृदि मांहां धरो ॥ ५९ ॥

एम तत्त्वने एटले आत्माने ओळखवाथी उपाधि एटले देहभावना मटी जायछे ने आत्मा ते परमात्मारूप बनेछे; माटे बधो प्रपंच कहाडी नाखीने तत्त्वज्ञान कहेता आत्मज्ञान प्राप्त करवुं.

तत्त्व तत्त्वज्ञाने जांणियें वस्तु सकलमांहां मानिये।
वासुदेव परब्रह्म अविनाश सोहं आत्मा सर्वावास॥६०॥

तत्त्व कहेता आत्मा ते आत्माथीज ओळखायछे. दरेक वस्तुमा आत्मा रहेलोछे एवी बुद्धि एटले आत्मनिष्टा राखवी. सोह आत्मा तेज वासुदेव अने अविनाशी परब्रह्म छे ने सर्वावास एटले सर्वत्र रहेलोछे.

निश्चय एह सदा जेहने जिवनमुक्त कहिये तेहने ।
निश्चय एह रहित नर जेह नित्यबंध तां भणिये तेह ॥ ६१ ॥

आवो निश्चय एटले एक आत्मा सिवाय बीजुं कंइ नथी एवी जेहनी स्थिर बुद्धि थयेली छे ते पुरुषने जिवनमुक्त कहेवो, अने ए निश्चय विनानो पुरुष नित्यबद्ध छे एम जाणवु. सत्य वस्तुना ज्ञानविना अज्ञाने बांधेला बंधन कदापि छूटता नथी.

नेति नेति करतां जे रहे मुनी परमपद तेहनि कहे ।
जे पद कोणे पाछुं न थाय सोहं ब्रह्म ते रघुराय ॥६२॥

परमपद एटले कैवल्य, मोक्ष, ब्रह्ममयता, उत्तममा उत्तम पद प्राप्त करवानु ते आत्मानु माटे अहीं आत्मानेज परमपद कह्यो. एनो निश्चय साधु पुरुष नेति नेति करीने करे छे, कारण के स्थूल वस्तुओना त्याग विना सूक्ष्म वस्तुनो निश्चय थतो नथी; तेम जड वस्तुओना त्याग विना चैतन्यस्वरूप कळ्यामा आवतु नथी. एटले जे आत्मा नथी एवा बधा पदार्थोने छोडी देवा. अने जे अवशेष रहे ते आत्मा एम विवेक करी लेवो. ए पदनी प्राप्ति थया पछी कोइ ब्रह्मादिकथी पण जीवनी अधोगति करी शकाती नथी, केमके हे राम ! ते पदज सोहंब्रह्मनु छे.

ए पदनें अविलंबे कोय सदा सुखी नर भणिये सोय।
ए पद राम रमो दिन रात चित्त न धरिश अवर कशि
वात ॥ ६३ ॥

ए पदने एटले सोहं ब्रह्मने, जे पुरुष आश्रीने रहेछे ते नित्य परम सुखी छे एम जाणवुं. हे राम! ए पदमांज रात्रिदिवस रमण करवुं, एटले निरंतर आत्मयोग आदरवो ने बीजी कोइ प्रपंचनी वात मनमा लाववी नहि.

सर्व निरंतर जाणो ब्रह्म सघळे इक आत्मा निष्कर्म।
यत्किंचीत पदारथ तात ते सर्वे परब्रह्म साक्षात ॥६४॥

सर्व निरंतर एटले बधायीए निर्बाध, अविच्छिन्न, सर्वातीत आत्मा छे, कारणके सर्वत्र रह्या छतां ए निष्कर्म रहेछे. कर्म प्रवृत्तिओनो एने स्पर्श थतो नथी. हे भाइ! जे जे पदार्थो छे ते बधा साक्षात परब्रह्म रूपज छे

प्रथक बुध्य जे ध्याता धरे अखंडीत ब्रह्मनुं खंडन करे।
खंडबुध्ये मूकी परहरी आत्मबुध्य राखो हृदि धरी ॥६५॥

कोइ ध्याता एटले साधक, मुमुक्षु जो प्रथक् बुद्धि एटले भेद भावना करे तो तेथी अखंडित अव्यय ब्रह्मनुं खंडन कर्यानो रहेने दोष लागेछ; माटे अखंडित ब्रह्मनुं– आत्मानुं एवी द्वैत बुद्धिथी खंडन करवानी वात छोडी दइ सदाए आत्म बुद्धि, आत्मवत्ता राखवी एवी दृष्टि राखवी के सर्वत्र एक ब्रह्म आत्मा छे ने सर्व आत्मरूप छे.

चिदानंद सोहं ब्रह्म जेह उत्तम ध्यान चिंतन तो एह।
ज्यारे ध्यान चिंतन ए गयूं त्यारे अछतुं जिवत उभुं
थयूं ॥ ६६ ॥

सच्चिदानंद स्वरूप आत्मा ब्रह्म छे त्हेनुंज चिंतवन अने ध्यान करवुं उत्तम छे, कारण के पुरुषने एथी स्वरूपनुं विस्मरण थतुं नथी. आत्मा ब्रह्म उपरथी दृष्टि खसी, एनुं यथार्थ ध्यान चिंतन बंध पड्युं अर्थात् अविद्या आवी लागी त्यारथी त्रिलोकमा क्यांय नथी एवो आ जीवभाव जगतमा उपजी आव्योछे.

स्वरूपनें विस्मरणे करी अहं ममत्वनि बुध्य ते धरी।
जिवत्व टालवा करे उपाय समाधि साधनशूं चित
जाय ॥ ६७ ॥

हुं कोण छुं, म्हारुं यथार्थ स्वरूप केवुं छे एनुं एकवार विस्मरण थयुं एटले पुरुषमा हू पद ने ममता आवी भरायछे. आम जीव एवी एक मिथ्या व्यक्ति उभी थायछे. ए संसारना अनेक दुःखनो अनुभव करी सुखी थवा मथेछे, ने आवी भरायली जीव भावना टाळी देवा माटे ते नाना प्रकारना उपाय करेछे, ने अभ्यास करता करतां र्‍हेनुं चित्त समाधि पामतां शीखेछे.

मनोवृति होय ब्रह्माकार करतां आत्मा तत्त्वविचार।
अतिशे ज्ञानतणो अभ्यास अहं ममत्व तणो ते नाश
॥ ६८ ॥

चित्तवृत्ति, मनोवृत्ति खरेखरी समाधि क्यारे पामे, ते ब्रह्माकार कहेतां स्थिर, शान्त क्यारे बनी जाय तो कहेछे के एने माटे जे आत्मा तत्त्व छे र्‍हेनी विचारणा–भावना निरंतर करतां रहेवुं जोइए छे. ज्ञान कहेतां आत्मज्ञानना सदोदित अभ्यासथी जीवनी अहं ममता छूटी जायछे; पोतानुं खरुं, शुद्ध स्वरूप ओळखातां धारण करेलो मिथ्या वेष ते उतारी देछे.

अहंममत्व रहित मन जेह ब्रह्माकार भणीजे तेह ।
ब्रह्म सम्यक ते जाणो राम अखंड समाधी तेहनुं नाम
॥ ६९ ॥

हुं अने म्हारुं एवी अज्ञानथी उपजेली बुद्धिनो त्याग थाय त्यारे मन ब्रह्माकार थयुं जाणवुं. हे राम ! अखंड समाधि एटले निर्विकल्प समाधि. जे आत्मयोगमां कोइ प्रकारनो विक्षेप न नडे, कोइ जातनो संकल्प न उठे ते निर्विकल्प कही. विकल्प न थाय एटले योग अखंड अविच्छिन्न रहे. ब्रह्म कहेतां आत्मा ने सम्यक् एटले यथार्थ, संपूर्णरीते ओळखी लेवो र्‍हेनुंज नाम आवी अखंड समाधि छे.

तत्त्वज्ञान अभ्यासे करी एकात्मबुद्धि ते आवे खरी ।
आत्मबुद्धिये आत्मा जोय सत्य समाधि भणीये सोय
॥ ७० ॥

वस्तुओनां विविध रूप जोवा छतां ए बधां एक आत्मारूप छे एवी दृढभावना तत्त्वज्ञान विना थती नथी, माटे हमेशां तत्त्वज्ञाननो अभ्यास राखवो, आत्मातत्त्वने चिन्त्या करवुं. जेवी बुद्धि तेवीज भावना

थाय छे. सर्व आत्मारूप छे एवी बुद्धि राखीए तो आत्मभावनानो उदय थाय, आत्माज अनुभवाय. एवी रीते आत्मयोग पामवो एज खरी समाधि छे.

सत्य समाधी पामे (जन) जेह निर्मानी नर भणिये तेह । ब्रह्मवीद छे तेहनुं नाम जेहनि नहीं मनोरथ काम ॥ ७१ ॥

खरो आत्मयोग पामेलो पुरुष निर्मानी होयछे, कारण के एक आत्मानुं अद्वैतपणुं यथार्थ जाणी लीधा पछी " हुं " एवी व्यक्ति के भावना रहेती नथी. हुं नथी त्या मान अपमाननी गणना पण कोण करे ? जे पुरुषना मनना मनोरथ ने काम कहेता विषय तृष्णानो लय थयोछे ते खरेखरो ब्रह्मवेत्ता छे एम जाणवु; अर्थात् निर्मानीत्व आव्यु न होय ने हुं ब्रह्मविद छुं, हुं ब्रह्म छुं एवुं कोइ कहे तो ते मिथ्यावाद ने पाखंड छे

कल्पांततणो वायू जे वाय ब्रह्मविदनें कंइ आवि न जाय । अकल्प जो एकार्णव होय ब्रह्मविद तोहि न पांमे मो (हो)य ॥ ७२ ॥

कल्पातनो वायु वाय, एटले विश्वमात्रनो प्रलय थइ जाय तो पण ब्रह्मवेत्ता पुरुषने एथी कंइ आवतुंए नथी ने जतुंए नथी, अर्थात् एने कंइ लाभ हानि नथी. जगत् बधु अकल्प, एकाएक सर्वत्र जलमय बनी रहे, त्होये ब्रह्मज्ञानीने तेथी मोह थतो नथी कारण के ए निश्चल बनेलेछे, ने ए बधा फेरफारोमा प्रभुनी विलक्षण मायानोज ते अनुभव पामे छे.

द्वादश अर्क तपे इक काल ब्रह्मने तोहि न लागे झाल।
पृथवि सकल जो पामे नाश (तोहे) ब्रह्मविदनें कंइ
दुःख न हास ॥ ७३ ॥

वळी एकी वखते बारे सूर्य तपवा माडे तोपण अन्य जीवोने असह्य लागता ए तापनी ब्रह्मज्ञानीने ज्वाळा लागती नथी. आखी सृष्टिनो नाश थाय ह्होय ते एथी कंइ दुःख के हास्यनो अनुभव करतो नथी.

सकल कृत्य रहित ते धीर सहज समाध्ये विचरे वीर।
मंन रहित जन जाणो तेह सघले ब्रह्मनि जांणे जेह
॥ ७४ ॥

खरुं जोतां वासना उडी गयाथी ए (ब्रह्मवेत्ता) धीर पुरुष बधांए कर्मथी छूटी गयेलोछे ने सर्वत्र ते आत्मयोगनो सहज अनुभव लेतो लेतो व्यवहार करेछे. मनःपूर्वक करेला व्यवहारनो दोष बेसेछे, पणबधुं विश्व एक ब्रह्मज छे एवो निश्चय पामेलो ब्रह्मवेत्ता मन रहित छे माटे ह्हेने ए दृश्य व्यवहारनो जरा पण दोष लागतो नथी.

जे घट केवल ब्रह्मज्ञान ब्रह्मस्वरुप तेहनुं अभिधान।
सर्व भूतनो साक्षी (ते) ब्रह्म (जेहनि) काल गूण
लेपे नहि कर्म ॥ ७५ ॥

जे पुरुषना हृदयमां केवळ एक ब्रह्मनीज भावना भरी मूकेलीछे ते ब्रह्मस्वरूप बनेलोछे, अने ब्रह्म तो भूतमात्रनो साक्षी थइ रहेछे. कोइ माणस कंइ खेल करतो होय ने आपणे मात्र दूर रही ते जोया

करीए अने ए खेलने जोइ कोइ जातनो मोह न पामीए तेम जीवनी कृतिओनो आत्मा, ब्रह्म मात्र साक्षी छे माटे तेहने जुदी जुदी अवस्थाओथी उपजी आवता सत्व, रज अने तम ए त्रिगुण अने तेहमनाथी थता कर्मोनो जरापण लेप नथी.

ब्रह्म अवस्था पेखे जेह पूर्णानंद घनामृत तेह । ब्रह्मविचार सदा जेहने ब्रह्मस्वरुप कहिये तेहनें ॥ ७६ ॥

अज्ञान छे त्या सुधी दुःख, शोक, भय, परिताप वधुंए छे, पण अज्ञाननो लय थइ ज्यारे ब्रह्मदशा प्राप्त थायछे, सर्वत्र ब्रह्मदृष्टि अनुभवायछे त्यारे परम आंनद प्राप्त थायछे. अज्ञानी जन मृत्युनी कल्पनाथी महा भय पामेछे ते ब्रह्मवेत्ता पामतो नथी; कारण के ते अमृत बन्योछे. देहनो नाश थये आत्मानो कदीपण नाश थतो नथी एम ए जाणेछे, ने पोताने सदैव अमर समजेछे. हवे ब्रह्मदशा प्राप्त थइ, ब्रह्मस्वरूप बनायुं. ते शा उपरथी जणाय तो कहे छे के ब्रह्म विचारथी जे पुरुष नित्य ब्रह्मनोज विचार कर्या करे, ब्रह्मनीज सर्वमयता अनुभवे, ने बीजा कोइ विचारनो, मायिक मोहनो स्पर्श सरखो थवा न दे ते ब्रह्मरूप बन्यो कहेवाय.

(जे) दृष्टिपदारथ दीसे राम ते मनकल्पित सत्र रुप नाम । विश्व चराचर कहिये जेह मने करी द्वित भासे तेह ॥ ७७ ॥

हे राम ! एक ब्रह्मज सर्वत्र, सर्वमा छे एवो दृढ निश्चय करवो, ने संसारमा नजरे पडती आवता अनेक पदार्थोना रूप जोइ जोइने

चलित थवुं नहि, मोह पामवो नहि. एक क्षणवार पण एवी बुद्धि थवा न देवी के आ पदार्थो सत्य छे; कारण के एमना रूप ने नाम मात्र कल्पेलाछे, अर्थात् मिथ्या छे, अने अनेक रूपधारी एक वस्तु ते केवल ब्रह्म छे, एम असत्य पदार्थोने जोइने पण ब्रह्मदृष्टि पामवी. स्थावर ने जंगम विविध पदार्थोथी भरेलुं आ जे विश्व ते मनोधर्मथीज द्वैत एटले ब्रह्मथी भिन्न भासेछे.

(ज्यारे) मनोवृत्ति होय ब्रह्माकार ब्रह्मस्वरुप भासे संसार । निश्चें राघव कहुं छुं सोय जेहवुं मन तेहवुं जग होय ॥ ७८ ॥

पण एज मननी वृत्तिओ जो स्थिर शान्त एटले ब्रह्माकार बनी जाय, असत्य पदार्थोनुं चिंतवनज मूकी दे, विषयमां रहेली वासनानेज तजी दे तो ए ब्रह्मथी भिन्न भासतुं विश्व ब्रह्मस्वरूपज भासे ए नि॰ संदेह छे. हे राम ! आ एक सत्य सिद्धांत छे के विश्व एवु वस्तुतः कइ नथी, एक ब्रह्मनोज प्रकाश छे, मृग तृष्णिका जेवुं देखवामात्र छे, तोपण पुरुषनु जेवुं मन तेवुं त्हेनु स्वरूप देखायछे. जड मन संसारने जडज जाणी मनेछे, ने ब्रह्माकार बनेलुं मन त्हेने ब्रह्ममयज जाणेछे, माटे मन एज खरी खोटी दृष्टिनुं कारण छे.

मन अद्वैते जग अद्वैत मन द्वैते भासे सब द्वैत । मन भिन्ने सउ भिनभिन जोय एक मने भिन भासि न कोय ॥ ७९ ॥

मन जो अद्वैत कहेता ब्रह्मस्वरूप बन्युं तो जगत् पण अद्वैत

एटले ब्रह्मस्वरूप भासेछे, पण रहेमांज जो द्वैतभावना भरी मूकी होय; ए सर्वत्र भेददृष्टिज पामतुं होय तो वस्तुमात्र भिन्न भिन्न जणाय. ए मन जो एक थाय एटले एनी जडताने त्याग करी ब्रह्मरूप बने तो कोइ पण वस्तु ब्रह्मथी, आत्माथी जुदी न देखाय.

कारण सघलूं ए मनतणूं कहीं थोडुं काहिं दीसे घणूं। ज्ञानी मननूं कृत परहरे साधू सम तत्त्वनि अनुसरे ॥८०॥

आम द्वैत, अद्वैत भावना उपजावनार मन छे. मन एज बधानुं कारण छे. एना धर्म कोइ ठेकाणे ढांक्या रहेता नथी, एनी प्रवृत्तिओ कोइ ठेकाणे थोडी तो कोइ ठेकाणे घणी एम संसारमां सर्वत्र जोवामां आवेछे. मात्र संसारथी विमुक्त एवा ज्ञानी पुरुषो छे तेज मनथी थतां कर्मोनो त्याग करेछे, एटले निष्काम बुद्धिए वर्त्तेछे. हे राम! एम साधुजनो एक तत्त्वने कहेतां आत्मानेज अनुसरेछे. आत्माने अनुसरेछे एटले केवल अनेक कर्मप्रवृत्तिओना, लोकव्यवहारना तेओ द्रष्टा बनी रहेछे, रहेना साक्षीनी पेठे वर्त्ते छे एटले जराए लेपाता नथी.

शीव शांत जे अचल अरूप ते मध्ये आ सघलां रूप। विश्व चराचर आत्मविलास सघले केवल ब्रह्मप्रकाश ॥ ८१ ॥

हे राम! रूप जोइने जराए मोह पामवो नहि, कारण के ए बधां शान्त, अचल ने अरूप–निराकार एवा एक ब्रह्ममांज रही वर्त्ते छे, एमाथीज उपज्यांछे ने ज्यारे त्यारे ए एक आदिकारणमांज समाशे. चराचर विश्व ए मात्र आत्मविलास छे, ब्रह्मनी लीलामात्र छे, ने सर्वत्र एक ब्रह्मप्रकाश विना बीजुं कंइ नथी एवी अद्वैतबुद्धि राखवी.

भिन्नभाव ते छांडे जंन आत्मा विना नही को अन्य । व्यापक एकज आत्माराम निर्मल निश्चल पूरणधाम ॥ ८२ ॥

आत्मा विना बीजुं कंइ सत्य नथी एटले आत्मा अनन्य छे, एकज आत्मा सर्वत्र व्यापी रह्योछे ने ते निर्मल, निश्चल, ने पूर्णस्वरूप छे, अखंडित छे एवो जे पुरुषनो निश्चय थायछे ते भेदभाव छाडेछे, एटले तजेछे.

आत्मज्ञान हृदे जेहनें देहाशक्ति नहीं तेहनें । तेहतणूं द्रष्टांतज कहूं भणे वसिष्ट जेहवुं हुं लहूं ॥ ८३ ॥

कारण के आत्मज्ञान पाम्या पछी देहासक्ति रहेती नथी, मिथ्या जड पदार्थोनो स्वरूपमोह लागतो नथी, हुं, म्हारुं एवी भावना मटी जायछे. हे राम ! यथामति ए वातनुं हु एक द्रष्टान्त आपुंछुं ते सांभळो.

(जेम) सर्प आग्रहे कंचुकि त्यजे पुनः अही तेहनिं नव भजे । उरग कंचुकी सामुं न जोय तेथी दूर पलाये सोय ॥ ८४ ॥

शरीर उपरनी कांचळी उतारवानो एकवार द्रढ निश्चय करी सर्प तेहनो त्याग करेछे. त्हेणे कांचळी एकवार उतारी ते उतारी फरी ते एने धारण करतो नथी, एटलुज नहि पण ते एना सामु सरखुं जोतो नथी, पण त्हेने छोडी दूर नाश्यो जायछे. आम असंग मनवुं जोइए छे.

(एम) ज्ञानी देहबुधनो करि त्याग को काले नां पामे राग । आत्मज्ञानी कहिये सोय (जे) देहादिक वीषें नव मोय ॥ ८५ ॥

ज्ञानी पुरुषो एवा असंग छे. तेओ देहबुद्धिनो एकवार त्याग कर्या पछी एमां कदापि आसक्ति पामता नथी. देहादिक एटले देह, मन, इन्द्रिय आदिथी जे पुरुषो मोह पामता नथी तेज खरा आत्म ज्ञानी छे.

वली ज्ञानिनुं लक्षण जेह सांभल राघव कहुं तुज तेह । ज्ञानी ते गुणदोष न जोय ब्रह्मस्वभाव सदा ग्राहि सोय ॥ ८६ ॥

वळी ज्ञानीनुं बीजुं पण एक लक्षण छे ते हे राम ! सांभळो. पदार्थोना, कर्मोना, मनुष्योना गुणदोषनी गणना ज्ञानी पुरुषो करता नथी. कारण के ए पण एक ब्रह्मस्वभाव एटले लीला मात्र छे एम तेओ जाणीने संसारनो निर्वाह करेछे.

निषेध आचरण होये जेह ज्ञानी सघलेथी त्याजि तेह। दोषबुध्य ज्ञानी परहरे ज्ञानी सर्वने हित आचरे ॥८७॥

अमे ब्रह्मज्ञानी छीए एटले अमने कंइ मळगतुं नथी एम कही नाना प्रकारनां निंद्यकर्म करनारा जगतमां बहु छे. पण तेओ कंइ ज्ञानी नथीः ब्रह्मज्ञान प्राप्त थया पछी आचार मात्र विशुद्ध थइ रहे छे. जे जे कर्म शास्त्र निषिद्ध छे तेहेमनो ज्ञानी परित्याग करेछे. राग॰

द्वेष विनाना पुरुषोने हाथे नित्यकर्म क्यारेपण थतां नथी. वळी ज्ञानी पुरुषो दोषबुद्धिनो पण त्याग करेछे. एमने कोइनो जरापण अवगुण आवतो नथी. ते प्राकृत जीवोनी पेठे वैरबुद्धि राखी कोइनुं अहित पण करता नथी; प्राणीमात्रनुं तेओ कल्याण थाय एवां कर्म करेछे,

ज्ञानी कर्म विहित करि सर्व (पण) धर्मकर्मनो करे न गर्व । ज्ञानी फल वांछे नहि कोय अर्भक पेरें वर्त्ते सोय ॥ ८८ ॥

एम ज्ञानी जनो सदाए शास्त्र विहित कर्मोज करेछे अने धर्म कर्मनुं अभिमान धरता नथी. देहना, इन्द्रिओना धर्म स्वाभाविक छे ते कंइ म्हारा नथी, ने तेथी त्हेमनाथी थतां कर्म पण हुं करतो नथी एम समजीने ज्ञानी वर्त्ते छे. वळी थतां कर्मोनी फलेच्छा पण ते राखतो नथी, पण एक बालक जेम कर्मफलनो विचार कर्याविना सहज स्वभावे वर्ते तेम ते व्यवहरेछे.

मान अपमान गणे ते नही बालदशा ज्ञानीये ग्रही । जे घट राघव ब्रह्मज्ञान ज्ञानि सदाय ते सावधान ॥८९॥

ज्ञानी पुरुष वळी मान अपमान, हर्ष शोक आदिने गणता नथी. तेओए फरी बाल्यदशा धरी होय एम तेओ वर्त्ते छे. बालकने कोइ उंचा मनथी बोलावे के कोइ त्हेने बहु ममता बतावे तोपण तेथी त्हेने हर्ष शोक थतो नथी. ज्ञानीओनुं पण एमज छे. ब्रह्मज्ञानी पुरुषो नित्ये सावधान होयछे, तेओ जरापण अविद्याने, मायाने पासे आववा

देता नथी; कारण के बधा अनर्थनुं तेज कारण छे एवो तेओने दृढ निश्चय थयेलो होयछे.

ज्ञानीनुं वर्त्तन कह्युं सार हवे कहूं अनुभव निरधार। स्तंभविषे पुतली कुणि करी पुतली ते निश्चे स्तंभ खरी ॥ ९० ॥

उपर प्रमाणे ज्ञानीजनोनुं वर्त्तन होयछे, हवे ह्हेमना अनुमवनी वात कहुंछुं ते सांमळोः ज्ञानीनो अनुभव नित्ये अद्वैत भावनानो होयछे; एक स्थंमनुं दृष्टान्त लइए. एक स्थंभमां अनेक पूतळीओ होयछे पण तेओ बधी एक स्थंमरूपज छे, स्थंभथी भिन्न नथी.

स्तंभविना पुतली नव होय स्तंभरूप ते जांणो सोय। नाम मात्र पुतली ते जांण्य सत्य एक तां स्तंभ प्रमाण्य ॥ ९१ ॥

कारण के स्थंम विना पुतळी होइज शके नहि; माटे तेओ स्थंम रूप छे एम अनुमव करवो. खरुं जोतां पुतळी एतो एक नाम मात्र छे, कहेवानीज छे ने खरो तो एक स्थंभज छे.

विश्व समग्रे ब्रह्मथि जाण्य ब्रह्मविषे वर्त्ते निर्वाण्य। विश्वब्रह्मविनं प्रगट न होय विश्वविना ब्रह्म कहे न कोय ॥ ९२ ॥

एम आखुं विश्व ते ब्रह्म छे ने ते ब्रह्म विषे रही वर्त्तेछे. ब्रह्मविना जगत्‌नी उत्पत्ति थाय नहि ने विश्व न होय तो ब्रह्म कोइना

अनुभव्यामां न आवे. माटे ब्रह्मथी विश्वनो अने विश्वथी ब्रह्मनो निश्चय करी एकरूपता पामवी जोइए छे.

विश्वब्रह्म ते एकज जांण्य साचो निश्चे ए हृदि आण्य। विश्वनाम मात्रे ते तात सत्य एक ता ब्रह्म साक्षात् ॥ १३ ॥

स्पष्ट छे.

स्थिरजल विपि लहरी बहु होय आस्ति नास्ति ते जाणो सोय । समुद्रविण लहरी नव्य थाय लहरी वीण समुद्र न होय ॥ १४ ॥

स्थिर गंभीर जलमा, समुद्रमा अनेक लहरीओ आवेछे. तेओ उपजेछे ने शमी जायछे. समुद्रज न होय तो लहरी कदापि उपजे नहि अने लहरी आवती न होय एवो समुद्र पण न होय. कारण के समुद्रनो ते एक स्वभाव छे.

विश्व ब्रह्मविपे इम जाण्य विश्व सत्य असत्य प्रमाण्य । अज्ञाने विश्वनि तेआरत ब्रह्मज्ञाने विश्वनि नास्त ॥१५॥

एवी रीते ब्रह्मपा जगत् रहेलुं छे ने जगत् ते सदसत् छे. शुद्ध स्वरूपे ब्रह्म होइ ते सत्य छे ने ब्रह्मनी लीलारूपे ते असत्य छे. अज्ञान दृष्टिएं विश्व छे एम प्रतीति थायछे, पण ब्रह्मज्ञानथी तेहेनो भास थतो नथी.

ब्रह्मज्ञाने सर्व ब्रह्म को काले भासे नहि भ्रम । जेह यथारथ जांणे तात कहो ते केम करे अन्य वात ॥९६॥

कारणके ब्रह्मज्ञानीने विश्वमात्र ब्रह्मरूप भासेछे ने त्हेनी निश्चळ बुद्धिमां क्यारे भ्रान्ति थती नथी; कारक के हे भाइ! जे पुरुष वस्तुस्थिति यथार्थ जाणेछे ते अन्य वात कहेतां विपरीत वार्ता शामाटे करे? एटले असत्य विश्वने सत्य शी रीते कहे?

एक अनेक अनेकज (वळी) एक ज्ञानीजनने आत्म विवेक । जगत सहीत रहित ते राम ज्ञानी (ते) पेखे पूरणधाम ॥ ९७ ॥

एक ब्रह्ममांथी अनेक पदार्थो उपजेळछे ने ए अनेक पदार्थो वळी पाछा ब्रह्मस्वरूप होइ एकज छे, एवी रीते ज्ञानी पुरुष आत्मविवेक करेछे. आम जगतनी कल्पनावाळो ने एनी कल्पनाथी रहित एवो जे ज्ञानी ते हे राम! सर्वत्र पूर्ण स्वरूप परब्रह्मनेज निहाळेछे.

ज्ञानी कहिं आसक्त न होय आत्मलाभथी पूरण सोय। स्तुति निंदा पखपात न करे ब्रह्मभाव नीरंतर धरे ॥ ९८ ॥

ज्ञानी जन कोइ पण पदार्थमां आसक्ति धरता नथी, कारण के त्हेना स्वरूपनो त्हेने मोह लागतो नथी, पण आत्मस्वरूप ओळखायुं ए लाभथी ते पूर्ण थइने एटले परितृप्त थइने रहेछे. वळी कोइनी स्तुति के निंदा के कोइनो पक्ष अथवा विपक्ष कर

कोइनो ते मित्रे नथी ने शत्रुए नथी पण केवल एक ब्रह्मनीज ते निरंतर भावना कर्या करेछे.

द्वैतभाव नोहे जेहने ब्रह्मवेता कहिये तेहने । ते ज्ञानीने लागू पाय जेहनि विरुध नही रघुराय ॥ ९९ ॥

जे पुरुषने भेदबुद्धि नथी, ते खरेखरो ब्रह्मविद् छे. एकात्मता अनुभवायाविना ब्रह्मविद्या प्राप्त थइ कहेवाय नाहि. हे राम ! ब्रह्मविद्ने जगत्मा कोइ, कशुंए विरुद्ध–प्रतिकूळ लागतुं नथी. एने सर्वत्र अनुकूलता होयछे. एवा जनने हुं प्रणाम करुंछुं अर्थात् तेओ शीरसावंद्य छे, पूजा करवाने योग्य छे.

मन वच कर्म छि जेहनुं शुद्ध ते ज्ञानी कहिए अविरुद्ध। सघले एकज आत्मा जोय समदर्शी नर भणिए सोय ॥ १०० ॥

मनसा, वाचा अने कर्मणा ए त्रणे प्रकारे जे पुरुष शुद्ध छे तेहने कोइ वातनी प्रतिकूळता होती नथी. ए सर्वत्र एकज आत्मा जूए छे, आत्माथी भिन्न एवुं कंइ तेहने भासतुं नथी. माटे ते समदर्शी कहेवायछे. उंच, नीच, प्रिय, अप्रिय एवी भेदबुद्धिनो त्याग थाय त्यारेज समदृष्टि थइ कहेवाय.

समदर्शीनी संगत करो ज्ञानखल रावत्र परहरो। ज्ञानखलनुं लक्षण छे एह संसारविषें आसक्तज जेह ॥ १०१ ॥

हे राम! खरा समदर्शी पुरुषोनोज संग करवो. एथी सर्वत्र ब्रह्मदर्शन थशे. जे ज्ञानखल एटले मिथ्यावादी, मात्र ब्रह्मज्ञाननुं उपर उपरथी डोळ राखनार छे एवा खलपुरुषोनो सर्वथा त्याग करवो, एमने छांयडे पण उभा रहेवुं नहि, कारण के एमना मलीन स्पर्शथी धर्म अने कर्म उभयथी भ्रष्ट थवायछे. ज्ञानखळ पुरुषोनुं लक्षण एवुं छे के तेओ उपर उपरथी ब्रह्मज्ञाननी वातो करे ने बीजाने पोताना पांडित्यथी मोह पमाडे पण ते पोते तो संसारना विषयोमां अतिशय आसक्त थइने रहे, एमनी विषय तृष्णा जराए मटे नहि.

ज्ञानतणूं अभिमानज धरे शुष्कवाद कर्म खंडन करे।
कर्मब्रह्मथी भ्रष्टज जेह अंत्यज पेरे तजिये तेह ॥ १०२ ॥

वळी अमे ब्रह्मज्ञानी छीए, शास्त्री, पंडित छीए एवुं तेओ अभिमान राखेछे ने शुष्कवादथी तेओ ज्यां त्यां कर्मनुं खंडन कर्या करेछे. ए रीते तेओ कर्मब्रह्मथी, कर्मयोगथी भ्रष्ट थएला होयछे माटे त्हेमने अंत्यज जेवा जाणी सदाए दूर राखवा, एमनो कदापि स्पर्श न करवो.

ब्रह्मभाव अंतरगति धरे कर्त्ताने पाछोकरि करे। जिवन-
मुक्त जोगेश्वर तेह कर्म करे जन एमज जेह ॥ १०३ ॥

हे राम! कर्मनो महिमा जेवो तेवो नथी. कर्मनुं जे पुरुषो रहस्य जाणेछे ते जीवनमुक्त थइ जायछे. कर्मयोगीओ मनमां निरंतर ब्रह्मभाव राखेछे ने अमुक कर्मनो हुं कर्त्ता एम कहेता नथी पण कर्त्ताने पाछो करी एटले हुं कर्त्ता एवुं निमित्त न ले तो, पोते साक्षीवत् रहीने तेओ कर्म करेछे, वर्ते छे.

अर्थवेद वेदान्ते जेह उपनीपदनूं तत्त्वज तेह । आदि-
काव्यमां कह्युं जे सर्व अनुभवतां टलशे सघ ग-
र्व ॥ १०४ ॥

हे राम ! आ जे म्हें उपदेश कर्यो ते वेद वेदान्तोमां छेज; उ-
पनिषदोमां पण एज सार वस्तु छे ने वाल्मिकीए आदिकाव्यमां पण
आज वधुं रहस्य बतावेलुंछे. ए ज्ञान एवुं छे के एनो अनुभव पाम-
वाथी अभिमान मात्र एक क्षणमां छूटी जायछे ने ब्रह्मभावने पमायछे.

आदिपुरूष ब्रह्मानें कह्यूं अजमुखथी में तत्त्वज लह्यूं ।
प्राकृत जीवदशा तम धरी परीक्षा म्हारा· ज्ञाननि क-
री ॥ १०५ ॥

ओज ज्ञान आदिपुरुषे ब्रह्माने बतावेलुं ने ब्रह्माने श्रीमुखे म्हें
सांभळी लीधेलुं ने ते म्हें त्हमारा आगळ आज कह्युं. हे प्रभु !
त्हमे तो सर्वज्ञ छो, कर्मथी, मायाथी पर छो एटले त्हमने उपदेश
शो ? पण अज्ञानी जननी पेठे लीला करी म्हारा ज्ञाननी परीक्षा करवानेज
त्हमे आ कथाप्रसंग उभो कर्यो, प्राकृतजीवनी पेठे प्रश्न परिप्रश्न कर्या.

वळी जगतनां हितनें काज (तम्यो) दशरथ ग्रह प्रग-
टया महाराज । तम अवतार (वहु) लिलाये धरो सा-
धूधर्मनि रक्षा करो ॥ १०६ ॥

हे दयाळु ! विश्वमात्रना कल्याणने अर्थे त्हमे आ दशरथ राजा-
ने त्यां अवतार लइ प्रगट थयाछो, त्हमे लीलार्थीज अवतार धरोछो
ने ए रीते साधुपुरुषो अने धर्मनी रक्षा करोछो. श्रीमद्भगवद्गीतामां
पण कह्युंछे के:—

"यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारते
परित्राणाय साधूनाम संभवामि युगे युगे."

दुष्ट अधर्मनुं फेडो ठांम पावन यशकीर्ती तव नाम।
परम पुरुष परमात्मा जेह तेह तम्यो तां नहि संदेह
॥ १०७ ॥

हे भगवन्! त्हमे ए रीते अवतार लइ दुष्ट पुरुषोने अधर्मनो पाखंडधर्मनो नाश करोछो. त्हमारुं गुणगान, त्हमारुं स्तवन ने स्मरण मनुष्योने अत्यंत पूण्यप्रद छे, पावन करनारुं छे. त्हमेज परम-पुरुष ने परमात्मा छो. एमा म्हने जरापण संदेह नथी.

भले प्रभू अवतारज धर्यो अमने मोटो अ ग्रह कर्यो।
भव अज मुनि धरि जेहनुं ध्यान संभलाव्युं मुजने अद्य ज्ञान ॥ १०८ ॥

हे प्रभु! त्हमे जे आ अवतार धर्यो ते घणुं उत्तम थयु. अमारा ऋषिमुनिओना उपर घणी कृपा थइ. हवे अमे निर्भयपणे यज्ञयज्ञादि आचरीशुं ने ए रीते धर्म साचीशुं. हे भवअज एटले संसारजन्मथी रहित, अजन्म प्रभु! ऋषिमुनिओ पण त्हमारुंज ध्यान धरेछे. म्हने आज आ निमित्ते परम रहस्यनुं पुनरावर्तन थयुं. एथी हुं कृतार्थ थयो.

अहींथी हवे नीचेना श्लोकोनो अर्थ स्पष्ट छे.

देवरुपीनां करवा काम मानुषवेषे आत्माराम। भक्त तणा अनुग्रहने काज रामरूप प्रगट्या महाराज
॥ १०९ ॥

प्रश्नोत्तरने मीशे करी केवल ब्रह्मविद्या उचरी। भणे व-
सिष्ट कईपर कहुं एना फलनो पार न लहुं ॥११०॥
ए विद्याने अनुभवि जेह सच जीव मुकाये तेह। अनेक
साधन बोल्या जेह ज्ञान पामवा जांणो तेह ॥ १११ ॥
वासुदेव परब्रह्म अविनाश अंतरयामी सर्वावास। तेणे
जे उपजाव्यूं सार नरहरि तेह कह्यूं निरधार ॥ ११२ ॥
गुरू ब्रह्म चैतन्य प्रसाद गायो नरहरिए संवाद। एक-
मनां सूणे जे कोय रहेने पुनर्गमन ना होय ॥ ११३ ॥
ब्रह्माजीनी वीसी विषे प्रभव संवत्सर पंडित लखे। संव-
त्त सोलसो चौओतरो माघ मास पद बंध इ करो॥ ११४॥
शुक्ल पक्ष दशमी बुधवार पूरण ग्रंथ हवो निरधार।
निमित मात्र ते नरहरिदास कर्ता पुरुषोत्तम अविना-
श ॥ ११५ ॥

साते ऊणां पद सातसें एक मनां जे को अभ्यसे। तेह प-
रमपद पामे सही सत्य सत्य वाणी ए कही ॥ ११६ ॥
वसिष्टसार गिता ए सुणो वसिष्टसार गिता ए भणो।
वलिवलि कीजे ए अभ्यास करजोडी कहे नरहरिदा-
स ॥ ११७ ॥

इति श्रीवसिष्टसारगीतायां ब्रह्मनिरूपणं नाम दशम
प्रकरणं संपूर्णम् ॥१०॥